ऋग्वेद सर्वाधिकार सुरक्षित यजुर्वेद

भा॰पु॰

ओ३म्

...वः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य
...हि धियो यो नः प्रचोदयात ॥

...मृत प्रसाद

...स्तक शुभ स्थान सोलन (हिमाचल प्रदेश)
...थ ३० जुलाई ५४ तदनुसार १६ अषाढ़
...दिन बुधवार संवत् २०११, (अमावस्य)
प्रातः समय लिखनी प्रारम्भ की।

लेखक
श्री पूज्यपाद स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज

प्रकाशक
लाः शान्ति सरूप वर्मन 6A, Lansdowne Lane
Calcutta, 26, ने अपने पिता श्री डा० चमन लाल के समर्णार्थ
छपवा कर भेंट की

दूसरी बार १००० कातिक संवत २०१७

सामवेद अथर्ववेद

सूची पत्र

ओ३म्

भूमिका

पाठक गण-परम पिता परमात्मा की अपार कृपा से "अमृत प्रसाद" पुस्तक का प्रथम संस्करण प्रेमी भक्तों ने श्रद्धा से स्वीकार किया। शेष थोड़ी प्रतियां पड़ी थीं तो मुझे प्रेमी के निमन्त्रण पर कलकत्ता जाना पड़ा। श्री ला० शान्ति स्वरूप जी वमर्न ६-A लेन्स डाउन लैन कलकत्ता २६ के स्थान पर ठैरा। श्री शान्ति स्वरूप जी ने बड़ी श्रद्धा भावना से सेवा की। मैंने अपनी छपी पुस्तकों का एक सैट उन्हें दिया और फिर कलकत्ता से बम्बई चला आया कुछ दिनों के पश्चात मुझे उनका प्रेम पत्र मिला जो निम्न लिखित है—

ॐ

हम सब लोग गायत्री का जाप करते हैं।

श्री पूज्यपाद स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज, नमस्कार।

हम सब कुशल से हैं आपकी कुशलता श्री भगवान जी से नेक चाहता हूं निवेदन यह है कि आपका पत्र मिला समाचार मालूम हुआ। आपकी पुस्तकें पढ़ीं दिल बड़ा प्रसन्न हुआ आपने जो उपदेश लिखे हैं बहुत ही अच्छे और गुणकारक हैं स्वामी जी! जिस दिन आप हमारे घर में आये उस दिन से मैंने बहुत अच्छी आदतें ग्रहण की हैं।

१. पहले मैं हर रोज प्रातः १० बजे जागता था और अब मैं प्रातः ६ बजे उठता हूं।

२. पहले मैं हर रोज़ मांस खाता था अब मैंने मांस खाना छोड़ दिया है।
३. पहले मैं कभी २ दोस्तों के साथ सिग्रेट भी पी लेता था अब वह भी छोड़ दी हैं।
४. पहले में पान में जरदा, कमान, तम्बाकु डाल कर खाता था अब केवल सुपारी पान में डालकर खाता हूं। आप जिस दिन से हमारे घर से गये हैं उस दिन से मैंने किसी बुरी चीज़ को नहीं छोआ। आशा है आपके चरणों के प्रताप से इन बुरी आदतों को भूल जाऊंगा और सुखी जीवन बनाऊंगा। मेरे योग्य कोई सेवा हो तो लिखें बच्चे आपको वहुत याद करते हैं। हम सब आपके चरण छूकर नमस्कार करते हैं स्वीकार करें।

आपका दर्शन अभिलाषी
शान्ति स्वरूप वमर्न

दूसरा संस्करण

मुझे इस वर्ष प्रभु कृपा तथा प्रेरणा से हरिद्वार चार मास का मौनव्रत करना पड़ा। व्रत पूर्ण होने पर सवित्रीं गायत्री माता द्वारा एक लाख आहुति का बृहद यज्ञ हुआ। बम्बई-कलकत्ता यू-पी पंजाब, देहली से काफी परिवार इस शुभ अवसर पर पधारे श्री ला शान्ति स्वरूप जी भी परिवार सहित पधारे यज्ञ में वड़ी श्रद्धा भावना से सेवा की। अन्त में सहर्ष अपने पिता श्री डाकटर चमनलाल जी वमर्न की स्मरणार्थं "अमृत प्रसाद" पुस्तक के दूसरे संस्करण के छपवा देने का संक्लन किया अतः यह पुस्तक उन्होंने छपवा कर भेंट की है।

सज्जनों! ऐसे शुभ और निष्काम कर्म वर्तमान काल में प्राय:

धन के धनी नहीं किया करते किन्तु हृदय के धनी ही किया करते हैं जिनके पास भगवान की पूंजी होती है वह ही उसी की भेंट करते हैं ला० शान्तिस्वरूप जी ने जिस श्रद्धा तथा सातविक भावना से यह पुस्तक छपवा कर भेंट की है मैं प्रभुदेव से प्रार्थना करता हूं कि वह सदा इनकी परिवार सहित धर्म कार्यों में प्रवृति वनाए रखें। और धन धान्य से माला माल करे।

"सब दानों से है बड़ा ज्ञान ही का दाना
जिस प्रताप से मिलत है मनुष्य दह समान ॥

इस पुस्तक से पहली रचित पुस्तकें भी स्वाध्याय शील सज्जनों को प्राप्त हो सकती है ।

	नाम पुस्तक	संख्या		नामपुस्तक	संख्या
	ब्रह्म यज्ञ प्रसाद	३०००		ब्रह्म सुमन प्रसाद	१०००
२	देव यज्ञ प्रसाद	७०००	१२	ब्रह्म सोम प्रसाद	१०००
३	पितृ यज्ञ प्रसाद	४०००	१३	ब्रह्म पथ प्रसाद	१०००
४	अतिथि यज्ञ प्रसाद	२०००	१४	ब्रह्म प्रकाश प्रसाद	१०००
५	प्रेम सुमन सप्राद	२०००	१५	यज्ञ प्रसाद	४०००
६	नारी कर्तव्य प्रसाद	१०००	१६	ब्रह्म सरोवर प्रसाद	१०००
७	नारीधर्म कर्तव्य प्रसाद	१०००	१७	मौन यज्ञ प्रसाद	२०००
८	ब्रह्म प्रसाद	२०००	१८	परिवारिक सत्संग प्रसाद	
९	भगवत यज्ञ प्रसाद	१०००			३१०००
१०	अमृत प्रसाद	१०००			कुल ६६०००

समर्पण

त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये ।।

इस बर्ष सोलन में एक सौ एक दिवस मौन के पुण्य दिनों में उसी प्रभु सच्चिदानन्द स्वरूप की कृपा से पुस्तक 'अमृत प्रसाद' मुझे लिखने की प्रेरणा हुई। उसी प्रेरणा के कारण प्रस्तुत पुस्तक अमृत प्रसाद' त्यार हो सकी। भगवान की प्रेरणामयी रचना भी उसी जगदीश्वर के पवित्र चरणों में समर्पित है।

प्रायः पुस्तक लेते समय पुस्तक पर पुस्तक का मूल्य अंकित नदेख कर मुझ से प्रेमी प्रश्न किया करते हैं। ऐसे प्रेमियों की सेवा में निवेदन है कि अग्नि में जो वस्तु (हवि) डाली जाती है वह विश्व में प्रसारित हो जाती है। सन्यासी भी अग्नि रूप होता है अतः मैं जब भी पुस्तक लिखकर प्रकाशित करने की आकांक्षा करता हूं प्रायः प्रभु प्रेरणा से जिन प्रेमी सज्जनों के पास भगवत पूंजी होती है वह सात्विक भावना से अपनी पवित्र कमाई का भाग भेज देते हैं पुस्तक छपवा कर प्रेमी सज्जनों की सेवा में भेंट करदी जाती है अतः जो भी प्रेमी इस कार्य अर्थ निष्काम भाव से अपनी पवित्र कमाई का भाग भेजना चाहें वह निम्न पते पर भेज कर प्रभु काआशीर्वाद प्राप्त कर सकते हैं।

और जिन प्रेमियों के पास यह पुस्तक पहुंचे वह कमसे कम १० अन्य प्रेमियों को पढ़ावें और प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त करें।

भवदीय—

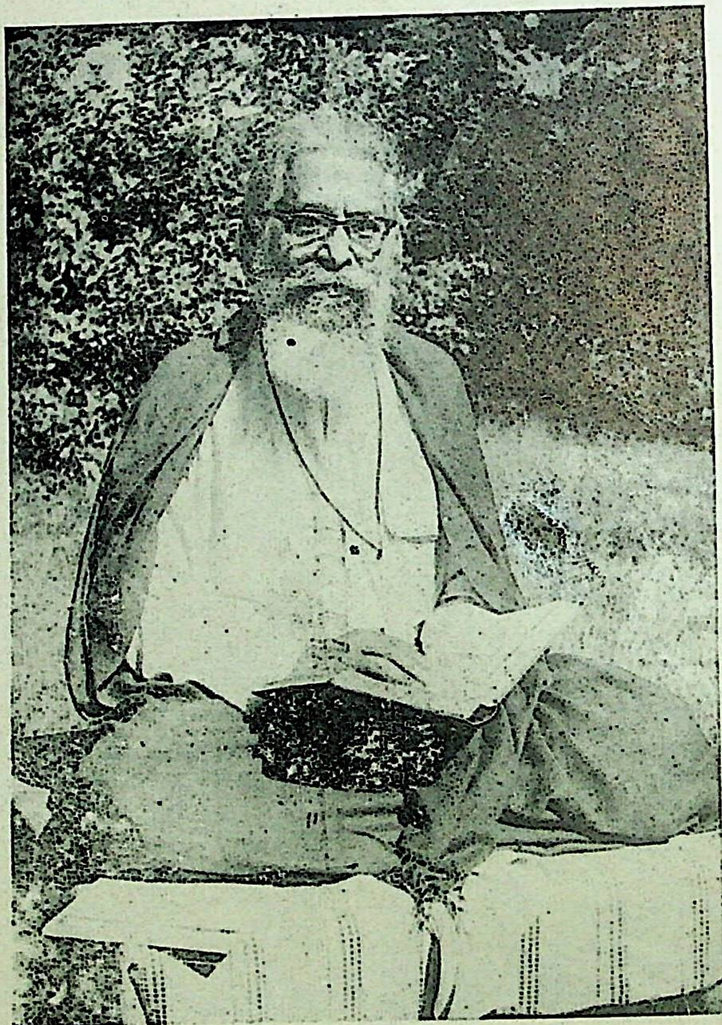
ब्रह्मानन्द स्वामी

C/O भारत ग्लास कम्पनी, सदर बाजार देहली।

टेली फोन नं० २६६८०


तिथी
पु०सं० 2336
भारती पुस्तकालय

ओ३म् भूः भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य
धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॥



श्री पूज्यपाद स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज

ओ३म्

अमृत प्रसाद

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रन्तन्न आसुव

यजु० अ० ३० मं० ३ ॥

भावार्थ—हे उत्तम गुण कर्म स्वभाव-युक्त उत्तम गुण कर्म स्वभाव में प्रेरणा देने वाले परमेश्वर आप हमारे सम्पूर्ण दुष्टाचरण व दुःखों को दूर कीजिए और जो कल्याणकारी धर्म-युक्त आचरण सुख हैं, उनको हमारे लिए भली प्रकार—उत्पन्न कीजिए।

ओ३म भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात्

कविता

भावार्थः—हे सर्वरक्षक ओम् तुमको, बार बार प्रणाम है।
प्राण प्रिय 'भूः' दुःख विनाशक भुवः तुम्हारा नाम है॥
सत्चित 'स्वः' आनन्द कन्द मंगल मूल तुम सुख रूप हो।
हम हैं प्रजा सब आपकी, तुम ही हमारे भूप हो॥
माता-पिता 'सविता' विधाता, देव दिव्य प्रकाश हो।
हम ग्रहण करते हैं 'वरेण्यं' भक्त जन की आश हो॥
शुभ गुण सदन विज्ञान सागर 'भर्ग' प्रिय भुवनेश हो।
हम हैं उपासक आपके तुम ज्ञान गम्य गणेश हो॥
मानस भवन में आपका हम ध्यान नित धरते रहें।
प्रेरित करो बुद्धि हमारी दुरित सब हरते रहें॥
हो भव्य भावों से भरा भगवान यह घर आपका।
निशि दिन सुमंगल गान हो दर्शन होवे पाप का

प्रार्थना

ओ३म इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय ।
त्वामवस्युराचके ॥ यजु० अ० २१ मं० १ ॥

भावार्थ—हें वरुण ! मेरी इस पुकार को सुन लो, आज तो मुझे सुखी कर दो —मैं तुम्हारी शरण में आया प्रार्थना कर रहा हूं ।

हे वरुण देव मैं कितने दिनों से तुम्हें पुकार रहा हूं पुकारते २ अब तो बहुत काल व्यतीत हो गया है मेरी पुकार की सुनवाई और कब होगी, लोग मुझ पर हंसते है ! मेरी तुम्हारे प्रति व्याकुलता को देखकर मेरा ठठा करते है ! और मुझे पागल समझते हैं । परन्तु मैं तो तुम्हारी शरण में आ चुका हूं । एक मात्र तुम से ही रक्षा पाने की आशा रखता हुआ निरन्तर प्रार्थना कर रहा हूं और करता चला जाऊंगा तुमको ही मेरी लाज बचानी होगी, क्या मैं ऐसे ही पुकारता रहूंगा और तुम अनसुनी करते जाओगे ! नहीं, तुम्हें मेरी पुकार सुननी होगी, हे पाप निवारक-हे मेरी परम आत्मन तुम्हें मेरी यह पुकार अवश्य सुननी होगी, अब तो चिर काल व्यतीत हो गया है । मेरा मन अपनी इस कामना को तुम्हारे सम्मुख कब से रखे हुए है । क्या इसकी स्वीकृति का समय अब तक नहीं आया? नाथ! जैसे आज अमावस्या की घोर अन्धेरी रात्रि में जो चारों ओर अन्धेरा ही अंधेरा छाया हुआ है । इसी प्रकार मैं चारों ओर अंधेरे ही अंधेरे में घिरा हुआ हूं । क्या तू देख नहीं रहा, तेरा नाम दयालु कृपालु है । तू शरणागत को न त्यागने वाला, दीन दुखियों, अनाथों पतितों तक की सुनने वाला, पापी से पापी जो भी एक बार तेरी शरण में आया तूने ही उसे अपनाया, वालमीक जैसे डाकू को किस प्रकार से एक क्षण में तू ने शुद्ध निर्मल करके ऋषि सिंहासन प्रदान किया ।

बाबू लाल चन्द, ठाकुर केदार सिंह—नारग—जि० सरमोर (हिमाचल प्रदेश) के निवास करने वाले दोनों एक दूसरेसे सहानुभूति रखने वाले, जहां पर भी सत्संग हो, धर्म यज्ञ हो, इकठें जाते हैं। एक दिन वह दोनों मिलकर सोलन को चले, सोलन नगर के निकट पहाड़ी से एक पानी का झरना वह रहा था--बावड़ी बनी हुई थी, वहां पर स्नान किया, पहाड़ी के एक कोने में बैठ कर सन्ध्या-जाप करने लगे, जब सन्धया इत्यादि से निवृत्त हुए, तो अकस्मात मीठी२ मधुर धवनि कानों में पड़ी तो चौकन्ने होकर सुनने लगे, आपस में विचार किया और कहा—कि यह ध्वनि बड़ी मधुर आकर्षित कर रही है आओ इस मधुर ध्वनि की ओर चलें—चलते२ पहाड़ी के ऊपर चढ़ गये तो क्या देखा कि एक छोटी सी गुफा हैं, उसमें झांक कर देखा तो गेरवे भेष में एक महात्मा आंख मून्दे निम्नलिखित भजन गाते २ रो रहे हैं।

भजन

आत्मा दर पर पिता आई है बलकाई हुई।
अब तलक किस वासते मेरी न सुनवाई हुई।
हाय हाय कर रहा हूं डूबता ।
रोके से रुकती नहीं यह नाव चकराई हुई।
कोई दुःख दुःखिया का आकर पूछने वाला नहीं।
फिर रही है आत्मा चारों ओर घबराई हुई ।।
नाव टूटी-डोर छूटि फूटि किस्मत है कहां।
सर पर दुष्कर्मों की अपने है घटा छाई हुई ।।
लो खबर अब डूबने में कुछ कसर बाकी नहीं।
चन्द्र की नैया भंवर में है पिता आई हुई ।।

हे वरूण देव ! मैंने सुन रखा है तेरे द्वार पर आया हुआ सवाली नहीं गया कोई खाली, मैंबडे दिनों से तेरे द्वार पड़ा तपस्या (अराधना) कर रहा हूं। बहुत सी निराशाओं के घावों से घायल हो चुका हूं पर श्रद्धा नहीं छोड़ सकता, अब कृपा कर, आज तो दुर दिनों का अन्त कर दें। मुझे अपना ले बीती सो बीती, रही सही मेरी संवार दें, और अपनी दिव्य ज्योति से मुझे इस अन्धकार से निकाल कर अपनी अमृत गोद में बैठा कर हृदय को जगमगा दे।

भजन

हे प्रभु तेरी निराली शान है !
आंख वालों को तेरी पहचान है ! !
अनगिनत पापी तरे तेरे फैज से !
तू दयालु, मेहरबान भगवान है ! !
मुझ अभांगे के गुनाहो पर न जा !
यह तेरा बच्चा महज़ नादान है ! !
खेल में वचपन जवानी विषयों में !
वृद्ध हुआ तृष्णा में ही ग़लतान है ! !
अपनी भक्ति का मुझे भी दान दे !
याचना यह सर्व शक्तिमान है।

ओं शान्तिः! शान्तिः !! शान्तिः !!!

बाबू लाल चन्द-ठाकुर केदार सिंह ने अब उठकर संत महात्मा के चरणों में नतमस्तक हो नमस्कार किया और कर जोड़ प्रार्थना की, महाराज ! आज हम परम पिता प्रमात्मा का कोटानकोट धन्यवाद करते है, कि उसकी कृपा से यात्रा हमारी सफल हुई चिरकाल सेचाह (इच्छा) थी प्रभु देव ने अकस्मात् उसको पूर्ण किया जोकि आपके

दर्शन तथा प्रभु भक्ति का अमृत रस प्राप्त हुआ, महाराज गतवर्ष भी आप ने हमारें गृह को अपने चरणों से पवित्र नहीं किया था। शिमला ही जाकर व्रत किया, अब के साल भी यहां पर आये, परन्तु हमें सूचना तक नहीं दी अब प्रभु ने मेल मिलाया है। अब आप कृपा करके हमारे यहां ही चलिए और हमें सेवा का अवसर प्रदान करते हुए कृतार्थ करें।

संत महात्मा—मुझे भी आप प्रेमियों के दर्शन करके बड़ी प्रसन्नता हुई है। यह प्रभुदेव की आपार कृपा है किस प्रकार वह बिछड़ें हुओं का मेल कराता हें।

प्रेमी—महाराज! यह तो भगवान ने हमारी पुकार को सुना उसे पूर्ण किया बस अब उठें हमारे संग चलें।

संत महात्मा —प्यारे! इस वर्ष व्रत करने का विचार तो काश्मीर का था, काश्मीर की आर्य समाज वजीर बाग, हजूरी बाग के मन्त्री महाशयों ने भी लिखा था पर अकस्मात श्रीमान लाला गुरुचरण दास जी तथा उनकी धर्म पत्नी श्रीमती सावित्री देवी का प्रेमभरा पत्र आया कि हमारे गृह पर व्रत करें और कोई भी वस्तु साथ न लावें प्रभु कृपा सें सब प्रबन्ध व्रत का आपकी इच्छा के अनुसार हो जावेगा। ईधर बाबू लालचन्द जी के पत्र कई दिनों से बार बार आ रहें थे, कि अब आप कब यहां पधार रहे हैं कृपया सूचना देवें अब मैं सोच में पड़ गया, कि कहां जाऊं तो यही प्रेंरणा हुई कि चिट्ठीयां डालूं मैंने तीन चिट्ठीयां लिखीं उन्हें लपेट कर एक अनजान बालक को बुलाया उसके सामने तीनों चिठ्ठियाॅं डाल दीं और उसे कहा इनमें से एक उठाकर मुझे दे दो, अनजान बालक ने एक चिट्ठी उठाकर मेरे हाथ पर धर दो—खोला तो सोलन आने को लिखा

पाया बस प्यारे यही देव इच्छा समझ कर लाला गुरुचरण दास जी के गृह पर आ पहुंचा हूं, जिस श्रद्धा, प्रेम, सार्थक भावना से यह परिवार मेरी सेवा करता रहा है। में मुख से प्रकट नहीं कर सकता, प्रभु देव इन्हें ऐसे सदगुणों और अपने नाम दान से सदैव भरपूर करते रहें। चूंकि इनका मकान बाजार में होने के कारण शोर रहता था, एकाग्र चित्त होना कठिन था, प्रभुदेव ने श्रीमान् लाला सरदारी लाल जी स्टेशनमास्टर के हृदय में प्रेरणा की, उन्होंने अपने मित्र की कोठी पर प्रबन्ध कर दिया है। यहां वातावरण शान्त है। परिवार भी श्रद्धा से भरपूर है। यहां पर रहने से भजन अच्छा हो रहा है। प्रभु इस परिवार को सदैव आनन्दित रखे। और कहा अब तो भगवान की इच्छा यही है, इस वर्ष यहां रहूं—आपके प्रेम, श्रद्धा भावना का धन्यवाद करता हूं। और कहा, इस शहर में, आप मेरे संग चलिए वहां सत्संग होगा—आप भी चल कर उसमें लाभ उठाएं।

प्रेमी—वाह महाराज! हमने कौन सा ऐसा अपराध-पाप किया है गतवर्ष भी हमें अपने दर्शनों और अमृत बचनों से वंचित किया था। अब के वर्ष भी, महाराज! हमारे यहां तो! एकांत स्थान है। वातावरण आपके व्रत के अनुकूल ही है। वह महाराज जो अनुभव कर चुके हैं। किसी प्रकार का वहां कष्ट न होगा अब हमें सेवा का अवसर अवश्य दें।

संतमहात्मा—आप प्रेमियों का प्रेम तो अनमोल है। प्यारे! हम अपने सहारे तो नहीं चलते, हम तो यन्त्र बनाकर कार्य करते हैं। आपके सम्मुख सारी बीती कहानी पूरी२ रख दी है। हालांकि मेरा पूर्ण विचार यही था; कि इस वर्ष काश्मीर जाऊंगा, पर देव इच्छा

न थी जहां पर भोग उस दाता ने रखा था वहां लाया। और कहा अब आप मेरे संग शहर चलिए, वहां सत्संग होगा—उससे लाभ उठायें फिर आपस में बातें करेंगे।

प्रेमी, तत्काल उठे, सन्त महात्मा के वस्त्र लोटा लंगोटा इत्यादि उठा लिया—और साथ ही चल पड़े नियत स्थान पर पहुंचे वस्त्र इत्यादि रख कर सत्संग सभा में पहुंच गये। वहां नर-नारी काफी संख्या में एकत्रित थे। सबने उठ कर सन्त महात्मा को नतमस्तक हो नमस्कार किया।

संत महात्मा—भजनीक महोदय को संकेत करके कहा आप भजन गाना शुरु करें हम सब मिलकर गायें।

भजन

मनुष्य तन पाके क्या कीतो,
प्रभु दा नाम न लितो।
तू आया था यहां करने जो,
किया तैंने न कुछ भी वह ॥
गंवायो रात दिन खासो,
न प्याला प्रेम दा पीतो ॥१॥
विषय तेनूं लगे प्यारे,
तैं भोगे भोग भी सारे।
पतोंनी अन्त दुःख भारे,
अजे वी मन नूं न जीत्यो ॥२॥
रहेयों तू मस्त धन दे विच,
खावन पीवन दे तन दे विच।
न सोचो कुछ भी मन दे विच,
उमर सारी ऐवें वीत्यो ॥३॥

तें समझा जिसनूं है मेरी,
ओ तां भोले नहीं है तेरी,
वना शुभ कर्म दी ढेरो,
न चोला धर्म दा सीतो ॥४॥

तू देखीं तूं तां पछतासी,
छुड़ सिया कोई न मा मांसी
पीसा दुःख दी गले फांसी,
विषन इयो सोच न कितो ॥५॥

मनुष्य तन पाके क्या कीतो,
प्रभु दा नाम न लितो

अब भजन समाप्त हुआ तो मन्त्री जीने खड़े होकर कहा—

मंत्री जी—सत्संगी प्रेमी भाईयो ! तथा माताओ ! आज हमारे अहोभाग्य ही हैं जो संत महात्मा हमारे मध्य में पधारे हुए है। ऐसे संतमहात्माओं के दर्शनों का सोभाग्य बड़े पुण्य कर्मों वालो को प्राप्त होता है। अब महाराज जी अपनी अमृत वाणी से अमृत वर्षा करेंगे, आप शान्तचित्त होकर अमृतपान करें। अब मैं पूज्य महाराज जी के चरणों में नतमस्तक होकर, प्रार्थना करता हूं कृपा करके हमारे संतप्त हृपयों को अमृत रसना से तृप्त करें।

उपदेश नं० १

ओ३म कद् प्रचेतसे महे वचो देवाय शस्यते।
तदिद्धिअस्य वर्धनम् ॥ साम० पू० ३. १. ४. २ ॥

भावार्थ—महान बड़े ज्ञानी इष्टदेव परमेश्वर के लिए कुछ भी थोड़ा सा वचन स्तुति रूप कहा जाये वह ही निश्चय से ईस वक्ताको वढ़ाने वाला है।

पूजा और सम्मान के योग्य माताओ तथा भद्र पुरुषो ! मन्त्री जी का आदेश है, कि अमृत रस पिलाओ। प्यारे ! अमृत तो मिलेगा उस से जो अमर होगा, मैं तो आवागमन के चक्कर में एक अरब सतानवें करोड़ उन्नतीस लाख उनचास हजार चौवन्न (१९७१९२२०५४) वर्ष से चला आता हूं, यह भगवान जाने कितने जनम मुझे और पाने पड़ेंगे और इस मृत शरीर से छुटकारा पाकर अमृत प्राप्त होगा, निःसन्देह, आपकी कामना, भावना तो उत्तम है। पर उसके प्राप्त करने से हम वहुत दूर हैं। निराशा की कोई बात नहीं, अभ्यासऔर पुरुषार्थ से मनुष्य वास्तविक लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है और मंजिल पर पहुंच जाता है।

असतो मा सद्‍गमय; तमसोमा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मा अमृतं गमयेति

अर्थात्—हे प्रभु ! हमें असत्य से सत्य की ओर ले चलो, हमें तिमिर अन्धकार से वचाकर प्रकाश की ओर ले चलो, मृत्यु के दुःख सन्ताप से बचाकर अमृत की ओर ले चलो।

उपनिषदकार ने अमृत प्राप्त करने के लिये पहले पहल असत्य के त्याग और सत्य के ग्रहण का आदेश किया है। अब आप लोग बतलायें सत्य के प्राप्त करने का साधन क्या है ?

बाबू लाल चन्दः—महाराज ! सत्य प्राप्ति का साधन तो ज्ञान ही होगा।

संतमहात्मा—वर्तमान काल में प्रभु की कृपा से भारत स्वतंत्र है। अनेकों स्कूल, कालेज, पाठशालाएं, गुरुकुल इस ज्ञानप्राप्ति के लिए खुले हुए हैं। इस समय सत्संग में अध्यापक और अध्यापिकाएं, विद्यार्थी आशा है उपस्थित होंगे।

केदार सिंहः—हां हां महाराज ! अधिक संख्या में बैठे हैं।

संत महात्माः—अपराध क्षमा करना कृपा करके मुझे वे प्रेमी पढ़ने वाले तथा पढ़ाने वाले बतलाने का कष्ट करें कि आपके पढ़ाने का उद्देश्य क्या है, और पढ़ने वालों का उद्देश्य क्या है। अब सभी एक दूसरे की ओर देख रहे है। सर नीचा किया हुआ है, खमोश ही हैं। एक युवती कन्या निकट बैठी थी, उससे पूछा, बेटी ! आप तो काफी लिखी पढ़ी हुई प्रतीत होती हो, आप बतला दें।

देवीः—बी० ए० पास है। अपने पिता जी के साथ Accounts Office, अकाऊंटस आफिस में कार्य करती है, कुछ देर चुप रहने के पश्चात वह बोली—महाराज ! पैसा (धन) कमाने के लिए।

संतमहात्माः—क्या विद्याहीन धन नहीं कमा लेते, कितने अनपढ़ सेठ हैं। उनके अधीन अनेकों बड़े २ विद्वान कार्य करते है और उसे नमस्कार करते हैं।

ग्रैजुएट—महाराज ! नौकरी करने के वास्ते पढ़ते हैं।

संतमहात्मा—आम कहावत है ! उत्तम खेती, मध्यम व्यापार, नीच चाकरी पिनन बेकार' प्यारे ! नौकरी का करना तो नीच कर्म कहा गया है।

ओ नादान ! अब भारत स्वतंत्र है। हम छोटे बड़े अमीर गरीब 'आले अदने' सब भारत के सपूत हैं, अब हम स्वामी हैं। हमें अब जो भी कार्य करना चाहिए भारत माता के हित तथा कल्याण निमित्त और स्वामी बनकर करना चाहिए—हमें अब अपने हृदय से दासतां की भावना निकाल देनी चाहिए, जैसे भगवान राम और भरत नें भ्रातृ भाव के महत्व को जानकर फुटबाल की भांति राज कों

एक दूसरे के सम्मुख फैंका था, वैसे बनकर रहना चाहिये ।

ग्रैजुएट—महाराज ! आप तो सतयुग की अवस्था चाहते हैं । परन्तु वर्तमान काल में तो जितने पढ़े लिखे, ऊंचे राज सिंहासनों पर बैठे हैं । वो प्राय दुर्योधन का ही रूप, नहीं, नही उससे भी बाज़ी लेकर रूप धारण किये हुये हैं । महाराज! आज तो, कवि ने कहा है ।

मन तुरा हाजी बगोयम। तू मरा मुल्लाँ बिगो

अर्थात—मैं तुझे हाजी कहूं तू मुझे मुल्लां पुकार, की भान्ति भारत का प्रायः राज्य चल रहा है । अपनी२ दुकानदारी ही चलाई हुई है ।

संतमहात्मा—प्रोफैसर, हैडमास्टर महोदय बैठे होंगे —अब वे बतलाने का कष्ट करें—कि आपके पढ़ाने का उद्देश्य क्या है । अब सभी खामोश हैं । फिर पूछा अच्छा भाई! यह बतलाओ—आर्य समाज का पहला नियम क्या है । अब सभी चुप, थोड़ी देर पश्चात एक वृद्ध व्यक्ति ने खड़े होकर यूं पढ़कर सुनाया ।

वृद्ध व्यक्ति—सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं—उन सब का आदि मूल परमेश्वर है ।

संतमहात्मा—यह नियम आप सब ने सुना, अब बताओ विद्या प्राप्ति का उद्देश्य क्या है ।

लाल चन्द—महाराज ! विद्या प्राप्ति का उद्देश्य ईश्वर प्राप्ति है । ऐसा पहला नियम आदेश कर रहा है जो मैंने समझा है ।

संतमहात्मा—ठीक भाव समझा—पर इस नियम पर आचरण कौन करे तोते की तरह सप्ताहिक अधिवेशनों में दस नियमों को रट लगा देते हैं । अब आचरण कौन करे । एक कवि ने लिखा है ।

जो कुत्ता दर २ फिरे, दर दर दुर दुर होय।
एक ही दर का हो रहे दुर दुर करे न कोई॥

जो कुत्ता किसी स्वामी के अर्पण अपने आप को कर देताहै, तो स्वामी उसके गले में पट्टा डाल देता है अब गवंनमेंट तक को ताकत नहीं जो उसे पकड़े या उसे मारे, अब वह कुत्ता स्वतंत्र है, निश्चिन्त है। अब उसके खिलाने, पिलाने सर्दी, गर्मी में रक्षा करना, सैर कराना इत्यादि की स्वामी को ही स्वयं सब चिन्ता रहती है।

धन्य हो ! जगत गुरु ऋषि दया नन्द जी महाराज ! युग २ में तेरा भला हो, तूने बहिन और चाचा की मृत्यु को देखा—चकाचौंद हो गया। इस मृत्यु से निजात पाने और अमृत को प्राप्त करने के वास्ते सत्य के ज्ञान देवता की तलाश के लिए नाना प्रकार के संकट विपत्तियों को सहर्ष सहन करते हुए, अपने प्राण तक को अर्पण किया और वेद की अमृत वाणी कल्याणी के सच्चे पुजारी गुरु ऋषि वृजा नन्द महाराज के चरण कमलों में वास करके उन्हें अपनी सेवा से गद् गद् प्रसन्न किया। जिसने तिमिर अन्धकार में घिरे हुए प्यारे शिष्य को दिव्य ज्योति के दर्शन करने का बोध और वेद की पवित्र अमृतवाणी कल्याणी का अमृत रस पिलाया, तव उस महातपस्वी, त्यागी, अखण्ड ब्रह्मचारी, देश हितकारी ऋषि दयानन्द महाराज ने आर्य समाज के नियम बनाये। इन नियमों को हरएक सम्प्रदायों ने अपनाया— परन्तु वर्तमान आर्य जाति जो संसार भर को एक ईश्वर की पूजा का पुजारी बनाने वाली—(कृण्वन्तो विश्वमार्यम का डंका बजाने वाली स्वयं प्रभु भक्ति से कोसों दूर होती जा रही है। आस्तिकता का प्रचार करने वाले, नास्तिकता के पुजारी होते जा रहे

हैं, ये यदि एक के पुजारी होते तो एकता होती। ऋषि दयानन्द महाराज ने तीसरे नियम में लिखा है।

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना आर्यों का परम धर्म है।

सज्जनों ! लगभग एक सौ वर्ष से आर्य समाज वेद का प्रचार कर रहा है--यदि आज अखबार में नोटिस निकाल कर आर्य जाति से पूछा जावे--कि वे परिवार, सूचना देवें, जो नित्य प्रति परिवार सहित घर में वेदपाठ करते हैं। जिसके पढ़ने को ऋषि ने धर्म नहीं लिखा किन्तु परम धर्म लिखा है। तो दुर्लभ व्यक्ति ऋषि के इस नियम पर विश्वास रखने वाले और वेद पढ़ने वाले निकलेंगे। इसके अतिरिक्त जीवन काल में जब महात्मा गांधी बंगाल में गये थे। तो रामपुर ग्राम में पहुंचे, वहां के मुसलमान मौलवी मिलने के वास्ते महात्मा जी के पास आये, तो महात्मा जीने उनसे पूछा, कि यहां कितने मुसलमान निवास करते हैं उत्तर मिला चौदह सौ; फिर महात्मा जी ने पूछा, कितने मुसलमान प्रतिदिन कुरान शरीफ़ पढ़ते हैं। उत्तर मिसा, एक हजार। अब जरा विचार करो, कि कितना जाति में संगठन और अपने धर्म ग्रंथ पर तथा परमात्मा पर विश्वास है सन १९४७ में जब भारत और पाकिस्तान का परिवर्तन हुआ। मास नवम्बर में, मैं करनाल में सांयकाल को पहुंचा। उस रोज़ सहस्रों की संख्या में मुसलमान नर-नारियों को नगर से निकाल कर मदान में डाला गया, जब प्रातःकाल उठ कर मैं उनकी ओर गया तो क्या देखा, कि सहस्रों की संख्या में नर--नारी लाइनों में बैठे हुए, इस संकट काल में सर झुकाये नमाज़ पढ़ रहे हैं। और प्रार्थना कर

रहे हैं। वह दृश्य देख कर मेरा हृदय और सर झुक गया। अब ज़रा सोचो कि ऐसे संकट काल में पड़े हुए, किस तरह संगठित होकर स्वामी की याद में मस्त (मग्न) हैं, क्या यह भक्ति सजदा करना स्वामी के आगे दुआ मांगना, इत्यादि फल लाये बिना रह सकती है। कहावत है। "जमाअत में करामात" होती है। अब जरा आप सब प्रेमी विचार करें कि आपके घर में जितने मैम्बर है। क्या एक स्वामी के पुजारी हैं। एक विचार के हैं। क्या कोई घर में पूजा का स्थान भी बनाया हुआ है?

प्यारे—दुर्लभ ऐसे परिवार, निकलेंगे, यह क्यों। हम अपने स्वामी से विमुख हैं जब हम एक के होकर न रहें, तो एकता कहां से आवेगी।

सज्जनों—प्रभु की थोड़ी सी भक्ति महाफल को देने वाली होती है। हम लोग समझा करते हैं कि थोड़े से सन्ध्या, हवन, प्रार्थना, भजन करने या एक आध मन्त्र द्वारा उसको स्मरण करने से क्या लाभ होगा, या एक दिन छोड़ देने से हमारी क्या हानि होगी। पर यह सत्य नहीं है। हमारी उपासना चाहे कितनी स्वल्प और तुच्छ भी होवें, पर वह उपास्य देव तो महान हैं। ज्ञान और शक्ति में वह हम से इतना महान है कि हम कभी भी उसके योग्य उसकी पूरी भक्ति नहीं कर सकते हैं। उसके सामने हम इतने तुच्छ हैं कि यदि वह चाहे—तो वह अपने तुच्छ दान से हमें क्षण में भरपूर कर सकता है। हम यदि थोड़ी देर के लिए भी उससे अपना सम्बन्ध स्थापित करते हैं। तो वह महादेव उस थोड़े से समय में ही हमें भर देता है। संत लोग अनुभव करते हैं कि प्रभु का क्षणभर ध्यान करते हैं प्रभु की आशीर्वाद धारा उनके लिए खुल जाती है। और वह उस क्षण भर में ही प्रभु के आशीर्वाद से निहाल हो जाते हैं। एक बार

प्रभु का नाम उच्चारण करते ही उन्हें ऐसा आवेश आता है कि शरीर रोमांचित हो जाता है। मन और आत्म आनन्द रस से पवित्र और प्रफुल्लित हो जाता है। पर यदि हम साधारण लोगों की प्रार्थना, उपासना अभी उस महा प्रभु से इतना ऐश्वर्य नही पा सकतीं है— तब तो हमें उसके थोड़े से भी भजन की बहुत कदर करनी चाहिए एक भी दिन एक ही समय नागा न करना चाहिए। एक समय भी नागा होने से जो सम्बन्ध विच्छिन्न हो जाता है। वह फिर जोड़ना पड़ता है। जैसे मकान की चालीस सीढ़ियां हैं। चढ़ते २ ३८ सीढ़ियां चढ़ जाने पर पांव फिसला तो धड़ाम से नीचे की सीढ़ी पर आ पड़ा—परिणाम कष्ट भी भोगा और फिर प्रथम सीढ़ी से चढ़ना होगा प्रभु भक्त कहते हैं—यदि किसी कारणवश भगवच्चिन्तन बिना समय बीत जाय तो पुत्र शोक से भी बढ़कर उस घोर प्रायश्चित्त करना चाहिये, जिससे फिर कभी ऐसी गलती न हो। यही कारण है कि नागा होने पर प्रायश्चित्त का विधान है। अतः हम चाहे किसीदिन भजन में बिलकुल दिल न लगा सकें—तथापि उस दिन भी कुछ न कुछ उपासना अवश्य करनी चाहिये यत्न अवश्य करना चाहिये पीछे पता लगता है, कि एक दिन का भी यत्न व्यर्थ नहीं गया, एक २ दिन की उपासना ने हमें बढ़ाया है, हमारे शरीर, मन और आत्मा को उन्नत किया है।

सज्जनो—एक रत्ती विष १५ सेर हलवे को विष बना सकती है परन्तु १५ सेर हलवा एक रत्ती विष को हलवा नहीं बना सकता— इसी प्रकार से प्रभु—उपासना से एक दिन या एक समय का नागा करने का परिणाम मिलता है।

कम से कम यह तो पूर्ण विश्वास करना चाहिए कि संसार की

अन्य बातों में हम जितना समय देते हैं। सांसारिक बातों में जितनी स्तुति उपासना करते और उनसे जितना फल हमें मिलता है। उससे अनन्त गुण फल हमें प्रभु की स्तुति, उपासना से मिल सकता है। और मिल जाता हैं। कारण सपष्ट है, क्योंकि वह महान है। ज्ञान का भण्डार सर्व शक्ति मान है। और यह सांसारिक बातें अल्प हैं। तुच्छ हैं। निस्सार हैं। ज्ञान, शक्ति विहीन केवल विकार है।

नारायण हरि भजन में, तू जनि देर लगाये।
क्या जाने या देर में, श्वास रहे या जाये॥
आओ प्रभु शरणागति, कृपा सिन्धु दयाल।
एक अक्षर हरि मन बसे, नानक हो निहाल॥
वृद्ध भयो सूझें नहीं, काल जो पहुँचो आन,
कहे नानक बांवरे, क्यों न भजे भगवान।
रात गंवायो सोय कर, दिवस गंवायो खाय,
हीरा जन्म अमोल था, कोड़ी बदले जाय।
एक घड़ी से आधी घड़ी, आधी से भी आध,
तुलसी संगत साध की, काटे कोटि अपराध।

सज्जनों! एक घड़ी २४ मिन्ट की होती हैं। संत तुलसी दास जी महाराज ने लिखा है—आधी घड़ी से भी आध अर्थात ६ मिन्ट भी यदि प्रभु भक्ति में श्रद्धा प्रेम से मन को लगा दो—तो जन्म जन्मान्तर के पापों से निवृत्ति प्राप्त हो जाती है। इतना सस्ता सौदा, पर खरीद-दार दुर्लभ—अन्त में प्रभु से प्रार्थना है कि वह हम सब को सुमति

प्रदान करें-ताकि हम अपने जीवन का उद्देश्य जाने। उस पर आचरण करते हुए जन्म सफल कर सकें, प्यारे! कल आपको वेद की अमृत वाणी कल्याणी का उपदेश यह सुनाया जायेगा कि किस प्रकार सें परमात्मा अपने शरणागत की पुकार को तत्काल सुनता है और उसकी रक्षा करते हैं।

ओं शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

भजन

सुन्दर माया तेरी, सुन्दर काया तेरी, काहे रे नर वृथा गंवाये।
हीरा जनम अमोलक हींरा, विषयों में क्यों इसे रुलाए।
काहे रे नर——

भटक २ कर नर तन पाया, मोह विषयों में फिर क्यों फंसाया
अमृत नाम हरि गा बन्दे, मूर्ख तू क्यों इसे रूलाये।
काहे रे नर—

भटक २ कर वक्त विहाया, कब हुं न हरि ध्याया,.
चिड़ियन ने चुग खेत लियो जब, अब पछताये कछु हाथ न आये
काहे रे नर—

कब हूँ न संत शरण तू आया, इस जीवन का उद्देश्य न पाया
कर्म क्षेत्र इस जगत में बन्दे-कर्म हीन कछु लाभ न पाये।
काहे रे नर——

———

ओ३म्

उपदेश नं० २

ओ३म् अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये।

निहोता सत्सि बर्हिषि। सामवेद मन्त्र १

भावार्थ—हे अग्ने! सर्वत्र प्रकाशक और व्यापक होने और हव्य दान योग्य पदार्थों के प्रदान करने के लिए आप हमारे समीप आईये आपकी सब स्तुति करते हैं। सब पदार्थों के देने वाले आप यज्ञ में विराज मान हों।

इस वेद मंत्र में प्रभु को पुकारा गया है, भगवान कृष्ण ने अर्जुन से कहा हैं कि मुझे चार प्रकार के मनुष्य पुकारते हैं।

चतुर्विधा भजन्ते मां, जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ॥

(१) एक तो वे लोग जो आगे पीछे भगवान को याद नहीं करते परन्तु जब दुःख दर्द में ग्रस्त होते हैं, तब भगवान को याद करते हैं।
(२) वे लोग जिनको भगवान की खोज है, तलाश करते हैं।
(३) वे लोग जो सवार्थी हैं, जिनका कोई स्वार्थ सिद्ध न हो जो धन सम्पत्ति या सन्तान की इच्छा रखने वाले हैं, वे भगवान को याद करते हैं।

(४) वे लोग, जिनको भगवान का ज्ञान हो गया है, जो उसकी भक्ति में सर्वदा मग्न रहते हैं। कवि ने लिखा हैं:—

याद करते है मुझे, ये चार बहरे आफ़ियत,
ग़म रसीदा तालबे दुनियां ओदीनो मार्फ़त॥

सज्जनो:—अब हम सोचें कि हम किस दर्जे में हैं, प्यारे! हमसे एक नन्हा, अनजान बालक अच्छा होता है। वह कैसे ? सुनिये:—

एक नन्हा बालक मां से बीस कदम की दूरी पर बैठा है, उसे भूख लगी, अब वह खड़ा होना या चलना नहीं जानता, न पुकार सकता है। तो रोना आरम्भ कर देता है। इस रोने को सुन कर बहन दौड़ कर भाई के निकट आ जाती है, उसे उठाना चाहती है, परन्तु बालक बहिन के पास न जाकर ज़ार२ रोता है। और अब भाई जाता है तो उसके पास भी नहीं आता, तोपिता जी गये, उठाने लगे तो बड़े क्रोध, गुस्से से मुख लाल पीला करके और भूमी पर माथा रख कर ज़ार२ रोता है, पिता को दोनों हाथों से कहता है हट जाओ अब जब माता बालक के निकट पहुंचती है, तो माता के हाथ पसारने से पहले ही बच्चा सर को भूमि से तत्काल उठाकर माता की टांगों में लिपट जाता है।

सज्जनों ! अब विचारो, सोचो, बहिन, भाई, पिता के निकटपहुंचने और उनके उठाने पर तो बालक उन्हें दूर दूर करता और रोता रहा पर माता के निकट पहुंचने पर उसे स्वयं चिमट गया, यह क्यों ?

प्यारे ! बालक भूखा है। बहिन, भाई पिता के पास न जाने का कारण यह है कि यह मुझे उठाकर बाहर ले जाएंगे, मेरी भख निवृत्ति न होगी, पर माता को चिमट गया, बालक जानता है। कि मेरी भूख निवृत्ति माता के स्तनो से हो सकती है। भेड़, बकरी का बच्चा अपनी माता को सैंकड़ों भेड़, बकरियों में जाकर तत्काल पहचान लेता हैं। परन्तु हम उस जगत जननी माता की पहचान नहीं करते हम कब उसकी पहचान और पुकार करते हैं, यह सुनिए:—

एक यात्री घर से यात्रा को चला, चलते२ मार्ग में प्यास लगी,

सामने ग्राम था, वहाँ पर पहुंचा तो एक देवी के द्वार पर पहुंचकर याचना की माता जी मैं प्यासा हूं जल पिला दें।

देवी...बेटा ! मेरा एक प्रश्न हैं उसका उत्तर पहले मुझे दे दो, फिर जल दूंगी अन्यथा नहीं।

प्यासा...माता आपका क्या प्रश्न है ?

देवी...मुझे खीर से प्यार है, तू ऐसी कविता बनाकर सुना जिसमें खीर शब्द आ जावे।

प्यासा...कवि नहीं है जो कविता बनाकर सुनावे और जल प्राप्त करे। बिना कविता सुनाये जल मिलता नहीं, अब दूसरी दिशा में गया, और देवी से कहा, माता जी! प्यासा हूं जल पिला दें।

देवी...बेटा ! बहुत जल पर मेरा एक प्रश्न है, उसका उत्तर देदो जल दूंगी अन्यथा, नहीं।

प्यासा...बेचारा दूखी है पूछा माता ! आपका क्या प्रश्न है ?

देवी...नुझे चर्खे से प्यार है, तुम ऐसी कविता बनाकर सुनाओ जिसमें शब्द चर्खा आ जावे।

प्यासा...प्यास से अति व्याकुल हैं। कवि न होने के कारण उत्तर न दे सका, अब तीसरी दिशा में पहुंचा, देवी से कर जोड़ जल की याचना की।

देवी...प्यारे! एक प्रश्न का उत्तर पहले मुझे दे दो, फिर जितना जल चाहो ले लो।

प्यासा...माताजी ! आपका क्या प्रश्न है।

देवी...मुझे कुत्ते से प्यार है, तुम ऐसी कविता बना कर सुनाओ, जिसमें कुत्ता शब्द आ जावे।

प्यासा...अब प्यासा प्यास से अति व्याकुलल है। अब शेष चौथी दिशा में गया और देवी से जल की याचना की।

देवी...बहुत जल, देख मटके भरे पड़े हैं, जितना चाहो ले लो, परन्तु जल लेने से पहले मेरे एक प्रश्न का उत्तर दे दो, अन्यथा जल नहीं है।

प्यासा...माता जी ! आपका क्या प्रश्न है ?

देवी...मुझे ढोल से प्यार है तू ऐसी कविता बना कर सुना जिसमें ढोल शब्द आ जावे।

प्यासा...अब चारों ओर परिक्रमा कर चुका है। प्यास से व्याकुल प्राण निकलने को आ रहे हैं। अब प्यासे की प्यास कौन बुझाये ?

सज्जनों ! अब सोचो प्यासा किसे पुकारे जो उसकी प्यास मिटाये आप भाईयों को याद होगा, जब अंग्रेजी राज्य भारत में था तो जार्ज पंचम बीमार हो गये, अनेकों डाक्टरों द्वारा चिकित्सायें कराई गईं। बड़े २ चिकित्सक इकट्ठे हुये, जब चिकित्सा करते करते थक गये तो क्या उपाय सूझा कि सारे राज्य में एक दिन छुट्टी मनाई जाए, सारी प्रजा मन्दिरो, शिवलियों, गुरुद्वारों मस्जिद गिरिजाओं में राजा के स्वास्थ्य अर्थ प्रमात्मा से प्रार्थना करें। यहीं उपाय कब डाक्टरों को याद आया जब के चारों ओर से अन्धेरा दृष्टिगोचर हुआ, तब मां याद आई।

ऋषि दयानन्द जी महाराज—जब गुरु विरजानन्द जी के चरणों में रह कर विद्याध्ययन कर रहे थे, तो एक दिन पढ़ा हुआ पाठ भूल गये दूसरे रोज गुरु देव से भूले हुए पाठ के स्मरण कराने के वास्ते याचना की, तो गुरु देव ने कहा, 'दयानन्द ! एक बार पाठ पढ़ाया जाता है, बार बार नहीं पढ़ाया जाता। किन्तु बहुत याचना करने पर भी पाठ न बतलाया गया तो ऋषि दयानन्द महाराज गुरुदेव के प्रेमी भक्तों के पास गये उनसे जाके निवेदन किया, कि

आप मेरे गुरु देव को मेरी ओर से याचना करें, कि मुझे भूले हुआ कल वाला पाठ पढ़ा देवें। प्रेमी भक्त गुरु देव की सेवा में पहुंचे याचना की तो दयानन्द को गुरुदेव ने मन्यु रूप धारण कर कहा, पहले जो तुमको कह दिया गया है। बार बार पाठ पढ़ाया नहीं जाता, तुमको विश्वास नहीं आता तो जाओ यमुना में डूब मरो।

ऋषि दयानन्द जी...गुरु के आदेश अनुसार यमुना किनारे पहुंचे यही दृढ़ संकल्प करके समाधिस्थ बैठ गये, कि यदि आज पाठ याद न हो गया तो अपने आप को यमुना में बहा दूंगा। अब आंखे मूंदकर पुकार की:—

ओ३म अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदात्ये।
नि होता सत्सि बर्हिष ॥

अर्थात...ओ प्रकाश स्वरूप प्रभु ! आओ, अब मैं अन्धकार में हूं। मुझे इस अन्धकार से निकाल कर अपनी प्रकाश मयी ज्योति से सत्य मार्ग दिखाओ

पुकार करते हुये अपने आप को समर्पण कर दिया।

फ़ारसी के कवि ने कहा है:—

सपुर्दम बतो दिल खेश रा। तू दानी हिसाबे कमो बेष रा।

मन तो शुद्धम तू मन शुद्धी, मन तन शुद्धम तू जां शुद्धि।
ता कस न गोयद बाद अज़ीं, मन दीगरम तू दीगरी ॥

मैं तू हुआ, तू मैं हुआ, और अन्य कोई न रहा।
कैसे कहे कोई भला, मैं और हूँ तू और है।

मैं फूल हूँ और बू है तू, कोयल हूं मैं कु कू है तू।
मैं क्या नहीं क्या कुछ है तू, मैं कुछ नहीं सब कुछ है तू,
कैसे भला जाने कोई, मैं और हूँ. तू और है।

प्यारे! कोयला स्याही से भरपूर है। हाथ को लगे, कपड़े से लगे हाथ कपड़ा काला होजाता है। जब कोयला अग्नि के अर्पण हो जाता है तो तद् रूप अग्नि हो जाता हैं। उसकी स्याही कब दूर हुई, जब अपने को अग्नि के समपर्ण कर दिया, अब अग्नि ने अपना रूप रंग चढ़ा दिया, इसी प्रकार जब शरणागतं अपने आप को प्रभु के समपण कर देता है, तो वह अमृतमय माता की गोद में निवास कर निर्भय हो जाता है। कवि ने लिखा है :—

दिल के आईने में है तस्वीर यार की।
जब ज़रा गर्दन झुकाई देख ली।

प्यारे! नमस्कार मैं प्रकाश है। देखो मेरा १० वर्ष के पश्चात आप से मिलाप हुआ। मैंने आप से पूछा, क्या आप ने मुझे पहचाना है। तो आप मुझे भूले हुये हैं। अब आप मेरी ओर देख रहे हैं। मैं फिर पूछता हूं। मुझे नहीं पहचाना, तो आप आंख, कान, जिह्वा-बन्द कर सर झुका लेते हो, तो तत्काल फिर हंसते २ आंखें इत्यादि खोलकर कहते हो, हां हां, महाराज! अमुक स्थान पर आप का मिलाप हुआ था, अमुक २ बातें हुई थीं, अब बताओ, यह दस १० वर्ष का रिकार्ड भूला हुआ कहां से आ गया, क्या बाहर रखा था? क्या इस बाहर की आंख, कान, जिह्वा ने प्रकट किया है? नहीं २ यह तो अन्दर की ज्योति है। जिस से भूला हुआ पाठ सम्मुख आ जाता है, यह कब प्राप्त होता है। जब मनुष्य स्वार्थ भावना को त्याग कर देता है। कवि ने लिखा है कि :—

चशम बन्दो, गोश बन्दो, लब बा बन्द
गर न बीनी, सरे हक़ बरमन बखन्द
आंख, कान, मुंह बन्द कर, नाम निरंजन ले
अन्दर के पट तब खुलें, बाहर के पट दे

अब ऋषि दयानन्द महाराज के सम्मुख सारे का सारा भूला हुआ पाठ सम्मुख आगया, फूले नहीं समाते अब प्रभु को नमस्कार किया, यमुना से चलकर गुरू के चरणों में पहुंचकर नतमस्तक हो नमस्कार किया, कर जोड़ प्रार्थना की, महाराज ! कल वाला पाठ याद कर आया हूं । सुनिये, जब गुरु देव ने पाठ सुन लिया, तो पूछा, दयानन्द ! किस ने पाठ याद कराया है ।

ऋषि–महाराज! वेद की पवित्र अमृत कल्याणी बाणी सामवेद के प्रथम मन्त्र द्वारा प्रकाश स्वरूप को पुकार की, सुनने वाले ने पुकार को सुना, भूला पाठ सम्मुख रखदिया । अब गुरु देव फूले नहीं समाते, प्रेम के आंसू आंखां में भर आये, और प्यारे शिष्य की पीठ पर हाथ फेरते हुए आशीर्वाद दिया, और कहा दयानन्द ! तूने मेरी इच्छा को सफल करना है, मुझ से अनेकों शिष्य पढ़े, और पढ़ गये, पर तेरे जैसा शिष्य आज तक न मिला, अब मैं निश्चिन्त हूं ।

सज्जनों ! ऋषि दयानन्द महाराज तो संस्कृत के धुरन्धर विद्वान पण्डित थे, वेद वक्ता थे, पर गुरु नानकदेव जी महाराज, संत कबीर जी महाराज कौन सी विद्या, संस्कृत पढ़े हुये थे । जो आज उनकी अमृत बाणी को बड़े २ विद्वान उपदेशों और व्याख्यानों में श्रोता गणों को सुना २ कर मुग्ध कर देते हैं । आज उनकी बाणी जीवित बाणी कही जाती है । यह क्यों ?

प्यारे ! यह है प्रभु भक्ति, भक्ति में होती है अद्भुत शक्ति, भक्ति

सिद्धांत से ऊंची है। क्या महात्मा कांधी संस्कृत के विद्वान थे? जिस ने सैंकड़ों वर्षो से भारत पर शासन करने वाले अंग्रेजों को बिना शस्त्र-अस्त्र के अपने तप-भक्ति की शक्ति द्वारा भारत से निकाल दिया और जिसके सम्मुख योरूप के वड़े २ फ़िलास्फर आकर चुप हो जाते थे। विलंगटिन जब भारत का वायसराय था, जितना समय वह भारत में वायसराय रहा, महात्मा गांधी को नहीं मिला क्यों ? इस लिये कि, वह यह जानता था, कि महात्मा गांधी के पास जादू है। जो वह चाहता है लिखवा लेता है। अब सोचो एक लंगोटेबन्द, तपस्वी, महात्मा के सम्मुख विलंगटिन भारत का राजा होता हुआ डरता था। यह क्या शक्ति थी, अस्थि का पिंजर शरीर था, यह शक्ति कहां से उसने प्राप्त की थी, प्यारे! त्याग, तप सेवा और सद्गुण प्रभु भक्ति से उन्हें प्राप्त हुए थे। वह जीवन काल पर्यन्त जब तक प्रातः सायं काल पांच बजे प्रभु भजन कीर्तन, प्रार्थना न कर लेते थे, संसार का कोई कार्य न करते थे, और सायंकाल को भी ठीक पांच बजे समय पर प्रभु भक्ति का समय नियत था, जिस दिन महात्मा गांधी की मृत्यु हुई तो उसी समय सायंकाल को सरदार पटेल उपप्रधान मन्त्री ने रेडियो पर भाषण दिया, कि मैं चार बजे सायं को महात्मा जी की सेवा में गया, जब पांच बजे तो महात्मा जी मुझे घड़ी दिखा कर उठकर प्रार्थना को चले गये, जब प्रार्थना सभा में पहुंचे तो नत मस्तक हो जब प्रभु को नमस्कार किया, तो प्रभु ने अपनी गोद में उठा लिया। प्यारे ! क्या महात्मा गांधी मर गया है, नहीं, नहीं, जीवित है। जब तक सृष्टि स्थित (कायम) है। महात्मा गांधी जीवित रहेंगे, क्योंकि भगवान नित्य है और नित्य रहेगा उसका पुजारी भी नित्य रहेंगा।

ओ राज्य अधिकारियो ! ओ बापू २ पुकार कर राज्य सिंहासन

पर बैठे हुए, ज़रा अपना निरीक्षण करो। क्या आपका प्रभु से प्रेम है। और अपने जीवन सुधार की भी कुछ चिन्ता है। क्या वह महात्मा गांधी हिंसा करता था, असत्यवादी था, क्या बापू २ पुकारने या उसकी समाधी पर फूल चढ़ाने से उसकी आशीर्वाद पाओगे। नहीं, नहीं हरगिज़ (सर्वथा) नहीं, जब तक कि भारत के दीन दुःखी जाति की अपनी आंखों, हाथों द्वारा सेवा न करोगे। बड़ी २ कोठियों में, बिजली के पंखों के नीचे रहने से और कारों पर चढ़ कर अपना सफ़र खर्च बटोरने से तुम जीवित नहीं रहोगे। कौड़ी २ भारत माता को अमानत है। तपस्वी बनो, सी० आई० डी० बनकर सर्दी, गर्मी में गुप्त रूप से घूम २ कर प्रजा की खबर लो।

मन तुरा हाजी बगोयम, तू मरा मुल्लां बगो;

की भान्ति मत बन कर रहों वह करोड़ों आंखों, हाथों वाला मेरी और आपकी सब कृयायें देख रहा है। वह हिसाब दार पक्का है। गाफ़िल नहीं है। मत समझो, वह नहीं देख रहा। समय की कदर करो, कुछ करलो, स्वामी से प्यार करो। उसकी पैदा की हुई प्राणी मात्र प्रजा की सेवा करो—बापू के जीवन को लक्ष रखो, तो जीवित रहोगे।

सज्जनों! अब प्यासा बेचारा प्यास से व्याकुल उस के चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार है। अब अपने आश्रय दाता को पुकारता है।

'पुकार'

तुम को पिता बिसार कर, बैठा हूँ मैं पछता रहा।
मिलता न कोई आसरा, बैठा हूँ मैं पछता रहा।
संकट के टूटे पहाड़ हैं, कांटों वाले मानो झाड़ हैं

रस्तो को आज भूल कर, जंगल में हूं भटक रहा ॥
करुणा की दृष्टि कीजिये, सुधि हमारी लीजिये।
दुखिया की सुनता पुकार है, दुखड़ा हूं तुझ को सुना रहा ॥
खाली तेरे दर से न गया, जो जिसने मांगा सो मिल गया।
दिल की सफाई चाहिये, कर्मों का फल तू चुका रहा ॥
जैसा किसी का देखे अमल, वैसा ही उसको देता फल।
देश पिता तेरे न्याय में, फर्क न कोई आ रहा।
जिस ने तुझे पुकारया, हृदय में तुझ को पा लिया।
संतप्त हृदयों को शान्त कर, गुणवाद तेरे है गा रहा ॥

निर्बलों, दीन दुखियों, अनाथों-निराश्रितों के आश्रित ने नेअप प्यारे प्यासे की पुकार को सुना —कवि ने लिखा है—

तू शाहों को गदा कर दे, गदा को बादशाह करदे।
इशारा तेरा काफी है, बनाने में मिटाने में॥
तू राई को कोह कर दे खाली को दम में भर दे।

अब प्यासे ने चारों ओर माताओं को सम्बोधन कर के कहा, माताओ! सुनो, मैं अब आपको कविता सुनाता हूं।

बड़े यत्न से खीर बनाई, चर्खा दिया जलाये,
कुत्ता आकर खा गया, तू बैठी ढोल बजाये।

अब चारों ओर से माताओं ने ठण्डे, जल के कटोरे भर कर प्यासे के सम्मुख धरे, तो प्यासा कहता है, बस माताओ, अप प्यास बुझ गई है। अब इस जल की आवश्यकता नहीं। कवि कहता है—

खुल गया जिस पे राज़े पिन्हानी,
हीच समझे वह ऐश सुलतानी।
चाह मिटी चिन्ता मिटी, मनवा बेपरवाह,
जिसको कुछ न चाहिये, वही शाहनशाह।

जिस प्रकार नन्हा बालक, बहन, भाई पिता के पास भूखा प्यासा होते हुए भी न जाकर रोता रहा, परन्तु माता के निकट पहुंचने पर स्वयं उसे चिपट गया था, बालक गोद में बैठते ही बिना खाये पीये नींद में मग्न हो गया, ऐसे ही भगवत् प्यारे इन भोग पदार्थों से दूर हो जाते हैं। किन्तु भोग उनके पीछे भागता है। कवि लिखता हैं

भगती फिरती थी दुनियां. जब तलब करते थे हम,
अब कि जब नफ़रत हुई वह बेक़रार आने को है।
प्रभुता को हर कोई भजे; प्रभु को भजे न कोय।
कबिरा! जो प्रभु को भजे, प्रभुता चेरी होय ॥

दृष्टात

एक राजा जो सन्तान से रहित था, जब वृद्ध अवस्था में हुआ, तो रानी से कहा, अब हम तीर्थ यात्रा को चलें, रानी ने कहा अवश्य चलें। वहां सन्त महात्माओ, योगियों के दर्शन करेंगें, उनके उपदेश तथा ज्ञान कथा वार्ता को सुन कर अपना जीवन सफल करेंगे। अब तैयारी करके तीर्थ यात्रा को चल पड़े, जब तीर्थ स्थान पर पहुंचे, प्रातःकाल नित्यकर्म से निवृत्त हो संतों, महात्माओं के दर्शन अर्थ चल पड़े चलते चलते एक घास फूस की कुटिया में बैठे हुए वृद्ध संत महात्मा की शरण में पहुंचे, नतमस्तक होकर राजा, रानी दोनों ने नमस्कार

किया और बैठ गये।

संतमहात्मा—प्यारे ! आप कहां से पधारे हैं, और यहां पर आने का कैसे कष्ट किया है।

राजा—महाराज ! मैं अमुक देश का राजा हूं, यह संग में मेरी धर्मपत्नी है। महाराज ! मैं वृद्ध अवस्था में हो चुका हूं। मेरा सर का एक एक बाल सफ़ेद हो गया है। कल नाम काल का है, पता नहीं है कल क्या होगा, महाराज ! मेरीकोई सन्तान नहीं है। मेरे मरने के पश्चात राज्य खाली देख कर तो यह हो सकता है, कि दूसरे राजा इस राज्य पर अपना शासन जमाने के वास्ते आपसमें युद्ध करेंगे, रक्त की नदियां बहेंगी, अनाथ, विधवायें उत्पन्न होंगी, अतः मैं चाहता हूं, कि आप प्रभु के प्यारे संत महात्मा हैं कोई उपाय मुझे बतलाएं, जिस के करने से मेरे घर संतान हो जावे, ताकि जोत के साथ जोत जग जावे, और जो संग्राम मेरी मृत्यु के पश्चात होना है वह न हो किन्तु राम राज्य बना रहे।

सन्त महात्मा! आपके घर सन्तान तो हो सकती है यदि उपाय करें तो बतलाऊं।

राजा : महाराज ! अवश्य कृपा करें, जो उपाय बतलाएं उसे पूर्ण करूंगा क्योंकि में राजा हूं। मेरे लिये क्या कठिन है।

सन्तमहात्मा : राजन ! तुम अपने राज्य में पहुंचकर एक मनुष्य का बलिदान करो, तब आप की पत्नी को गर्भ होगा, सन्तान होगी।

राजा रानी ने नतमस्तक होकर महात्मा के चरणों में नमस्कार किया और कर जोड़ करकहा महाराज ! ऐसा उपाय करना मेरे लिये क्या कठिन है। आप अब आशीर्वाद देवें, ताकि मेरे घर जोत जग जावे इतना कहकर वह आज्ञा लेकर चल पड़े। अब जब नियत स्थान पर राजा रानी पहुंचे, तो राजा शोकमय हो गया।

रानी : महाराज ! प्रभुदेव ने आज हमारी यात्रा को फलीभूत कर दिया है। अब तैयारी करें घर चलें, एक मनुष्य का बलिदान कर के अपनी गोद में बच्चा प्राप्त करें। इतना कहा तो क्या देखा, राजा शोकमय सा होरहा है। तो रानी बोली महाराज ! आप ऐसी अवस्था में क्यों हो गए है। यहां आते ही सन्तमहात्मा के दर्शन हो गये।

यह कहावत है—

आई दिली मुराद पाई

और निराशा में आशा उत्पन्न हो गई।

राजा—देवी किसी बात के करने से पूर्व उसकी नेकी और बदी भलाई, बुराई, सत्य, असत्य, लाभ, हानि, स्वार्थ, परमार्थ उपकार और अपकार को देखना पड़ता है। आप तो अपने स्वार्थ प्राप्ति के होने पर प्रसन्न हो रही हैं। परन्तु स्वार्थी का परिणाम कल्याणकारी नहीं होता, वह पशु समान होता है। पशु को अपने पराए की तमीज़ नहीं होती, वह केवल अपना सुख चाहता है। कहावत है —

चाहे कोई मरे या जीवे, सुथरा घोल पतासा पीवे।

और कहा सुनो। मैं तुझे सुनाऊं, कि मैं क्यों ऊदास ही गया हूं, और कहा शास्त्रों में शास्त्रकारों ने तथा वेदों में लिखा है, राजा प्रजा का पिता समान, और राजा की रानी प्रजा की माता के समान होती है। अब यदि हम किसी मनुष्य को पकड़ कर अपने स्वार्थ के कारण बलिदान करें तो राज्य में हाहाकार मच जावेगी। और जिस मनुष्य का वध करेंगे उसका परिवार तो तड़प तड़प कर पीटेगा। दुःखी की आह बड़ी दुःखदायक होती है। कवि ने क्या अच्छा लिखा है—

दर हकीकत वह दिल नहीं, जिसको न हो एहसासे दर्द।
दीदाए बेनूर है वह—चशय जो पुरनम नहीं।

कवि ने लिखा है कि दुःखी को देखकर जो अश्रु नही बहाता और तड़प नहीं उठता वह अन्धा हैं, परन्तु जो सुखी को दुःख पहुंचावे और फिर उसके हृदय पर जूं तक नहीं रींगे तो उसका भविष्य कैसा होगा, अब आप सोच लो।

रानी—राजा की बात को सुनकर जहां रानी पहले खुशी से फूली नहीं समाती थी, अब उदास हो गईं, तो राजा से कहा, अच्छा, आप का कथन ठीक है। अब यहां से घर चलें, तो तैयारी करके राज्य में पहुंच गये। दूसरे दिन नित्य कर्म से निवृत्त होकर राजा राज्ज दरबार में पहुंचा और मन्त्री मण्डल से यूं कहा —

राजा—मन्त्री मण्डल को संकेत करके कहा कि हम राजा रानी दोनों तीर्थ यात्रा को गये। वहां पहुंचकर दूसरे दिन एक सन्त महात्मा की कुटिया पर पहुंचकर हमने नतमस्तक हो उसे नमस्कार किया, और कर जोड़ प्रार्थना की, महाराज ! मेरी कोई सन्तान नहीं है, और मेरी अवस्था भी वृद्ध हो चुकी है। तो हो सकता है मेरी मृत्यु के पश्चात् राज्य को खाली देखकर दूसरे राजें अपना शासन जमाने अर्थ परस्पर लड़ेंगे, राज्य में युद्ध होने पर रक्त की नदियां बहेंगी, अनाथ विधवाएं उत्पन्न होंगी, अतः मैं चाहता हूं कि मेरे घर सन्तान हो जाये ताकि ज्योति से ज्योति जलती रहें। और उपद्रव न हो। तो सन्त महात्मा ने कहा, 'तुम्हारे यहां सन्तान हो सकती है, यदि तुम अपने राज्य में पहुंच कर एक मनुष्य का वलिदान करो। यह उपाय सुन कर हम बहुत प्रसन्न हुये, दिल में कहा, हमारी यात्रा आज भगवान् ने पूर्ण सफल कर दी, फिर सन्त महात्मा से आज्ञा लेकर अब यहां पहुंचे हैं। अब बात यह है कि यदि मैं किसी मनुष्य को पकड़वा कर वलिदान करा दूं; तो राज्य में हाहाकार मच जावेगी। और बलिदान करने वाले का सारा परिवार त्राहि मान् २ पुकारेगा।

हां छोटा मोटा आदमी यदि स्वार्थवश ऐसा कम कर लेवे तो उसका राज्य पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ेगा परन्तु मेरे जैसे का ऐसा कर्म करना तो मेरे वर्तमान तथा भावी जीवन के लिये दुःखदायक होगा, अब इस प्रश्न को हल करना है, कि कैसे उपाय पूर्ण किया जावे।

मुख्यमंत्री : महाराज ! हम मंत्रीमंडल एक ओर बैठकर इस प्रश्न पर विचार करते हैं, और परिणाम निकाल कर सेवा में उपस्थितहोते हैं।

राजा : तथास्तु ।

मन्त्रीमण्डल : प्रश्न को हल किया गया, राजा के पास पहुंच कर कहा महाराज ! प्रश्न हल हो गया है।

राजा : सुनाइये ! किस प्रकार से हल किया है।

मन्त्रीमण्डल : महाराज ! आजकल सारे राज्य में काल पड़ा हुआ है और अनेकों ऐसे परिवार हैं जिनकी सन्तानें बहुत हैं परन्तु भोगसाधन न होने के कारण अतिव्याकुल और वेचैन हैं। तो आप राज में मुनादी करादें कि जो आदमी अपना लड़का या भाई देगा उसके वदले में उसको पच्चीस हजार रुपया दिया जावेगा, तो महाराज ! कई लड़के वालेलड़के भाई लावेंगे, धन दिया सौदा लिया, फिर शोर सयापा क्यों होगा।

राजा : मन्त्री की बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ, और आदेश किया कि राज्य में मुनादी करा दो कि जो आदमी अपना लड़का या भाई देना चाहे उसको पच्चीस हजार रुपया बदले में दिया जावेगा परमोल लिए हुए व्यक्ति का बलिदान किया जावेगा।

सज्जनों : अब मुनादी हो गई एक आदमी, के चार बेटे थे। तीन बेटे तो प्रातः से सांयकाल तक परिश्रम, मजदूरी करके कमा लातेफिर घर में सारा परिवार मिलकर खाता। परन्तु चौथा बेटा, प्रभुभक्त,

देशसेवक था। अब तीनों ने जब मुनादी को सुना तो बड़ें प्रसन्न हुए घर में पहुंचकर माता-पिता से कहा कि आज हमारे भाग्य जाग गये हैं

माता-पिता : कैसे भाग्य जाग गये हैं।

लड़के : राजा ने मुनादी कराई है कि जो व्यक्ति अपना बेटा अथवा भाई राजा को देना चाहे, तो उसके बदले में पच्चीस हजार रुपया उसे मिलेगा और कहा, कि आप जानते है। और हर रोज देख रहे है कि हम तीनों भाई प्रातः से सांयकाल तक एड़ी से चोटी तक ज़ोरलगा कर जो कुछ कमाकर लाते है पेट भर खाना नसीब नहीं होता-हमारा चौथा भाई निकम्मा, (वेकार) दिन भर भक्ति करता है। या दूसरों की सेवा करता फिरता है। यह कमायें कहीं और खायें यहीं। मुफत में हम सब पर बोझ बना हुआ है। फोड़ा गन्दा काटा भला, इसी को दे दें। तो इसके बदले में पच्चीस हजार रुपया मिलेगा, हम मकान रहने का बना लेंगे। व्यापार करेंगे। आपका मान इज्जत बढ़ेगी और आप पेट भर रोटी खायेंगे और हम बी सुखी होंगे।

माता-पिता : आपस में यूं विचार किया कि भगवान ने चार लड़के दिये हैं। तीनों भाईयों की बात जचती है। यदि यह एक लड़का जो बेकार, निखटु है राजा को दे दिया जावे, तीन लड़के तो शेष हैं हमारे, अब तीनों लड़कों को बुलाकर कहा अच्छा। इस बेकार भाई को जाकर राजा को दे दो। पच्चीस हजार रुपया लाकर जैसी तुम्हारी सम्मति है वैसे करो हम सहमत हैं।

तीनौं भाई : अब चौथे भाई को लेकर राजा के पास पहुंचे, नमस्कार की, और कहा महाराज ! आप इस हमारे भाई को ले लो हमें पच्चीस हज़ार रुपया दे दो।

राजा—मंत्री को आदेश किया, कि पच्चीस हज़ार रुपया इनको

दिला दो और लड़के को हमारे महल पर पहुंचाओ, अब मन्त्री ने कोष का चैक बना दिया। लड़के को साथ लेकर महल में पहुंचा।

तीनों भाई—मन्त्री जी से पच्चीस हज़ार रुपये का चैक लेकर खज़ाना से कोष धन लेकर घर पहुंच गये।

अब राजा रानी दोनों खुशी से फूले नहीं समाते, तो लड़के से यूं कहा, कि तुम्हारे माता पिता, भाइयों ने तेरा मूल्य पच्चीस (हज़ार) सहस्र रुपयें लेकर हमें दे दिया है। अब हमने तुम्हारा बलिदान करना है। तुम्हारी जो इच्छा खाने पीने की है। कहो, पहिले तुम्हें खिला पिला दें। पश्चात् हम तुम्हें बलि चढ़ायें।

लड़का—महाराज! मेरी खान पीन की कोई इच्छा नहीं है। केवल एक इच्छा है। वह यह है कि आज मेरा बलिदान न करें। कल ही कर लेना।

रानी—राजा से यूं बोली कोई बात नहीं, जहां और समय व्यतीत हो गया है, आज का दिन भी व्यतीत होने दो। कल ही बलिदान कर लेंगे। इसकी इच्छा भी पूरी हो जावे। अब लड़के को कह दिया गया। अच्छा कल ही तुम्हारा बलिदान करेंगे।

बालक—दूसरे दिन प्रातः चार बजे अपने नियम अनुसार जागा—प्रभु भजन में बैठ गया। भजन से निवृत्त होकर बाहर गया। एक झोली मिट्टी की भर कर अन्दर लाकर रखी, फिर दूसरी झोली भर लाया, उसको पृथक रखा। इसी प्रकार तीसरी, चौथी, पांचवी मिट्टी की ढेरी को लाकर पृथक २ तरतीब से रखीं; अब एक मिट्टी की ढेरी के सम्मुख आंख मूंद कर बैठा, थोड़ी देर के पश्चात् आंख खोली, मिट्टी की ढेरी को झोली में उठा कर बाहर फैंका, अब दूसरी ढेरी के निकट आंख मूंद कर थोड़ी देर बैठा, फिर उसे भी उठा कर

बाहर फेंका, इसी प्रकार तीसरी, चौथी ढेरी को भी बाहर फेंका, परन्तु अब पांचवीं ढेरी पर अग्नि जला कर आंख मूंद कर बैठ गया। राजा, रानी प्रातःकाल से बालक की प्रभु भक्ति और पांच ढेरी मिट्टी का लाना, फिर उसके निकट बारी बारी से बैठना, पश्चात् चार ढेरी का फेंकना और पांचवीं ढेरी पर अग्नि जला कर आंख मूंद कर मस्त होकर बैठ जाना, यह सब कुछ देखते रहे। अब बालक खूब मस्ती से प्रभु शरण में बैठा हुआ है।

राजा रानी, बालक की प्रतीक्षा में बैठे हैं। कि यह उठे तो इसका बलिदान करें। और अपनी दिली मुराद पायें।

सज्जनों—एक मुसलमान, गवर्नर का रीडर है, वह दफतर में कार्य कर रहा है। उसका समय नमाज़ का आ गया है, तो वह तत्काल गवर्नर को यह कह कर कि मेरी नमाज़ का समय है, मैं जाता हूं। तो गवर्नर की ताकत नहीं जो अपने रीडर को यह कह सके, कि यह समय दफतर के कार्य का है। नमाज़ पढ़ने मत जाओ, और वह मुसलमान कह कर चला जावेगा।

मान लो—एक मुसलमान को किसी मुकद्दमे से फांसी का दण्ड मिला है उसे चार बजे फांसी पर लटकाने का आदेश हो। यदि वह उस फांसी के समय परमात्मा की शरण में प्रार्थना अर्थ बैठ जाता है, तो कारागार के सुप्रिटेंडन्ट को ताकत नहीं कि उस प्रभु आश्रित को उठा सकें, जब तक स्वयं वह उसकी शरण से पृथक न हो।

प्यारे—यह क्यों इसलिये कि गवर्नमैंट जानती है कि यह लोग नियम और असूल के पक्के हैं। पर हम लोग भगवान् को क्या जानें हम तो मुंह से उसकी महिमा गाने वाले, न हमारा कोई उठने का समय न उसकी भक्ति का समय नियत है, किन्तु संसार को सन्मार्ग पर चलाने के ठेकेदार हैं। पर स्वयं गुमराह। स्वार्थी को तो अपना

स्वार्थ चाहिये, चाहे कोई मरे या जीवे, उसे दूसरे का दुःख दर्द थोड़ा होता है।

अब राजा रानी ने बहुत प्रतीक्षा करने के पश्चात बालक को बेदार किया; तो क्या देखा बालक के मस्तक पर तेज भर्गः (ज्योति) हैं और बालक प्रसन्नता से फूला नहीं समाता, तो राजा रानी ने बालक से पूछा, हमें यह बतलाओ कि तुम प्रातः चार बजे से जागे हो हम सब क्रिया आपकी देखते रहे है। तुम पांच ढेरी मिट्टी को बारी २ से अन्दर लाये। फिर एक २ के निकट बैठ कर बारी २ से चार ढेरा को बाहर फेंक दिया, और पांचवों ढेरी पर अग्नि जला कर बैठ गया। इसका प्रयोजन क्या है।

दूसरा—हम तो दूसरे मृतक प्राणीकी अर्थी को भी देखकर भयभीत हो जाते हैं, परन्तु इस समय जब कि तुमको ज्ञात है कि हम ने तुम्हारा बलिदान आज करना है। मृत्यु तुम्हारे सर पर झूल रही है। थोड़े मिन्ट के पश्चात तुम यहां नहीं होगे, पर तुम हंस रहे हो, और इतने निर्भय हो रहे हो। इन दोनों बातों का पहले उत्तर दो। फिर तुम्हारा बलिदान हम करेंगे।

बालक—राजा की बात सुनकर बालक ने खूब हंसना आरम्भ कर दिया, फिर कहा सुनें महाराज! आपके प्रश्नों का उत्तर देता हूं, और कहा—

महाराज! मैं आज भी न हंसूं तो और कब हंसूंगा, क्योंकि आज मैं बड़ा भाग्यवान हूं। आप प्रभु की रचना को देखें। उसकी हर एक वस्तु संसार का उपकार कर रही है। वृक्षों तक को देखो, जो जड़ पदार्थ हैं। आम, अनार, खजूर, केला इत्यादि जब यह फल लाते हैं, तो क्या वह वृक्ष स्वयं खाते हैं। नहीं, नहीं, किन्तु सारे का सारा फल संसार

के हित अर्थ अर्पण कर देते हैं। और वह हम से विष ले करके अमृत देते हैं, कैसे ! हम कार्बन गैस देते है। वह हमें औक्सीजन प्रदान करते हैं वह दुर्गुण लेकर हमें सदगुण प्रदान करते हैं, और कीड़ी, मकौड़ी, चूहा, बिच्छु साँप, हमारे घरों में यदि आ जाते हैं। तो क्या हमें दुख देने के लिए आते हैं। कदापि नहीं, यदि हमारे घरों में मिठास नपड़ो हो तो क्या कीड़ी आवेगी, घर में अंधेरा और मैल कुचैल न हो साफ सुथरा और रोशनी से भरपूर हो तो क्या चूहा सांप इत्यादि कभी आ सकते हैं। कदापि नहीं, जब तक उनके खाने के साधन घर में न होंगे वह कदापि नहीं आयेंगे। किन्तु उनका आना हमें बेदार करना है। बजाये इसके हम अपने दुर्गुण का त्याग करें उल्टा उनको मारते हैं।

और कहा, जड़ वस्तु भी संसार के हित अर्थ अपने को अर्पण कर देती है। मैं तो चेतन हूं। मेरा जीवन ब्यर्थ तो नहीं जा रहा, और ऐसे वैसे के काम तो नहीं आ रहा, जिसमें मुझे दुःख हो। किन्तु राज के हित अर्थ जिससे प्रजा को भी सुख हो।

दूसरी बात : मेरा पांच ढेरी मिट्टी को तरतीब से उठाकर लाना फिर एक एक के निकट, बैठकर तरतीब से बाहर चार ढेरी को फंक, और पांचवी ढेरी पर आग जला कर बैठने का उद्देश्य यह था।

सुनिए : पहली ढेरी हमारे शास्त्रों, वेदों धर्म ग्रन्थों में लिखा हुआ है। और ऐसा ही हम करते आये हैं कि जब २ ममुष्य पर संकट या विपत्ति आती है तो भाई, भाई का साथ दिया करते हैं हम नित्यप्रति सन्ध्या करते हैं। उस समय प्रभु से यह प्रार्थना करते हैं—

"ओं बाहूभ्यां यशो बलम्।"

अर्थात : हें प्रभु ! हमारी भुजाओं में वह बल दो जिससे हम यश कमायें, प्यारे ! भाई भुजायें होती हैं। यदि भुजाएं कट जाएं तो सारा

शरीर निकम्मा बेकार है। कैसे सुनिए —

एक मनुष्य जिसकी भुजाएं कटी हुई थीं वह बाज़ार में लेटापड़ा था उससे पूछा गया कि प्यारे ! तुम राटी कैसे खाते हो, वह बोला आते जाते भगवत प्यारे मेरी छाती पर पैसे रख जाते हैं, कोई पैसा कोई दो पैसे इत्यादि। फिर आते जाते से याचना लरता हूं रोटी ला दो, वह छाती से पैसे उठा लेता है; और जाकर रोटी लाता और टुकड़ा २ मेरे मुख में डाल जाता है।

फिर पूछा, तुम को प्यास लगे तो पानी कैसे पीते हो ?

दु:खी...महाराज ! आते जाते से याचना करता हूं। वह पैसे छाती से उठा लेता है, सामने घड़ा रखा हैं, वह पानी भर कर रख जाता है। जब मुझे प्यास लगती है तो टांग से उसे झुकाता हूं, टेढ़ा सर करके पानी पो लेता हूं। प्राय: पानी बह जाता है, कुछ मेरे मुख मैं पड़ जाता है।

फिर पूछा, तुम्हें टट्टी आजावे, तो तुम्हारे पाजामे का नाला कौन खीलता है ?

दु:खी—महाराज ! एक बहिन है, दौड़ता हुआ उसके पास जात हूं, वह नाला खील देती है।

फिर पूछा, पाखाने के पश्चात् जल से कैसे सफाई करता है।

दु:खी—अब जार २ रो पड़ा, और बोला, वही बहिन जी अपने हाथों से साफ करती है। पाजामा पहनाती और नाला बांधती है।

फिर पूछा, मुंह से, नाक से, आंख से, रेशा मैला निकले या मक्खी, मच्छर तुमको सताये, तो कैसे साफ करते और उसको कैसे उड़ाते हो ?

दु:खी—बेचारा अब क्या उत्तर देवे, वह ज़ार २ रोकर बोला, पुकारता हूं उस मालिक को, और मांगता, उसकी दया (करुणा)

और किसको पुकारूं, जब उसे पुकारता हूं, तो उसके प्यारे दौड़कर मेरी अपने हाथों सवाई और रक्षा करते हैं। और कहा धन्यवाद करता हूं उस मालिक का, जो कि अपना नाम दान तो देता है।

बालक ने कहा—भगवान् राम, भरत ने सांसारिक राज्य को फुटबाल की भांति एक दूसरे की ओर फैंका था आज वह जीवित हैं और जीवित रहेंगे। और कहा महाराज ! पहली ढेरी मेरे भाईयों की थी, मैंने देखा है उन्होंने मेरा साथ नहीं दिया उसे उठाकर बाहर फैंक दिया। ताकि भाईयों से छुट्टी पाई।

दूसरी ढेरी जब भाई-भाई परस्पर लड़ पड़ें, तो पुकार की जाती है माता पिता को, वह फिर मेल मिलाते हैं। परन्तु मैंनेदेखा, कि मेरे माता पिता भी स्वार्थ वश हो गये हैं। मेरा साथ न दिया, यह दूसरी ढेरी माता पिता के नाम की थी। उसे भी बाहर फैंका, उनसे भी छुट्टी पाई। तीसरी ढेरी जब भाई भाई का साथ न दे माता पिता भी दुर दुर करदें, तो फिर पुकार को जाती है पंचायत से, यह तीसरी ढेरी पंचायत की थी, मैं ने देखा, कि पंचायत ने भी आप के भय से मेंरा साथ नहीं दिया। उसे भो बाहर फैंका इन से भो छुट्टी पाई। चोथों ढेरी—जब भाई-भाई का साथ न दे, माता पिता भी हाथ उठा लेवें और पंचायत भी भय से न्याय न करे, तो फिर पुकार की जाती है राजा के द्वार पर। सो तूस्वयं स्वार्थ में अन्धा हुआ, हुआ है। चौथी ढेरी आपकी थी, उसे बाहर फैंका, शेंष पांचवीं ढेरी, जब भाई, भाई का साथ न दे, माता पिता भी हाथ उठा लेवें, पंचायत भी न्याय न करे, और राजा भी स्वार्थ वश हो जावे, तो अब दोनों हाथों को अकाश की ओर करके बालक ने गर्ज कर वेद मन्त्र पढ़ा —

ओ३म् अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये ।

निहोता सत्सि बर्हिष ॥

अब जो पूकार वालक ने ललंकार कर वेद मन्त्र द्वारा परमात्म से की, तो रानी पुकार सुनते ही ज़ार ज़ार रो पड़ी और राजा भी भयभीत होकर कांपने लगा, तो रानी ने राजा से कहा, महाराज ! पता नहीं, इस बालक के वलिदान करने से मुझे गर्भ हो या न हो यदि गर्भ हो भी ज़ावे, तो लड़का उत्पन्न हो या न हो, यदि लड़का हो भी जावे, तो ऐसा योग्य वालक वने या न बने, वस मैं तो इस बने बनाये बालक को अपना पुत्र बनाती हूं। अब प्रेमके आंसू आंखों में भर आये, रानी ने बालक को पकड़ कर छाती से लगा लिया, और कहा आज से तू मेरा बेटा है अव सारे राज्य में वधाई-वधाई-वधाई की गूंज हो गई। कवि कहता है—

जाको राखे साईयां मार न सके कोय।
बाल न बांका कर सके चाहे जग भी वैरी होय ॥

अब सारी राज्य प्रजा प्रभु की अद्भुत लीला को देखकर चकित है। और कह रही है, वाह प्रभु तेरी लीला, मारने वालो को तूने मारा दिया, प्रल्हाद भक्त की भांति अपने प्यारे भक्त का गुप्त रूप से, रक्षक वन गया, और राज्य सिंहासन का अधिकारी बना दिया।

सन्त तुलसी दास लिखते हैं—

ईश्वर नाम अनमोल है, बिन दामन बिकाये।
तुलसी अचरज देखिये, गाहक कोई न आये ॥
तुलसी पिछले पाप से, हरि नाम न सुहाये।
जैसे ज्वर के वेग से, भूख विदा हो जाये ॥

मौलाना रूम ने कहा है—

दौलते जावेद बाशाद वंदगी, बंदगी कुन, वंदगी कुन बंदगी।

परमात्मा की भक्ति नित्य रहने वाली सम्पत्ति है अतः ए मनुष्य तू उसकी भक्ति कर-भक्ति।

गर तू ख्वाई हुरीओ बख्शन्दगी—वंदगी कुन बंदगी कुन वंदगी

यदि तू आवागमन से छूटना चाहता है मुक्ति चाहता है, और परमात्मा की अपने ऊपर दया चाहता है तो तू उसकी भक्ति कर भक्ति कर-भक्ति।

पाठकगण—अब सोचो, विचारो संकट काल में जितने भी मित्र संबंधी भाई, माता, पिता, पंचायत, राजा जो भी थे, सभी ने हाथों उठा लिया, किन्तु उसका बलिदान करने को तैयार हुए, वह निराश्रित का आश्रय, निमानों की मान, नितानों की तान, अनओटों की ओट निर्बल के सहायक ने किस प्रकार अपने आश्रित प्यारे की गुप्त रूप से रक्षा की, किन्तु यहां तक ही नहीं बलिदान करने वाले राजा रानी को बालक के चरणों में झुका, और राज्य का अधिकारी बना दिया, अब मैं आप बीती सुनाता हूं। सुनिये—

आप बीती घटनायें नं० १

एक समय मैं आर्य अनाथालय मुलतान का सुप्रिंटेंडैन्ट था। एक दिन मेरे पास एक प्रेमी आये, मुझसे पूछा, महाराज! एक छोटा सा बालक है। क्या आप उसको अनाथालय में प्रविष्ट कर लेंगे। मैंने कहा मित्र! एक माता आज पुत्र उत्पन्न करे, उत्पन्न करने के पश्चात तत्काल उसकी मृत्यु हो जावे, और उसका कोई सम्बन्धी पालन पोषण करने वाला न हो तो दयानन्द का अनाथालय ऐसे बच्चों तक को भी लेनेको तैयार है।

मित्र : महाराज ! बात यूं है, कि एक देवी के पति की मृत्यु हो गई थी,, देवी गर्भवती थी, उसे चार मास का गर्भ था जीविका का साधन न होने के कारण देवी ने दूसरा विवाह कर लिया, दश मास पश्चात देवी को एक पुत्र उत्पन्न हुआ ग्यारह दिन के पश्चात देवीं स्वर्गवास हो गई, तो बालक के पिता ने बालक को एक मुसलमान देवी को पालनअर्थ दे दिया अब वह बालक दो वर्ष काहै। रोटी खाता है। तो मैंने बालक के पिता से कहा है। और ग्राम के अन्य लोगों ने भी उसे कहा है, कि अब तेरा बच्चा दूध पीना छोड़ चुका है। रोटी खाता है। उसे अपने घर ले आओ, तो वह कहता है, मेरा अपनापुत्र थोड़ा है। यह तो मां के गर्भमें मेरे विवाह से पहले ही था मैं इसे पूंजी-पत्ती जायदाद का अधिकारी कैसे बना सकता हूं। यह तो लावारिस है। मेरा इससे क्या सम्बन्ध है। हमने उसको बहुत समझाया, और कहा यदि इसकी माता जीवित होती तो इसे तू अपना पुत्र बनाता या न परन्तु वह किसी की भी नही सुनता, अब मैं और ग्राम वाले चाहते हैं कि इस बालक को अनाथालय में प्रविष्ट कराया जावे ताकि गाय भक्षक की बजाय गाय रक्षक बने। क्या आप यह लड़का अनाथा-लय में ले लेंगे।

मैं : भाई साहब ! मैंने तो पहले आपको सारी बात प्रकट करके कह दिया है कि यदि ताजा उतपन्न बच्चा जिसका कोई रक्षक न हो तो दयानन्द ऐसे बालकों तक का सच्चा माता पिता बनकर पालन पोषण, रक्षण करने को प्रत्येक समय सावधान है। आप उस बालक और उसके पिता को जो उसे लावारिस कहता है, साथ२ लायें वह लिखकर हमें दे हम उस बालक को ले लेंगे।

वह मुझसे आज्ञा लेकर चले गये। कुछ दिनों के पश्चात उस

बालक तथा उसके पिता को साथ लेकर मेरे पास आ गये और मुझे बालक के पिता ने यह लिख दिया कि मैंने इस बालक की माता से जब विवाह किया था, तो इसकी माता को चार मास का गर्भ था। १० मास बीतने पर यह बालक उत्पन्न हुआ, ग्यारह दिन बीतने पर इस की माता स्वर्गवास हो गई। तो मैंने इस बालक को एक मुसलमान देवी को पालन पोषण अर्थ दे दिया था, यह बालक मेरा अपना नहीं है। पहले गर्भ का ही है। यह लावारिस है। मैं आपके अनाथालय में इसको देता हूं। मेरा इस बालक के साथ न अब कोई सम्बन्ध है न आगे होगा, सर्वअधिकार अनाथालय के होंगे। मैंने प्रार्थना पत्र बालक के पिता से लेकर मैनेजर साहिब अनाथालय की सेवा में दाखले की स्वीकृति के लिये भेज दिया, प्रार्थना पत्र पहुंचने पर वह स्वयं आ गये बालक को देखा, तो मुझ से कहा इसे अनाथालय में प्रविष्ट नहीं किया जा सकता, यह बहुत छोटा बच्चा हैं। इस की पालना पोषणा बिना देवी के कैसे हो सकती है। यहां अनाथालय में कोई देवी नहीं। जो इसकी रक्षा, पालन, पोषण करे।

मैं : मैनेजर साहिब ! यदि मेरी धर्मपत्नी की मृत्यु हो जाती ऐसा छोटा बच्चा पीछे छोड़ जाती। तो क्या मैं उसकी पालना, पोषणा न करके उसे फ़ैंक देता। नहीं कदाचित नहीं। और में ने कहा, इस समय अनाथालय में ६० साठ बालक रहते हैं। उनकी पालना आप या में कर रहा हूं। जिस ने उसे उत्पन्न किया है, वह अपनी आप पालना, पोषणा करेगा, हमें क्या सामर्थ है कि इस की रक्षा कर सकें। मेरी इस बात पर मैनेजर साहिब जो अच्छे भद्र पुरुष और अच्छे कुलवासी थे, रिटायर्ड आई. ए. एस. थे हंस कर बोले, आपकी इच्छा। इसकी पालना, पोषणा का कष्ट आप को होगा आप की इच्छा है तो ले लो, तो मैं ने बालक ले लिया।

सज्जनो—किसी को दुःख देना आसान, दुःख लेना कठिन प्राण लेना आसान, प्राण देना कठिन। मारना आसान, मार खाना कठिन। कहना आसान, करना कठिन। प्यारे! आसान की इच्छातो सभी करते है। पर आनन्द तो तब आता है जब कठिन को हल किया जावे। वर्तमान काल में भारत में सहस्रों, लाखों, करोड़ों को सम्पत्ति रखने वाले अनेकों मनुष्य होंगे, क्या कोई इन में से माई का लाल है, जो एक अनाथ बालक को ही अपने यहां रखकर पुत्र के समान पालन, पोषण करे। नहीं-नहीं, हां यदि कोई भाग्यवान ऐसा निकल भी आवे, तो दुर्लभ। आह! धन्य हो! ऋषि दयानन्द महाराज, तू ने अनाथ विधवाओं, निर्बलों दीन दुखियों गायों की पुकार को सुना, अनाथालय, विधबा आश्रम, गौशालाएं इत्यादि खोलीं एक अनाथ नहीं हज़ारों की संख्या में अनाथ बच्चों का तेरे नाम पर पालन, पोषण किया जा रहा है, सचमुच तू अनाथों का नाथ बन गया तेरे आश्रय में आये हुये अनेकों बालक अनाथ, गाय भक्षक की बजाय गाय रक्षक बनकर देश की सेवा कर रहे हैं।

सज्जनो—लेना आसान, देना कठिन, बालक ले लिया गया, अब कुछ दिनों के पश्चात बालक को टट्टी का रोग हो गया। बैठे टट्टी कर दे, खड़े टट्टी करदे। चलते, फिरते, सोते, जागते, खाते पीते टट्टी कर दे। परन्तु कहे नहीं कि मुझे टट्टी आई है अब यह कष्ट कौन सहन करे जो बार २ कपड़े उतारे, धोये, बालक को सुथरा करे। निःसन्देह मैं भी बालक को लेकर बालक की ऐसी अवस्था को देख कर चिन्तित हो गया, परन्तु प्रभु से प्रार्थना की, कि हे नाथ! बालक को अब निरोगता प्रदान करो। अब मैं नवांशहर मुलतान जो अनाथालय से लगभग आधा मील कीं दूरी पर था, वहां गया एक

विधवा वृद्ध माता से याचना की कि आप इस बालक को लेकर पालना, पोषणा करो। इस बालक तथा आप के खाने की सामग्री और पहनने के वस्त्र आदि के अतिरिक्त पांच रुपये मासिक भी साथ दूंगा। देवी ने सहर्ष स्वीकार किया, बालक उसे दे दिया गया, और खान पान की सामग्री भी।

अब तीसरे दिन चार बजे सायंकाल वह देवी बालक को नहला धुला कर कपड़े पहना कर अनाथालय में लाई। तो मैंने उस देवी से कहा माता जी! धन्य हो तुम 'नाले पुण्य ते नाले फलियां' तू बड़ी भाग्यवान माता है। अपना जन्म सफल कर रही है।

देवी—महाराज! यह ले अपना बालक, मुझे ऐसे पुण्य, फल की अवश्यकता नहीं है। न मुझे जन्म सफल करने की आवश्यकता है। मैं तो इस बालक से तंग आ गई। यह बैठे, खड़े, चलते, फिरते, खाते, पीते, सोते टट्टी ही करता रहता हैं। कितनी कड़ाके की सर्दी पड़ रही हैं। दिन भर इसके कपड़ें धोते इसको साफ करते २ मेरा तो नाक में दद आगया है। मैं ऐसे स्वर्ग लोक से वाज़ आई, ले अपना बच्चा और यह कपड़े इत्यादि, ईस के सम्भाल लें।

मैं—माता जी! यदि आपका अपना पेट जाया बच्चा होता, और उसको भी ऐसा ही रोग होता, तो क्या उसे फेंक देती। या उसकी सहर्ष रात दिन सेवा करती और प्राण तक निछावर करती।

माता—महाराज! भगवान् ऐसे बच्चे शत्रु के घर भी न उत्पन्न करें। यह ले अपना बच्चा, मैं और कुछ सुनना नहीं चाहती, यह कह कर बच्चा को छोड़ कर चली गई।

पाठकगण—एक माता दस बच्चे अपने पेट से स्वयं उत्पन्न करे, तो उनके लालन पालन पोषण में रात दिन लगा देगी—कभी किसी से नहीं कहेगी—कि मुझे दुःख होता है। परन्तु पर-पुत्र एक भी पालन

पोषण के लिये आजावे, तो नहीं पालेगा—यह तो पशु भी अपने बच्चों की पालना पोषणा करते हैं कोई बहादुरी नहीं। वीरता तो उसी मैं है जो दूसरों की पानना पोषणा अपनी सन्तान के अनुकूल करे पर ऐसा होना तो दुर्लभ है। हां गौ माता ऐसा करती है। अपनी सन्तान को दूध पलाती है। और दूसरों को दूध भी पिलाती हैं। जिस को माता नाम से हिन्दू ज़ाति पुकारती हैं।

सज्जनों—देवी बच्चा छोड़ कर चली गई। इस बच्चे की चिकित्सा की गई। टट्टी का रोग तो हट गया। परन्तु पेशाब की बन्दश हो गई। डाक्टर के. के. महता असिस्टेंट सर्जन ने चिकित्सा की, बच्चे को आराम आगया। अब मुलतान नगर चूना बन से एक बूढ़ा और बुढ़िया, पति, पत्नी, मेरे पास आये। मुझ से यूं कहा—महाराज ! हमारी कोई सन्तान नहीं है। हमारे पास तीन हज़ार रुपया कैश है और एक मकान है। हमें ज्ञात हुआ है 'कि एक छोटा सा बालक लावारिस आपके यहां आया हुआ है। वह हमको दे देवें। हम उसको पालेंगे। उसको अपना पुत्र बनायेंगे। मैंने उनसे कहा, कि आप एक प्रार्थना पत्र लिखवा कर मुझे दे देवें। हम सभा बैठा कर निश्चय होने पर लड़का आपको दे देवेंगे। और वह प्रार्थना पत्र लिखवा कर दे गये। अब वह बुढ़िया, प्रति दिन अनाथालय में आकर बच्चों को मिठाई फल, फूल, खिला जावे। और प्यार कर जावे।

कुछ दिन पश्चात् रियासत भावलपुर से एक पति, पत्नी आये। कर जोड़ मुझ से कहा, कि महाराज ! हमारी कोई सन्तान नहीं है। हमारा दस हज़ार रुपया बैंक में जमा है। और चार मकान हैं। हमारा और कोई वालीवारिस नहीं है। हमको ज्ञात हुआ है कि आप के पास एक छोटा सा बालक लावारिस आया हुआ है। वह हमको

दे दो। हम उसे अपना पुत्र बनायेंगे। मैंने उनसे कहा, आप एक प्रार्थना पत्र लिख कर दे जावें, अनाथालय की सभा बैठेगी जो निर्णय होगा, आपको सूचना देंगे। वह पति-पत्नी अब दोनों नगर में चले गये। प्रार्थना पत्र लिखवा कर और नगर के एक मान्य व्यक्ति को भी साथ लाये। उस माननीय व्यक्ति को इस लिये साथ लाये कि वह उनकी ओर से मुझे सिफारिश करे। ताकि बच्चा हम को मिल जावे।

तो मैंने कहा—भाई! आप ऐसे भद्रपुरुष को कष्ट देकर क्यों साथ लाए हो। धन्य हैं आप लोग, जो पर-पुत्र को अपनी धन सम्पत्ति देकर अपना पुत्र बनायेंगे। मैंने इसमें क्या करना है। उल्टा इस बालक के चले जाने से मुझे सुविधा होगी—साठ बच्चों में से एक चला जावेगा तो उन्सठ की सेवा करनी पड़ेगी—आप अब चले जावें, अनाथालय की सभा बैठेगी तो आपको सूचना दे दूंगा।

कुछ दिन पश्चात् एक आर्य समाज के प्रधान आये उन्होंने मुझसे कहा, महाराज! मुझे २० वर्ष विवाह किये हो गये हैं। किंतु मेरे घर कोई सन्तान नहीं हुई, बहुत चिकित्सायें भी करवाईं, डाक्टरों, वैद्यों आदि को दिखाया, किन्तु अब आशा नहीं रही कि संतान हो—दूसरा विवाह करने को आत्मा नहीं मानती—अब चाहता हूं। कोई अनजान छोटा सा बालक लावारिस मिलजावे। उसको पुत्र बना लूं यदि आप के अनाथालय में कोई हो तो दिखलाये। मैंने कहा, एक बालक छोटा सा लावारिस तो वह नहीं, किन्तु ऋषि दयानन्द महाराज का पुत्र है। वह चाहिये तो बुलाकर दिखलाऊं।

प्रधान—प्रसन्न चित्त होकर कहा, वह दिखलाइये, अब बच्चे को लाया गया। प्रधान जी देख कर संतुष्ट हो गये। और मुझे कहा

मुझे बालक यह दे दें। मैंने कहा आप प्रार्थना पत्र लिख कर दे जावें, सभा जो फैसला करेगी। आपको सूचित करदूंगा। उन्होंने तत्काल प्रार्थना पत्र लिखा, इसमें यह लिखा कि मुझे विवाह किये हुये २०वर्ष हों गये हैं, किन्तु कोई संतान नहीं हुई। दूसरा विवाह करना मैं अनुचित समझता हूं। मैंने इस बालक (ऋषि दयानन्द के पुत्र) को देखा है, मुझे यह बालत दिया जावे। मैं इसे पुत्र बनाना चाहता हूं। मेरी सांपत्ति चालीस हज़ार रुपये की है।

अब अनाथालय की सभा बैठ गई। निश्चय हुआ कि यह बालक प्रधान जी को दिया जावे। बालक के भावी जीवन को सफल बनाने के सर्व साधन प्रधान जो के यहां हैं। और राज्य नियम अनुसार २२) रुपये का स्टाम्प लेकर प्रधान जी की जन्म-भूमि में जाकर बालक के नाम रजिस्ट्री कराया जावे। और वहां पर बालक को प्रधान जी की गोद में दिया जावे।

अब मैं प्रधान जी के साथ बालक को लेकर बस मोटर पर सवार होकर चल पड़ा। जब बस मोटर नगर के अड्डे पर पहुंची, तो दैव योग से प्रधान जी की बहन आ गई, बालक को भाई के यहां देखकर उसे तत्काल अपनी गोद में लेलिया और दौड़ती हुई घर पहुंच कर बालक पर रंग डाल दिया। सारे परिवार में खुशियां मनाने लगे। अब बालक का पांव भूमि पर नहीं पड़ता, एक से दूसरा, तीसरा लेकर प्यार कर रहा हैं। और लंगर घर में जारी कर दिया गया। गरीब गुर्बा भोजन कर रहें हैं। बधाई २ हो रही है। अब दयानन्द का पुत्र घर पहुंचते ही लंगर चला रहा है। दूसरे रोज़ २२) रुपया का स्टाम्प लिया गया और उसे लिखवा कर परिवार ने सहर्ष हस्ताक्षर किये, रजिस्ट्री कराया गया, तीसरे दिन एक विशेष यज्ञ किया गया।

नगर की अधिकांश जनता एकत्रित हुई, यज्ञ के पश्चात् प्रार्थना उपदेश किया गया। अन्त में प्रधान जी ने उपस्थित जनता से कहा कि मुझे मालूम हुआ है कि कुछ मेरे प्रेमी इस मेरे कार्य को देखकर संतुष्ट नहीं हुये। वह क्यों, इसलिये कि उनका विचार यह है कि प्रधान जी अच्छे बुद्धिमान् होते हुये यह कार्य करके वड़ी भूल कर रहे हैं। वह क्या भूल है। यह कि क्या ही अच्छा होता, अपने चचा के पुत्र को अपना पुत्र वना लेते, या भांजे को ले लेते। यह दूसरी कुल के बालक को लेकर ठीक नहीं कर रहे। अब मैं उन प्रेमी मित्रों को उत्तर देता हूं कि मैं आपके विचार सुनकर भी ऐसा क्यों कर रहा हूं। सुनिये, यदि मैं आपके विचारानुसार चाचा के पुत्र अथवा भांजे को पुत्र वनाता, तो पहली वात यह कि वह न तो मुझे पिता बुलाता न मेरी धर्मपत्नी को माता, घर में रहते हुए यदि वह कोई अनुचित कार्य करता और उसे धमकी या कुछ डांट मिलती तो वह भागकर अपने माता-पिता के हां चला जाता। अब इस बालक को यूं पुत्र बनाया गया है। अव्वल तो यह अनजान नन्हा सा बालक ही है—यह आरंभ से हमें पिता माता पुकारेगा, जिस ओर इसे हम मोड़ेंगें उसी ओर मुड़ जावेगा—तीसरी बात यह कि इस बालक को माता पिता की आवश्यकता थी। हमको पुत्र की आवश्यकता थी—भगवन् ने इस बालक को माता-पिता मिला दिया है। हमको पुत्र दे दिया है। यह तो बिछड़ा हुआ ही भगवान् ने मेल मिलाया है। यह वचन प्रधान जी के सुनकर सभी चकित रह गये। और शान्त चित हो गये। अब वह ग्रहस्थी है। हृष्ट पुष्ट है सर्व ऋषि कृत ग्रंथ इसे पढ़ाये गये हैं। वास्तव में ऋषि दयानन्द महाराज का पुत्र बनकर अपने माता-पिता पिता तथा आर्य्य समाज की लग्न से सेवा कर रहा है

प्यारे—अब सोचो ग्राम के पिता ने लावारिस कर दिया। ग्राम वालों की जियादा से जियादा दो तीन हज़ार की पूंजी होगी—पर धन्य हो प्रभु तू क्या से क्या कर देता है। तू सचमुच अनाथों का नाथ है। किस प्रकार से लावारिस बच्चे को तूने वारिस बनाया—इन्सान भूला हुआ है उस तेरी सत्ता को देखते हुये भी। तू जगत जननी माता है। तू गरीबों अनाथों, निर्बलों की सदैव सुध बुध लेता है। और उनकी तू सुनती है। कवि कहता है।

चुपके २ जो सदा दिल से किया करता है।
उसकी निश्चय यह मंजूर किया करता है॥
बार गाहे ईश से, मायूस न होना चाहिये।
तू तो इन्सान है, वही च्यून्टी की सुना करता है॥

कर्म फिरावे जीव को, कर्मों को करतार।
दादू उस करतार को, कोई न फेरन हार॥

आप बीती मं २

मेरा लड़का गुरुकुल ज्वालापुर, हरिद्वार में पढ़ता था, सर्द ऋतु जब आई, तो मुझे लड़के ने पत्र लिखा कि यहां पर सर्दी अधिक पड़ने लगी है, रज़ाई नहीं है, अभी आश्रम से भी कोई प्रबन्ध नहीं हुआ अतः रज़ाई शीघ्र भेजें,, जब मैंने पत्र को पढ़ा तो सब कार्य क्रम भूल गया, तत्काल अपनी रज़ाई उठाई, उसे अच्छी प्रकार से बन्द किया, जब तक स्टेशन पर जाकर उसे बुक न करा दिया० तब तक मैंनें भोजन न खाया, दूसरे दिन प्रातः काल जब मैं भजन में

बैठा था तो मेरे सम्मुख यह दृश्य आया, कि तुम्हारे लड़के का पत्र जब तुम्हारे पास आया कि सर्दी पड़ रही है रज़ाई भेजो तो तुम अपना खाना पीना भूल गये, स्वयं सर्दी में अपना समय गुज़ारा, परन्तु अपनी रज़ाई वन्द करके रेलवे बिल्टी द्वारा भेज दी।

क्या यह बीस लड़के अनाथ जिनका तू संरक्षक बना हुआ है। इनके पास रज़ाई न होने के कारण यह सारी रात सर्दी में ठिठरते हैं क्या यह तेरे पुत्र समान नहीं है। माना कि तुम्हारे पास धन नहीं जो कि इनको रज़ाइयां तैयार करा कर दे सके, तो क्या तेरा पुकार करना भी कर्तव्य नहीं।

सज्जनों—यह दृश्य आते ही मेरी आंखों में पानी आ गया, (आंसू भर आये) मैंने तत्काल, कागज़, कलम, दवात उठाई, एक लेख लिखा उसकी तीन कापियां करके अख़बार आर्यगज़ट लाहौर तथा घन चक्कर, वीरकेसरी, अख़बार जो मुलतान से निकलते थे, को भेजा दीं। फिर मैं उठा, अनाथ बच्चों को भोजन कराकर उनको स्कूल भेजा और शिल्प का कार्य करने वालों को कार्य में लगाया, तो पाचक ने मुझ से पूछा, आपके सिये भोजन लाऊं। मैंने कहा अभी नहीं यह कह कर मैं लाठी हाथ में लेकर शहर को चल पड़ा, लोहारी गेट, श्री डाक्टर दोवान चन्द जी भूटानी जो आई साईड के माने हुए डाक्टर है। बड़े सरल स्वभाव तथा उदार हृदय हैं। जो इस समय दिल्ली कुतुब रोड पर प्रैक्टिस करते हैं, के यहां पहुंचा, नमस्ते की, डाक्टर साहिब ने आदर सत्कार से मुझे बिठलाया, थोड़ी देर के पश्चात डाक्टर साहिब का छोटा लड़का (जो इस समय डाक्टर है) घर से बांहिर आया, कर जोड़ .सने मुझे नमस्ते की, उस लड़से ने गर्म कोट गर्म पतलून, मुफ़लर गर्म, जुराबें गर्म, बूट और हाथों पर दस्ताने गर्म

पहने हुए थे, मैंने लड़के को गोद में ले लिया, और डाक्टर साहिब से यूं कहा, महाराज ! इधर देखिये, लड़के की ओर संकेत करते हुए कहा, अब लड़के के सामने सर्दी आवे तो मुंह की खावे। डाक्टर साहिब ने जब मेरे मुंह से ऐसे शब्द सुने तो तत्काल मुझ से कहा, क्यों सुख तो है ? क्या तकलीफ है ? मैंने कहा डाक्टर साहिब, सर्दी पड़ने लगी है बच्चों के पास रजाईयां नहीं हैं। तो वह बोले कितनी रजाईयों की आवश्यकता है। मैंने कहा २० बीस रजाईयों की आवश्यकता है। पूछा एक रजाई पर क्या खर्च आवेगा मैंने कहा दस रुपया एक रजाई पर खर्च आवेगा, तो फिर वह बोले इनके लिये तो काफी रुपया खर्च होगा, तो मैंने कहा—

अन्दक अन्दक ब्रिस्यार शवद, गल्ला गल्ला अम्बार शवद।

अर्थात्—एक एक दाना संग्रह करने पर ढेर लग जाता है।

अब डाक्टर साहिब ने चैकबुक उठाई, पचीस रुपये का चैक काटकर बड़ी श्रद्धा भावना से मुझे दे दिया मैं चैक लेकर नगर चला गया, खद्दर वालों की दुकान से खद्दर मोल ले लिया, रंग साज़ से रंगने की विधि पूछ कर रंग ले लिया, और अनाथालय में आ गया जिन बीस बच्चों की रजाईयां न थीं, उनको बुलाकर उनको रजाई का कपड़ा काट काट कर दे दिया, साथ रंग भी, और चूल्हे पर कड़ाहियां धरा कर रंगवाना आरम्भ कर दिया, इसके पश्चात् मैं भोजन करने लगा।

तो अकस्मात् लाला लीला राम जी Sub Inspector पोलीस तहसील मैलसी अनाथालय में पधारे, वह मेरे प्रेमी थे, और अनाथ बच्चों से बहुत प्यार करते थे। मैं ने उनसे कहा, कि आपके नाम भगवान् की हुण्डी है। उसे भर दो। वह हंस कर कहने लगे, कैसी हुण्डी है। मैंने कहा बीस बच्चों की रजाईयां नहीं हैं, रजाईयों के

वास्ते तो खद्दर दाता ने दे दिया है। अब आप एक मन रूई ला दें। ताकि बच्चों को रजाईयां शीघ्र ही तैयार हो जायें। तो वह कहने लगे आप एक बार मैलसी आ जावें, मैं चन्दा इकट्ठा करवा दूंगा, तो मैंने कहा, वाह भाई वाह, सर्दी सर पर पड़ रही है, एक एक रात मुसीबत की कट रही हैं। क्या आपके पास भगवान् की पूंजी नहीं है? वह यह सुनकर हंस पड़े और कहा कि मैं रुपया तो साथ नहीं लाया, आप मेरे हिसाब में मंगवा लेवें। मैं घर जाकर कल रुपया या चैक लिखकर भेज दूंगा, अब रूई मंगवाकर रजाईयां तैयार करा कर बच्चों को दे दी गईं।

और जो लेख अखबारों में भेजे गये ते, उनका परिणाम यह हुआ कि थोड़े दिनों के अन्दर ही बाहर से सहायता आने लगी, परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक बालक को गर्म कोट, पाजामा, बूट, कम्बल गर्म टोपियां पहना दी गईं। और काफी सामान बच गया।

अब सोचो! क्या अनाथ बच्चे कहीं मांगने गये थे? नहीं नहीं, वह अनाथों का नाथ किस प्रकार से गुप्त प्रेरणा से अपने प्यारो द्वारा सहायता कराता हैं। थोड़ी सी पुकार को सुन कर बेकरार हो जाता हैं। जब तक पुकारने वाले की पुकार को पूर्ण न कर दे।

आप बीती न० ३

अनाथालय में साठ के लगभग बालक थे। अधिक छोटी आयु के थे। वह चार बजे प्रातः काल उठकर, शौच, स्नान करके यज्ञ शाला में सन्धया, हवन प्रार्थना भजन किया करते थे। अनाथालय में एक कुवां लगा हुआ था, एक दिन मुझे यह देख कर बड़ा दुःख हुआ कि पोस मास में बड़े ज़ोर की सर्दी पड़ रही है छोटे छोटे बालक कुएं पर स्नान करते हैं। इनको खुली हवा में सर्दी लगने पर अधिक

कष्ट होता होगा, तो मैंने प्रभु देव से प्रातःकाल प्रार्थना की, तेरा नाम दयालु है, तू दीन दुःखियों कीं पुकार को तत्काल सुनता है, क्योंकि वह तेरे आश्रित होते हैं। यह अनाथ बालक छोटे २ अधिक सर्दी पड़ने के कारण प्रातःकाल स्नान करने पर ठिठरते हैं, यदि तू अपने किसो प्यारे को प्रेरणा करदे, वह स्नान करने का कमरा बनवा दे तो तेरा क्या हर्ज होगा अपने नाम की लाज रखेगा।

सज्जनो—प्रार्थना होने के पश्चात् बच्चों ने भोजन किया, अपने अपने कार्य अर्थ चले गये, थोड़ी देर बीती तो एक देवी जिसका नाम तुलसी बाई था, वह पाक दरवाज़ा की रहने वाली थी अकस्मात आगई। मैंने पूछा माता जी! कैसे आपने आने का कष्ट किया है, मेरा इतना पूछने पर वह माता रो पड़ी अब मैंने धैर्य दिलाया, पूछा माता जी, आपको क्या कष्ट है।

माता जी : महाराज ! मेरी एक हो लड़की थी पिछले वर्ष उस का विवाह किया था, वह पिछले मास स्वर्गवास हो गई है। मैं चाहती हूं कि उसके नाम पर कमरा बन जावे ताकि उसका नाम तो जीवित रहे इतना कहा फिर ६००) रुपये के नोट मेरे सम्मुख देवी ने रख दिये, मैंने कहा माता जी बच्चों के स्नान के लिए कमरा बनवाना है आज भगवान से प्रार्थना की थी। उसने तत्काल सुन ली है। कवि ने क्या सचकहा—

घायल की गति घायल जाने और न जाने कोय

मैंने ६००) ले लिये, अनाथालय की रसीद काट दी फिर वह बोली महाराज! पचास या सौ रुपया तक और खर्च करना पड़े तो मैं और द दूंगी आप इसके नाम का कमरा शीघ्र बनवा देवें, ताकि यह बच्चे सुख पावें, इतना कहकर वह माता चली गई। अब मैंने उसी समय ओवर-

सीयर साहिब को बुलाया, उन्होंने नकशा तैयार कर दिया। युनि पल कमेटी में पेश करने पर स्वीकृति प्राप्त हो गई। एक मास के अन्दर ही अन्दर बच्चों का नहलाने का कमरा तयार हो गया उस की पुत्री के नाम की शिला कमरे पर लगवा दी। कवि कहता है—

कुछ देर नहीं अन्धेर नहीं इन्साफ और अदल परस्ती है।
इस हाथ दे उस हाथ मिले यह सौदा नक़द व नक़दी है।।

नं० ४

एक दिन सायंकाल को पाचक ने मुझ से कहा महाराज! कल प्रातःकाल के भोजन तक का आटा पड़ा है, सायंकाल भोजनार्थ आटा नहीं होगा, मैंने कहा, तो मैं क्या करूं मेरे आसरे यह लड़के थोड़े हैं? जिसके आसरे रहते हैं, वही चिन्ता करेगा, लायेगा हमें क्या जाओ तुम विश्राम करो।

सज्जनों: दूसरे दिन प्रातः जब बच्चे नित्य कर्म से निवृत्त होकर भोजनालय में भोजन करने बैठ गये, तो अकस्मात एक टांगा अनाथालय के अन्दर आ गया, और मुझसे टांगे वाले ने कहा महाराज! बोरी आटे की लाया हूं। अमुक व्यक्ति ने भेजी है, आप उसकी रसीद मुझे दे देवें। मैंने पाचक को बुला कर कहा यह बोरी आटे की ले जाओ, पाचक हंस कर बोला महाराज! आप कल कहीं से मांग आये थे। मैंने कहा तेरे बाप से मांग आया था। मूर्ख! तुम्हें कल जो कहा था, जिसके आसरे यह बच्चे रहते हैं, उसको अधिक चिन्ता है, बस उसने भेजा है। पाचक आटे की बोरी कमरे में रख कर फिर मेरे पास आया और कहा महाराज! अब घी समाप्त है। छोले भी नहीं हैं और खड्डियों के लिये सूत भी चाहिए। इतना कहकर फिर मुझे कहा, क्य

आप के लिए भोजन लाऊं । मैंने कहा अभी नहीं, मैं उसी समय लाठी हाथ में लेकर नगर की ओर चल पड़ा, जब बोहड़ दरवाजे पर पहुंचा तो लाला गणश दास जी साईंस मास्टर गवर्नमैंट हाई स्कूल मुलतान अकस्मात सम्मुख आगये । मूझ से नमस्ते करने के पश्चात पूछा, कि आप प्रात:काल कहां जा रहे हैं तो मैंने कहा, भगवान के मोदी के पास तो वह हंस पड़े और बोले क्यों ? मैंने कहा बच्चों के सिए घी और छोले नहीं हैं तथा खड्डियों के लिये सूत की आवश्यकता है । तो वह तत्काल बोले महाराज ! आप नगर से दस रुपये का सामान मोल ले जावें, और रसीद मेरे घर भिजवा कर १० रुपये मंगवा लेवें । इतना कहकर वह नमस्ते करके स्कूल चले गये, अब मैं नगर में पहुंचा, पांच रुपये का घी पांच सेर और चार रुपये का सूत का बिट, चौदह आने के छोले लिये, दो आने शेष टांगे वाले को देकर सामान लाद कर मैं अनाथालय में पहुंचा, पाचक को बुलाकर कहा, यह सामान ले जाओ तो पाचक हंस कर बोला महाराज ! आप इतनी शीघ्र सामान लेकर भी लौट आये । तो मैंने कहा । भोले तेरे बाप के पास थोड़ा गया था जो देर लगती, उसकी हुंडी तो दर्शनी होती है । उसकी पत साख पूर्ण है इस लिए तो उसके नाम पर उसके प्यारे तन, मन, धन अर्पण करने पर फ़ूले नहीं समाते । और वह भी उन्हें खुशहाल निहाल कर देता है सुनों भाष्यकार ऋषि दयानन्द महाराज लिखते है—

ओ३म् अभीषुण: सखीनामविता जरितृणाम । शतं भवास्युतिभि ।
यजु० अ० ३६ ।।४।।

अर्थात : जो मनुष्य अपने मित्रों के रक्षक असंख्य प्रकार के सुख देने हारे अनाथों की रक्षा में प्रयत्न करते हैं वे असंख्य धन को प्राप्त होते हैं ।

वेद भगवान [illegible] देता है कि जो अनाथों की रक्षा में प्रयत्न करते

हैं वे असंख्यय धन को प्राप्त करते हैं।

महाराज ! दशरथ को अपने राज्य में सांसारिक धन ऐश्वर्य की कोई कमी न थी। वृद्धावस्था हो चुकी थी। एक दिन राजा दशरथ ने दरबार में बैठे हुए मन्त्रीमण्डल तथा विद्वान महात्माओं से प्रश्न किया कि संसार के अन्दर सबसे उत्तम मेवा कौन सा है। तो उत्तर मिला कि उत्तम मेवा गृहस्थी के लिए सन्तान है। बिना सन्तान के घर सुनसान है। जब राजा ने उत्तर सुना तो हाय हाय करता हुआ गिर पड़ा, उसे होश में लाया गया, ऋषि मुनियों को निमन्त्रण देकर बुलाया गया ऋषि मुनियों के आ जाने पर ही प्रश्न उनके सम्मुख रखा गया कि कोई ऐसा उपाय बतला दें, जिससे महाराज के घर सन्तान उत्पन्न हो जिससे ज्योति के साथ ज्योति जग जावे। ऋषियों मुनियों ने यज्ञ अनुष्ठान बतलाया, उसके करने पर देवता सन्तान घर में आये। जो उनका नाम संसार भर में विख्यात है। जब तक सृष्टि रहेगी उनका नाम जीवित रहेगा।

अब निश्चय हुआ कि गृहस्थी के लिये धन, सम्पत्ति ऐश्वर्य पदार्थ के होते हुए भी बिना संतान के घर सुनसान है। अर्थात-संतान ही मुख्य है। इसी का नाम असंख्य धन है। यह अनाथों की सेव से ही प्राप्त कर सकते हैं। ऐसा वेद भगवान ने आदेश दिया है। देखिए कैसे:—

महाशय कोटू राम प्रधान आर्य समाज उच्च, रियासत बहावलपुर मेरे प्रेमी मित्र थे। उनकी तीन कन्यायें थीं लड़का कोई न था, वृद्धावस्था होचुकी थी बड़ी कन्या का विवाह हो चुका था। दूसरी कन्या का नाता सम्बन्ध करना चाहते थे। वह मेरे पास अनाथालय में पहुंचे मुझ से, कहा कि अब पुत्री आत्म देवी का नाता (मंगनी) करनी हैं

कोई वर निश्चित करें मैंने कहा ग्राम कहावत है कि कन्या दान की जाती है। और ऐसे ही संकल्प करके कन्या दान की जाती है। परन्तु वास्तव में कन्या आजकल दान नहीं की जाती। आजकल तो धन दौलत वाले घराने देख कर ही कन्या दी जाती है। चाहे वर मूर्ख ही क्यों न हो। चूंकि आप आर्य समाज के प्रधान हैं। यदि आप वास्तव में कन्यादान करना चाहते है। तो मैं आपको एक योग्य वर बतलाता हूं और दे सकता हूं। प्रधान जी बोले, इसी कारण तो आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूं। आपके द्वारा योग्य वर मिल जावेगा, क्योंकि पहली पुत्री का नाता सम्बन्ध भी आपकी सम्मति पर किया गया था, वह वर वधु बहुत प्रसन्न हैं। मैंने कहा, अनाथालय में एक लड़का है जो मैट्रिक में पढ़ता है। बहुत सुशील स्वभाव का और सदाचारी है। चूंकि आपका कोई लड़का नहीं है, आप उस को पुत्र बना लेवें।

प्रधान : वह लड़का कहां है, मैंने लड़के को बुलाया, उन्होंने देख कर मुझ से पूछा कि इस के पीछे क्या सम्पत्ति है। मैंने कहा यदि धन सम्पत्ति वाला होता तो यहां अनाथालय में आता, यह दयानन्द का पुत्र है, यदि आपने कन्या दान करनी है तो दान वहां करना चाहिए जो दान का पात्र हो, जहां पर दान करने वाले की पूजा हो। पेट भरे को दान देना क्या कोई दान होता है। वहां तो फैंकना होता है। वह बोले अच्छा घर जाकर मैं परिवार से विचार करूंगा। इतना कहकर वह अपने घर चले गये। कुछ दिनों के पश्चात वह मेरे पास पहुंचे, मैंने पूछा, कन्या के नाता केसम्बन्ध में क्या विचार किया है। वह बोले इस लड़के को मेरा परिवार नहीं चाहता। मेरे समझाने पर भी नहीं मानता, मैंने कहा आपको जैसी इच्छा हो करें। वह वापिस अपने घर को चले गए। लगभगएक मास व्यतीत होने पर प्रधान जी

फिर मेरे पास आये।

मैंने पूछा—अब आप कैसे यहां आये हैं। वह बोले कल नाम तो काल का ही है। भगवान जाने क्या होगा, आपको प्रतीत ही है—कि मेरा कोई लड़का नहीं है। और मेरी अवस्था भी अब ढीली हो चली है यह विचार करके तहसील में आया था कि अपनी सम्पति को तीनों कन्याओं के नाम रजिस्ट्री करवा दूं ताकि मृत्यु के पश्चात यही सम्पत्ति बांट लेवें। मैंने अपनी सारी सम्पत्यायें स्टाम्प लेकर लिखा पढ़ी कराई और रजिस्ट्रार के सम्मुख रजिस्ट्री कराने अर्थ जाते हुए अकस्मात विचार मन में आ गया कि अमुक सम्पत्ति नहीं लिखी गई वह कागज अब घर रह गये हैं अतः रजिस्ट्री कराना बन्द कर दिया, और फिर आपकी सेवा में चला आया हूं। मंने कहा, यहां कैसे आपका आना हुआ है, वह बोले पुत्री का नाता सम्बन्ध करने अर्थ सेवा में उपस्थित हुआ है।

मैंने पूछा—आपने कहां नाता करने का विचार किया है। वह बोले, जो लड़का अनाथ आपने बताया था, अब सब परिवार को निश्चय यह सम्मति हुई है कि आपकी सम्मति पर नाता कर दिया जावे।

मैं : मैंने उत्तर दिया कि अब मैं लड़के का नाता आपकी कन्या से नहीं करना चाहता, वह हाथ जोड़ कर कहने लगे, आप नाराज हो गये हैं। मैं क्या करूं, मेरा तो आप पर पूरा विश्वास था, और अब भी है। परन्तु परिवार सहमत करना उचित था, अब उनको सहमत कर लिया है। इस कारण सेवा में उपस्थित हुआ हूं।

सज्जनों मैंने क्यों नाता करने के सम्वन्ध में इन्कार किया था, इस लिए के अनाथ बालक के भावी जीवन के कल्याण अर्थ पहले

प्रधांन जी से निश्चय विचार करलूँ। तो मैंने प्रधान जी से कहा—

मैं : प्रधान जी ! यदि आपकी इच्छा अनुसार कन्या का इस बालक के साथ नाता कर दिया जावे, अभी तो यह स्कूल में पढ़ रहा है इसको एक वर्ष और पढ़ाई में लगेगा, मैट्रिक पास कर लेगा, आप चाहते हैं विवाह भी साथ हो जावे।

प्रधान जी : हम एक वर्ष प्रतीक्षा कर लेंगे, पश्चात विवाह करेंगे जब यह मैट्रिक पास कर लेगा, क्योंकि इसमें मेरा भी तो भला है। यह योग्य बन जावेगा तो मेरी कन्या भी तो सुखी रहेगी।

मैं : अच्छा आप मैट्रिक पास कर लेने पर विवाह करेंगे। दूसरा—यह तो आपको प्रतीत ही है कि इसके पास धन सम्पत्ति नहीं है। यह कैसे विवाह का खर्च करेगा।

प्रधान जी : जब मैंने पुत्र बना लिया तो मेरी सम्पत्ति उसकी होगी मेरा अपना फिर क्या होगा, इसके विवाह का खर्च भी मैं ही करूंगा।

मैं : अच्छा। विवाह हो जाने पर यह आपका पुत्र हो गया, अब कारणवश आपके संग इसका दिल कार्य करने को नहीं लगता तो यही गृहस्थ निर्वाह कैसे चलायेगा।

प्रधान जी : महाराज ! एक मकान पुख्ता मोल ले लिया है। वह इसको दे दूंगा। एक हजार रुपया नकद दे दूंगा बजाजी की दुकान खोल दूंगा। (प्यारे उस समय एक हजार की कीमत दस हजार रुपये थी)।

मैं : अच्छा, अब आप घर जायें, मैं सोच विचार कर आपको लिखूंगाअब प्रधान जो अपने घर चले गये लड़का बहावलपुर का निवासी था। दैवयोग से मुझे बहावलपुर से एक प्रेमी का विवाह के लिए निदन्त्रण आया, मैं लड़के को साथ लेकर बहावलपुर लड़के के

घर सीधा पहुंचा, तो क्या देखा। एक छोटा सा कमरा है उसमें लड़के की माता.चक्की पीस रही है लड़के ने नतमस्तक हो माता को नमस्कार किया माता देख कर लड़के को वहुत खुश हुई उसे छाती से लगाया प्यार किया। और मुझे कर जोड़ नमस्कार की और वड़े प्रेम श्रद्धा से बैठाया। मैंने कहा, माता जी आपके लड़के की मंगनी (नाता) एक सेठ की पुत्री से करता हूं, क्या कर दूं ?

माता जी : आंखों में आंसु भर आये। बोली महाराज ! मैं अबला दुखिया हूं। मेरे से आप हंसी करते हैं।

मैं : माता जी नहीं, मैं हंसीं और मखौल नहीं कर रहा आपका पुत्र अब ऋषि दयानन्द का पुत्र है। यह किसी ऐसे वेसे का पुत्र नहीं है कन्या भी वही इसको देगा, जो ऋषि दयानन्द का पुजारी होगा।

माता जी : चरणों में पड़ कर बोली महाराज ! यह पुत्र आपका है। मेरा क्या है। आप पालना, पोषणा कर रहे हैं। आप मालिक है। मेरी यही एक आंख है। भगवान इसे चिरंजीव रखे, मैंने कहा. माता जीं, एक ऋषि दयानन्द का भक्त जो लाख रुपये की सम्पति का वह स्वामी है। उसका कोई लड़का नहीं है। वह मेरे प्रेमी हैं। आपके लड़के को उसका सुपुत्र बनाता हूं। उसकी कन्या से उसका नाता करता हूं क्या आपको स्वीकार है ?

माता जी : प्रेम के आंसु ,आंखों में भरे हुये, वह हाथ जोड़कर बोली (महाराज) सब कुछ आपका हैं आप स्वामी हैं जैसा चाहें वैसा करें। अब घर से उठकर मैं विवाह वाले घर जाकर ठहरा, वहां से मैंने प्रधान जी को पत्र लिख दिया कि आपकी पुत्री का नाता (मंगनी) आपकी इच्छा अनुसार अनाथ बालक से कर दिया गया है। पत्र मिलने पर मुझे सूचना देवें।

सज्जनों : प्रभु की लीला देखो, वह कैसे अपनी वेद की अमृतवाणी द्वारा अपने प्यारों को गारन्टी देकर उसे पूरा करता है। सुनिए :—

कन्या का नाता हो जाने पर थोड़े दिनों के पश्चात प्रभु कृपा से प्रधान ज़ी की धर्म पत्नी गर्भवती हो गई, प्रसूत काल में वह मुलतान मिशन हस्पताल में आकर परविष्ट हुई, प्रधान जी दिन भर हस्पताल में व्यतीत करते रात को अनाथालय में आकर विश्राम करते एक दिन प्रधान जी रात्रि को अनाथालय में विश्रामार्थ न आये तो मैं प्रातः मिशिन हस्पताल में पहुंचा, क्यादेखा, प्रधान जीसिर नीचा किये हुए, चिन्ता मैं ग्रस्त हैं मैंने निकट पहुंच कर नमस्ते की और फिर पूछा कि आप रात्रि को नहीं आये और अब किस चिन्ता में ग्रस्त हैं। वह हाथ माथे पर धर कर बोले, श्री मान जी ! क्या बतलाऊं, मैंने फ़िर पूछा बतलाओ तो सही क्या वात है, क्या घर वाली प्रसूत हुई है। वह नीचे सिर करके मुख से कुछ न बोले, मेंने फिर पूछा, क्या उत्पन्न हुआ है।

प्रधान जी : महाराज ! क्या बताऊं दो लड़के हुए हैं।

मैं : हंस कर यक न शुद—दो शुद' एक लड़का चाहते थे ।भगवान ने दो दिये—देख भगवान की कृपा, आपको किस पुण्य कर्म का फल उसने दिया है।

प्रधान जी : महाराज ! छोटे २ चूहे की भान्ति लड़के हैं। फिर दो हैं। दो लड़के उत्पन्न होने वाले दुर्लभ जीवित रहते हैं।

मैं : वाह ! प्रधान जी आप हैं तो आर्य समाज के प्रधान पर हो नास्तिक, अरे राई के बराबर जिसका बीज होता है उससे आकाश के साथ बातें करने वाला बढ़ (बट) का वृक्ष उत्पन्न हो जाता है क्या वह तेरा बाप उत्पन्न करता है। क्या मोटे २ लड़के उत्पन्न हुए जीवित रहते हैं, दूसरे नहीं। क्या दो जमे वच्चे मर जाते हैं, नहीं अनेकों

ऐसे दो भाई जीवित हैं जो एक ही समय गर्भ से उत्पन्न हुए थे। अवा मैंने लाल रंग मंगवाकर पानी में घोल कर प्रधान जी पर छिड़क दिय और साथ ही उनके परिवार को पत्र लिखदिये कि प्रधान जी के घर भगवान ने दो लड़के उत्पन्न किये है। अब हर तरह से बधाई बधाई के पत्र आने लगे।

सज्जनों : अब वह दोनों लड़के जीवित हैं। एक तो गृहस्थी है। संतान वाला है। दूसरा बी० ए० में पढ़ रहा है। और कन्या और वर आनन्द मंगल से हैं। वर P W. D. में (Accountoint) एकाउन्टैट (B. A.) पास है। वह ऋषि भक्त है प्रतिदिन वेद का पाठ तथानित्य कर्म उनके घर में होता है। और वह चारों वेदों द्वारा यज्ञ घर में कर चुका है। और नित्य प्रति नित्य कर्म के अतिरिक्त वेद की आहुतियां दिया करता है।

वह अत्यन्त गम्भीर, सुशील, शान्त स्वभाव और पत्नी भी देवता स्वभाव की हैं। इनका गृहस्थ सीता, राम की भान्ति व्यतीत हो रहा है

गरीबों से आबाद मन्दिर शिवाले,
इन्हीं में से होते हैं अल्लाह वाले।
इसी तबका से ही अहिले उर्फान हैं निकले,
इसी तबका से मर्द मैदान हैं निकले।
इसी तबका से अहिले इमा निकले,
इसी तबके से फिलमफादान हैं निकले।
रसूले खुदा क्या कोई, दयानन्दो नानक कोई आहले जर थे॥

तीसरा उपदेश

ओ३म् कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।
एवं त्वयिनान्यथेतोऽस्ति न कर्मलिप्यते नरे ॥

य० ४०।२

भावार्थः मनुष्य को इस संसार में कर्मों को करता हुआ ही सौ वर्ष तक जीता रहना चाहिये। इस प्रकार पूर्वोक्त प्रकार से त्याग पूर्वक कर्म करने से तुझ नर में कर्म पर चलने वाले पुरुष में कर्म लिप्त नहीं होगा। इसके अतिरिक्त (कर्म लेप से बचने का) और कोई उपाय नहीं है।

मनुष्य जीवन अनमोल जींवन है। यह कर्म योनि है। बिना किये कर्मों के आवागमन के चक्कर से छुटकारा नहीं होगा। यह कर्म तो पशु भी करता है। परन्तु पशु स्वभाव और इरादे दोनों अवस्थाओ में बंधा हुआ कर्म करने और भोग भोगने में परतन्त्र है पशु न अपनी इच्छा अनुसार कर्म कर सकता है और न भोग प्राप्त कर सकता है यह परतन्त्र होने के कारण इसका स्वामी जब चाहे इससे काम ले और जब चाहे घास, चारा दे और पानी पिलावे।

दूसरा–पशु योनि भोग योनि है। यह पशु योनि में होता हुआ अपने भावी जीवन को उन्नत नहीं कर सकता, जैसे गाय ने जन्म लिया तो यह जन्म भर गाय ही रहेगी, इसी प्रकार कुत्ता, गधा तथा पक्षी पशु योनि अपने अपने जन्म धारण किए हुये में ही जन्मभर रहेंगे। यह तो नहीं हो सकता कि गधा गाय बन जावे या कुत्ता शेर बन जावे, यह जन्म पर्यन्त भोग योनि में ही रहेंगे।

तीसरा-पशु को अपने पराये का बोध नहीं होता यह केवलखाना पीना जानता है। जिस किसी के खेत में घुस जावेगा उसी को खाना आरम्भ कर देगा इत्यादि—

परन्तु मनुष्य स्वभाव और इरादे से दोनों अवस्थाओं में कर्म करने में स्वतंत्र और भोग इसका अदृष्ट है। यह जब चाहे कार्य करे और जब चाहे खाये, पीये, दूसरा यह मनुष्य जन्म प्राप्त करता हुआ शुभ कर्मों द्वारा इस जन्म में देवता, महात्मा, ऋषि बन सकता हैं और अशुभ कर्मों द्वारा नीच योनि पशु आदि को प्राप्त कर सकता है। तीसरा मनुष्य को अपने पराये का बोध होता है वह ऐसे किसी की वस्तु को नहीं छुएगा।

निस्सन्देह वर्तमान काल में ऐसे मनुष्य बहुत कम होंगे प्रायः मनुष्य मनुष्य शरीर धारण करते हुए अपने कर्तव्य से बहुत दूर जा रहे हैं।

वेद भगवान ने कहा है, कि हे मनुष्य! तू केवल कर्भ कर, भोग तेरा अदृष्ठ है, तू भोग की चिंता मत कर कैसे, सुनिये—

बच्चा जब माता के गर्भ में होता है, वह खाता, पीता है, उसके प्रत्येक अंग, आंख कान, नाक, हाथ सभी इन्द्रियां अन्दर बन रही हैं ऐसी अवस्था में और कोई न जान सके उस गर्भवती माता से पूछा जावे कि क्या तू जानती है कि तेरे गर्भ में जो बच्चा है कभी उसका रोना तूने सुना, उसने तुझसे कुछ मांगा, या उसने कोई दुःख दर्द आप से प्रकट किया, और क्या तेरे गर्भ मे लड़का है या लड़की, काला है या गोरा तो वह स्पष्ट कहेगी कि मैं कुछ नहीं जानती।

अब जब बच्चा गर्भ से बाहर आने को उद्यत होता है, तो माता को दर्द पीड़ा होनी आरम्भ हो जाती है। यहां तक कि दर्द, पीड़ा, होने पर दो तीन दिन तक खाना पीना छोड़ देती है। परन्तु जब बच्चा गर्भ से बाहर आता है तो दूध के मटके पहले भर जाते हैं अब दो वर्ष पर्यन्त बच्चा दूध पीता रहे, स्तनों में कमी न आवेगी। अब

हां पर ज़रा विचार करो, सोचो, कि क्या दूध जो माता के स्तनोंमें उत्पन्न हुआ है, क्या यह दूध माता ने स्वयं उत्पन्न किया है ? हालां कि उसने दर्द पीड़ा होने के कारण दो, तीन दिन तक खाना कुछ भी नहीं खाया था और क्या वह जब पहले खाती पीती रही कभी उसके स्तनोंमें दूध आया था ? और यदि माता यह कहे कि दूध मेरा है मेरी इच्छा है, चाहे मैं बच्चे को दूध दूं या न दूं अब यदि ऐसा करे और दूध बच्चे को न दे तो स्तनों में सोज़श आ जावेगी, त्राहिमान २ करेगी, इसका छुटकारा दर्द, दुःख से तो दूध देने में होगा, न कि स्वार्थ में, इसी वास्ते तो संत तुलसी दास जी ने कहा है—

पहले बनी प्रारब्ध पीछे बना शरीर ।
तुलसी आश्चर्य देखिये, मन नहीं बांधे धीर ॥
भोजनाच्छादने चिन्तां वृथा कुर्वन्ति वैष्णवाः ।
योऽसौ विश्वम्भरो देवः स किं दासानुपेक्षते ॥

अर्थात : वैष्णव आहार आदि के लिए व्यर्थ ही चिंता करते हैं। जो भगवान समस्त विश्व के सब जीवों का भरण पोषण करता है वे क्या अपने सेवको को भूल सकता है ? गुरु नानक देव जी लिखतेहै

तू डूबे काहे प्राणिया, तुझ राखेगा सर्जनहार ।
जिन पैदा इस जगत ती किया सोई दे आहार ।

चाणक्य नीति में लिखा है —

नाहारं चिन्तयेत प्राज्ञो धर्ममेकं ही चिन्तयेत ।
आहारो हि मनुष्याणां जन्मना सह जायते ॥

भावार्थ : बुद्धिमान पुरुष भोजन की चिन्ता न करें, किन्तु एक धर्म ही की चिंता करे । भोजन तोमनुष्य के जन्म के साथ उत्पन्न होता है।

फ़ार्सी का कवि लिखता है—

कार साज़े मा व फ़िकरे कारेमा,
फ़िकरे मादर कारेमा आजारे मा ।

अर्थात : जिसने सारे विश्व को उत्पन्न किया है । उसको क्या थोड़ी ही चिन्ता है ? वह तो सच्ची जननी माता की भांति दुःख दर्द को तत्काल मिटा देती है गुरु नानक देव जी लिखते हैं ।

नानक चिंता मत करो, तिस ही चिंता होवे ।
ज़ल में जन्तु उपाये तिना भी रोजी देवे ॥

वेद में भी लिखा है—

ओ३म् ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्तांद् विसीमतः सुरुचोवेन आवः,
स बुध्न्या ऽउपमा ऽअस्य विष्ठाः सतश्च यौनि मसतश्च विवः ।

यजु० अ० १३ मं० ३

भावार्थ—जैसे उत्पन्न होने से पूर्व माताके स्तनों में दूध हो जाता है । ऐसे ही जगत् की जननी जनक परमेश्वर ने सृष्टि के पूर्व प्रत्येक शरीर के लिये प्रभूत (ब्रह्म) अन्न व पालन शक्ति और पृथिवी, सूर्य, चन्द्रमा नक्षत्र आदि को बनाया जो परस्पर आकर्षण से स्थिर है । फ़ार्सी का कवि लिखता है –

अगर रोज़ी बदानिश बर फ़ज़ूदे ।
जे नादां तंग तर रोज़ी न बूदे ॥
व नादां आं चुनां रोज़ी रसानद ।
कि दानां अन्दरां हैरां विमांनद ॥

अर्थात्—यदि अजीविका बुद्धि के अनुकूल न्यून व अधिक होती तो मूर्ख से बढ़ कर कोई अजीविका से तंग न होता, परन्तु वह प्रजापति मूर्खों को भी इस प्रकार अजीविका सम्पत्ति देता है, कि वह बुद्धिमान् पुरुष देखकर चकित रह जाते हैं। फार्सी का कवि लिखता है—

ग़मे रोज़ी मखुर बरहम मजन औराके दफ़तर रा।
कि पेश अज़तिफ़ल एज़द पुर कुनद पिस्ताने मादरा ॥

अर्थात—हे मनुष्य ! तू अपनी अजीविका के लिये परेशान मत हो, और खलबली मत मचा, क्योंकि बालक की उत्पत्ति से पूर्व ही (सविता देव) मां की छातियों को वह दूध से भर देता है।

दृष्टान्त

पुरुषार्थ और प्रारब्ध का आपस में सम्वाद हुआ, और वे अपनी २ स्तुति करने लगे। अब आपस में यह निश्चय हुआ कि अपना २ कार्य करके दिखा दें कि एक दूसरे से कौन बढ़ चढ़ कर है। तो पुरुषार्थ ने कहा मैं पहले अपना कार्य करके दिखाता हूं। देखना मैं तुझ से बड़ा हूं। प्रारब्ध ने कहा तथाऽस्तु।

अब पुरुषार्थ और प्रारब्ध इकट्ठे चल पड़े। रास्ते में देखा एक व्यक्ति मूंज कूट कर वान बट रहा है। पुरुषार्थ ने उसको एक सौ रुपया दिया, और कहा कि अब इसे ले जाओ, इसमें से पांच रुपय कोखानपान की सामग्री ले लो, शेष पचान्नवे रुपये से व्यापार करो। तुम माल माल हो जाओगे। वानबट ने सौ रुपया ले लिया, पांच रुपये सामग्री के पृथक करके शेष रुपयों को पगड़ी में बांध लिया ताकि कहीं पर भूल न जाऊं, अब जाकर पांच रुपये की खान पान की

सामग्री ली—और साथ ही गोश्त भी लेकर उसी पगड़ी में बांध कर सिर पर रख लिया, अब खुशी से घर जा रहा है। ऊपर से चील की दृष्टि मांस पर पड़ी तत्काल झटके से गोश्त वाले कपड़े को लेकर उड़ गई, और आंखों से ओझल हो गई और वह पचान्नवे रुपये भी साथ चले गये, अब फिर आकर वान बटने लगा कुछ दिनोंके पश्चात् पुरुषार्थ प्रारब्ध को साथ लेकर घर से चला, ताकि अपना कार्य दिखावे। जब वानवट के पास पहुंचे, पुरुषार्थ ने पूछा, अरे तुम को सौ रुपया दिया था, वह कहां गया? वह बोला महाराज! पांच रुपये की खान पान की सामग्री ली साथ ही गोश्त भी लिया, रुपयों और गोश्त को सिर की पगड़ी में बांध कर सिर पर रख लिया, अब ऊपर से चील ने उड़ते हुए गोश्त को देखा तो झटके से सर की पगड़ी सहित ले गई और रुपया भी साथ चला गया, अब फिर कार्य कर रहा हूं, जो नित्य किया करता था? प्रारब्ध ने कहा अब तेरा काम हो चुका है, अब मैं दिखाऊं।

पुरुषार्थ—एक अवसर मुझे और दो, फिर आप अपना कार्य दिखाना।

प्रारब्ध—बहुत अच्छा, एक बार और भी कार्य अपना कर देखो।

पुरुषार्थ—एक सौ रुपया और निकाला उसी वानवट को देकर कहा कि देखो अब सावधान रहना, पहले की तरह नष्ट न कर देना जाओ। पांच रुपये की खान पान की सामग्री ले लो, शेष धन से व्यापार करसे सुखी हो जाओ।

वानवट—एक सौ रुपया लेकर चल दिया, सीधा घर पहुंचा, पांच रुपये निकाल लिये, शेष पचान्नवे रुपये को एक मिट्टी का छोटा

सा बर्तन था, उसमें पुराने गेहूं के दाने पड़े थे, उसी में रुपयों की पोटली बांध कर रख दी। और स्वयं शहर में खान पान की सामग्री लेने चला गया, उसके पीछे एक बनिया जो गधे पर सामान लाद कर ग्राम २ घूम कर बेचता था, आ पहुंचा, वानवट की धर्मपत्नी का मुलतानी मिट्टी की सिर धोने के लिए आवश्यकता थी उसने छोटा सा मिट्टी का बर्तन जिसमें गेहूं के पुराने दाने रखे थे, उठा लाई और बनिये से बोली, यह गेहूं ले लो, मुझे मिट्टी सिर धोने वाली दे दो। बनिया बर्तन से गेहूं निकालने लगा तो देवी ने कहा, गेहूं क्यों निकालता है। यह बर्तन भी साथ ले जा, तेरे काम आ जावेगा, अब देवी मिट्टी लेकर घर आ गई, बनियां भी चला गया, दूसरे दिन वानवट उठा और विचार किया, कि रुपया उठा कर अब व्यापार करूं। तो रुपये वाले बर्तन के निकट पहुंचा—तो वर्तन न पाकर देवी से पूछा कि यहां बर्तन रखा था, जिसमें गेहूं के पुराने दाने पड़े थे। देवी ने कहा वह तो कल मुझे सिर धोने के लिये मुलतानी मिट्टी की आवयश्यकता थी, एक बनिया सौदा बेचने आया था वह बर्तन और पुराने गेहूं बनियें को दे दिये थे और मिट्टी ले ली थी, क्यों आप को उस बर्तन की क्या आवश्यकता पड़ गई है।

वानवट– कमबख्त ! वह बनियां कहां का रहने वाला था, किधर गया है।

देवी—क्रोध क्यों करते हो। और गाली क्यों देते हो, पुराने दाने पड़े थे। किस काम के थे। इतने नाराज़ हो रहे हो। यूंही पड़े हुए व्यर्थ जाते। आखिर मैं ने कुछ न कुछ लाभ उठा ही लिया है।

वानवट—ओ मूर्ख ! तेरी मत मारी गई है। उस बर्तन में तो

पचान्नवे रुपये रखे थे। तूने देखे नहीं थे।

देवी—मुझे क्या पता सड़े गेहूं में तेरे पचानवे रुपये रखे हैं आपको रुपये रखने के लिये यही स्थान दृष्टिगोचर हुआ था छिपा कर क्यों रखे थे। मुझे दे जाते। अब क्या करें। गया समय फिर हाथ आता नहीं। अब फिर मूंज को कूटा और वानवटने का कार्य आरम्भ कर दिया।

अब पुरुषार्थ—प्रारब्ध के साथ होकर वानवट के पास पहुंचा, देखा पहले की भान्ती वानवट, वान बट रहा है। पुरुषार्थ ने पूछा अब सौ रुपया कहां खर्च किया है। वानवट ने बीती अवस्था बतला दी। अब पुरुषार्थ चुप हो गया। तो प्रारब्ध ने कहा, क्यों भाई पुरुषार्थ ! अब क्या चाहते हो—

पुरुषार्थ—अब आप अपना कार्य दिखाओ।

प्रारब्ध—दो पैसे पास थे, वह वानवट को देकर कहा, प्यारे, मेरे पास तो यही है। भगवान् तुझे वरकत देंगे। यह कह कर दोनों चले गये।

बानवट—दो पैसे लेकर अपने पास रख लिये, थोड़ी देर पश्चात् एक मछली पकड़ने वाला बानवट के पास पहुंचा।

मछली वाला—बानवट से कहा, भाई ! मेरा जाल टूट गया है। कुछ पैसे मुझे दे दें। मैं सूत लेकर इस टूटे जाल को ठीक कर लूं फिर मछलियां पकड़ने जाऊंगा, मछलियां पकड़ते जो पहले पहल मछली आवेगी, वह मैं तूझे दे दूंगा।

बानमट—भाई ! मेरे पास तो केवल यह दो पैसे हैं, इस से तेरा काम बन जावे, तो ले जा।

मछलियां वाला--दो पैसे ले लिये, जाकर सूत लिया, जाल को

ठीक कर मछलियां पकड़ने चला गया; मछलियां पकड़ते जो मछली पहले पकड़ी वह इस बानवट को आकर दे दी।

बानवट—मछली लेकर घर चला गया, मछली का पेट जो फाड़ा उसके पेट में से एक जोड़ी मोतियों की निकली, उसे लेकर जौहरी के पास पहुंचा, वह हज़ारों रुपये की कीमती जोड़ी थी। वह देकर हज़ारों रुपयो की थैलियां लेकर घर आ गया, एक सुन्दर मकान बनवाया। रहन, सहन के उत्तम सामान से मकान को सजाया, एक दिन कुर्सी पर बाहर बैठा था। तोवह बनियां जो पुराने गिहूं का बर्तन लेगया था, गधे पर सामान लादा हुआ वहां से गुज़रा, तो बानवट को स्त्री ने पहचान लिया, तो पति से बोली, यह गधे वाला है, जिसको मैंने पुराने गेहूं कें साथ बर्तन दे दिया था। अब बानवट ने उसको बुलाया, उसे कहा, अरे तुम मिट्टी का टुकड़ा देकर पचानवे रुपये लूट ले गये हो।

बनियां—हाथ जोड़कर महाराज! मैं तो बर्तन से गेहूं पुराने निकालने लगा था, परन्तु देवी जो ने कहा था, यह बर्तन भी साथ ले जाओ तो मैं साथ ले गया, महाराज! वह बर्तन तो वैसे का वैसा रखा हुआ है। अभी जाकर लाता हूं। बेचारा घर दौड़ा और घर से बर्तन पुराने गेहूं का लाकर सम्मुख रख दिया, देखा तो इसमें पचानवे रुपये रखे हैं। और बनिया की मिट्टी का दाम देकर रुखसत किया।

दूसरे दिन वह चील जो सिर की पगड़ी ले गई थी, अब वह चील उड़ते हुये पगड़ी को उठाकर बानवट के सामने छोड़ कर उड़ गई, नव ट ने उठा कर देखा कि यह तो वही पगड़ी है। साथ पचानवे रुपये बंधे पड़े हैं। अब पहली पूंजी भी गई हुई वापस प्रभु ने ला दी। अब बानवट के द्वार पर मेज़ कुर्सियां बिछी हुई हैं वह आराम से

कुर्सियों पर बैठा दोस्तों मित्रों से बातें कर रहा है।

प्रारब्ध और पुरुषार्थ—अब दोनों जब आये, देखा वह बानवट एक सेठ की भान्ति आरामसे कुर्सियों पर लेट रहा है।पुरुषार्थ ने पूछा तुम्हारी यह अवस्था कैसे होगई है, बानवट ने सारी अपनी राम कहानी बीती सुना दी, अब पुरुषार्थ देख व सुनकर लज्जित हुआ।

सज्जनों—इसका यह अभिप्राय आप न समझ लें कि पुरुषार्थ करना व्यर्थ है। हाथ पर हाथ रखकर बैठ जावें, ऐसा कदाचित मत करना। सुनिये :—

दृष्टान्त

एक लोमड़ी को शिकारी ने तीर मारा, लोमड़ी को टांग पर जा लगा, लोमड़ी लंगड़ी होकर खुड्ड में जा पड़ी, अब चलने फिरने से लाचार है। एक शेर ने हिरन को मारा उसे उठा कर उस खुड्ड पर आकर डाला—जहां पर लोमड़ी पड़ी थी, अब जितना शेर ने खाना था खा लिया बाकी वहीं छोड़कर चला गया, अब लोमड़ी को कई दिन की अजीविका मिल गई, जिस से यह स्वस्थ होगई। एक मनुष्य ने जो यह दृश्य देखा कि लंगड़ी लोमड़ी न चल सकने वाली को आजीविका भगवान् ने घर में पड़ी हुई को पहुंचा दी है। तो व्यर्थ में, मैं सारा दिन रोजी कमाने को टक्कर मारता हूं। मुझे भी भगवान् घर में बैठे पहुंचा देगा, यह विचार कर वह अपने मकान के अन्दर बैठ गया। दो तीन दिन अजीविका को प्रतीक्षा करने पर जब न आई तो कहने लगा, यह झूठ है। किन्तु केवल संसार को धोखा ही देना है। जो लोग यह कहते हैं कि भगवान् पत्थर में जो कीड़ा रहता है, उसको भी अजीविका देता है। लंगड़ी लोमड़ो को खुड्ड में पड़ी को खुड्ड पर आजीविका पहुंचा दी है। मैं दो तीन दिन से भूखा पड़ा रहा, मुझे नहीं दी।

एक सज्जन ने जो इस बात को सुना, तो उसने कहा, ओ भोले ! क्या कह रहा है ? क्या भगवान् सारे संसार की पालना नहीं कर रहा, अरे वह तो पापी से पापी, और पुण्य से पुण्य आत्मा को भी भूखा नहीं रखता बाकी तेरा, यह प्रश्न कि लोमड़ी लंगड़ी को तो खुड्ड में आजीविका पहुंचा दी, और मुझे नहीं पहुंचाई, इसका उत्तर यह है कि लोमड़ी तो लंगड़ी थी जो चलने फिरने से रहित थी, पुरुषार्थ हीन थी, मौहताज थी, वह आजीविका हीन थी, सो पहुंचाई, तो क्या तू भी लंगड़ा था, चल फिर नहीं सकता था जो तुझे पहुंचाता ! अरे तुझे तो शेर की भांति कर्म करना था, जैसे उसने पुरुषार्थ करके शिकार को मारा आप भी खाया और दूसरे को भी दे गया, न कि लंगड़ी लोमड़ी की भांति अन्दर घर में बैठ गया, जो अच्छा, भला पुरुषार्थी होता हुआ भी पुरुष पुरुषार्थहीन बन जावे, उसको कौन देता है। उल्टा उसको धिक्कार, फटकार मिलती है, निखट्टू, बेकार से कौन प्यार करता।

सज्जनों—अब सोचो पुरुषार्थ ने वानवट को दो बार सौ सौ रुपये दिये, परन्तु वानवठ सफलता प्राप्त न करके वह रुपये भी गंवा बैठा परन्तु प्रारब्ध के दो पैसों से वानवट माला माल हो गया। यह क्यों ? आपको एक दृष्टांत देकर समझाता हूं कि पुरुषार्थी का पुरुषार्थ क्यों सफल नहीं हुआ, और प्रारब्ध सफलहुई।

दृष्टान्त

एक सियार और सियारनी जगल में रहते थे। सियारनी गर्भवती थी, बच्चा जनने के दिन निकट आगये, तो सियारनी ने सियार से कहा, कोई खड्ड ढूंडी, जहां पर मैं बच्चे उत्पन्न करूं, ढूंडने पर खुड्ड मिल गई जो वड़ी चौड़ी थी, सियार ने सियारनी से कहा, इस खुड्ड

में घुस जा आज तो मन मांगी मुराद पाई है, तू भी खुली रहेंगी और तेरे बच्चे भी, और मैं भी, सर्दी, वर्षा से भी बचाव होगा, सियारनी ने कहा, यह खुड्डु तो शेर कीं है। वह आ गया तो मेरे को, मेरे बच्चोंको खा जावेगा, अब सियार ने गर्ज कर कहा —

हिम्मते मर्दां मद्दे खुदा

बस अब तू घुस जा, बे फिकर होकर, सियारनी अब खुड्डु के अन्दर घुस गई, बच्चे उत्पन्न किये। तो क्या देखा, खुड्डु पर शेर आ गया है। सियारनी डरते हुए बोली , देख शेर आ गया है। सियार ने शेर को देखा तो गर्ज कर बोला—

हिम्मते मर्दां मद्दे खुदा

यह कहकर तत्काल सर नीचे और टांगें ऊपर कर लीं, अब शेर ने जो देखा, सोचने लगा, कि मैं सारे जंगल का स्वामी, बादशाह और सारे जंगल के पशुओं का मैं सरदार, यह कैसा पशु है ? जिसको मैंने आज तक नहीं देखा, जो निर्भय होकर मेरी खुड्डु में आकर आसन जमाए बैठा है। सियार को उल्टा खड़ा देखकर डर गया, खुड्डु से मुंह मोड़ लिया, इधर बंदर ने जो देखा कि शेर अपनी खुड्डु में सियार को रहते देख और डर कर खुड्डु को छोड़े जा रहा है। तो सामने शेर के आ कर कहा कि यह ता सियार और सियारनी ही आपकी खुड्डु में घुसे हुए हूं। आप इनसे डर के अपनी खुड्डु छोड़ चले हो।

शेर—वाह मूर्ख ! मैं सियार, सियारनी को नहीं जानता तू मुझे धोखा देता है। यह तो कोई बड़ी शक्ति वाला है। जिसको मैंने आज तक नहीं देखा।

बन्दर—वाह हजूर—आप हजूर तो भूल कर रहे हो। चलो मेरे साथ में आगें-आगे मैंऔर आप मेरे पीछे २ चलिये, देखिये वह सि ार

सियारनी हैं, या नहीं।

शेर—अच्छा चलो, मैं तो पीछे,पीछे दूर होंकर चलूंगा।

बन्दर—हां हां आगे २ मैं चलूंगा, अब आगे २ बन्दर पीछे २ शेर दूर दूर होकर चला, जब खुड्ड के निकट पहुंचे।

सियारनी—सियार से बोली, ओ देख बंदर शेर को बुला लाया है

सियार—गर्ज कर बोला, 'हिम्मते मर्दां मद्दे खुदा' सर नीचे टांगें ऊपर कर लीं फिर सियारनी से पूछा, कि बच्चे क्यों रो रहे हैं।

सियारनी—तुझ को पहले भो कहा था, कि बच्चे शेर का मांस खाना मांगते हैं। तो पहले परमात्मा ने शेर को स्वयं भेजा था, तू देखता रहा, वह आप को देख कर भाग गया था, तो मैंने बन्दर को भेजा था कि किसी तरह शेर को यहां ले आवे, अब वह बन्दर शेर कों साथ लाया है। अब शेर पर वार कर ताकि फ़िर भागने न पावे।

शेर—सियारनी की वात सुनकर डर गया, तत्काल भागा, अब वन्दर शेर के पीछे २ भागते हुए कह रहा है, ठहरो जरा ठहरो तो सही, अब शेर ठहर गया, और कहा दुष्ट ! तू मुझे मरवाना चाहता था।

बन्दर—हज़ूर आप डर क्यों गये, यदि मारता तो पहले मुझे मारता, आप यूंही भाग पड़े हो।

शेर—तू मुझे फंसाना चाहता है तू तो छलांग लगा कर वृक्ष पर चड़ जायगा।

बन्दर—नहीं महाराज ! आप मेरे साथ फिर चलिये मैं अपनी दुम को आप की दुम के साथ बांध देता हूं। अब तो मैं छलांग नहीं लगा सकूंगा, यदि वह मारेगा तो पहले मैं मरूंगा।

शेर—अच्छा चलो अब बन्दर की दुम से अपनी दुम बंधवा ली आगे २ बन्दर, पीछे-पोछे शेर जब दोनों खुड्ड के निकट पहुंच गये तो............

सियारनी...सियार से बोली, ओ देख शेर फिर आ गया है।

सियार...हिम्मते मर्दां मद्दे खुदा, यह कह कर सर नीचे टांगें ऊपर करके खड़ा हो गया, और सियारन से पूछा, कि बच्चे बार २ क्यों रो रहे हैं ?

सियारनी—बच्चे रोयें नहीं तो क्या करें शेर का मांस खाने को तड़प रहे हैं। पहली बार परमात्मा ने शेर को स्वयं भेजा था तो आपने उसे पकड़ने में बेपरवाही की थी फिर बन्दर को मैंने भेजा था कि शेर को अपनी दुम से बाँध के लाओ, ताकि फिर भाग न जावे, अब शीघ्रता से शेर को पकड़ लो, वह जाने न पावे।

शेर—अब शेर ने जब सियारनी की बात को सुना तो बन्दर को साथ घसीटता हुआ ज़ोर से भाग निकला, और बन्दर का भी कचूमर निकाल दिया। और सदेव के लिये शेर खुड्ड को त्याग कर चला गया।

अब इसी दृष्टांत पर ज़रा विचार करो, कि शेर जो जंगल का स्वामी (राजा) था क्या उसे सियार, सियारनी ने अपने बाहु बल से निकाला था, नहीं २ कदाचित नहीं, सियार ने अपने पुरुषार्थ के साथ भगवान की शक्ति को पुकारा था, अपनापन खो दिया, तो सफलता पाई।

सज्जनो...पुरुषार्थ और प्रारब्ध में यही भेद था, पुरुषार्थी के पुरुषार्थ में 'मम' और 'अहम' का भाव अहंकार' था, प्रारब्ध में अहम 'मम्' नहीं थी, प्रारब्ध ने दो पैसे देते हुए, बानवट को यह कहा था प्यारे ! मेरे पास तो दो पैसे ही हैं। जो आपकी भेंट करता हूं। भगवान तुझे इसमें अपनी बरकत देंगे। उसने अपनापन मिटा दिया था, यह भोग अदृष्ट। वेद ने कहा ऐ मनुष्य ! तू कर्म कर, वह कर्म कौनसा करे जिस कर्म के करने से आवागमन से छुटकारा प्राप्त हो

सुनिये कर्म कई प्रकार के हैं।

(१) एक दुकानदार दुकानदारी करता है। दाम लेकर सौदा देता हैं, या एक डाक्टर दवाई देकर दाम लेता है। या एक मास्टर वेतन लेकर विद्या पढ़ाता है। यह कर्म नहीं है। किन्तु अकर्म है।

(२) एक ममुष्य को पूर्व कर्मों के फल स्वरूप धन, दौलत, महल, माड़ी, नौकर, चाकर, मिले हैं। परन्तु वह इसको पाकर मांस, शराब खाता पीता है। निर्बलों और दुःखियों की परवाह तक भी नहीं करता यह विकर्म है।

(३) मनुष्य ऐसा कर्म करता है जिससे अपनी हानि भी न हो। और दूसरों का भला भी हो जावे, यह सुकर्म कर्म है।

वास्त्विक कर्म

(४) वास्त्विक कर्म—जिससे मनुष्य को कर्म करने से उसके मन में बल आवे,और आत्मा का यश हो, यह कर्म कहलाता है।

मन में कब बल आवेगा, बल तो आवेगा—बल शब्द बना है ब+ल अक्षरों से, ब का अर्थ है बदी ल का अर्थ है लय करना अर्थात बदी के त्याग करने पर बल आवेगा, जैसे चोरी, डाका, असत्य बोलना स्वार्थवश कार्य करना, दूसरे को हानि पहुंचाना, इत्यादि ऐसे अशुभ कर्मों के त्याग से बल प्राप्त होता है।

यह कब अशुब कर्म दूर होंगे, मन शब्द बना हैं, म+न से, इसे उल्टा दो, तो नम बन जावेगा, अर्थात जब यह अपने शक्ति वाले को ऊपर देखेगा, तो यह झुकेगा, नम होगा तो बुराई से दूर रहेगा, निर्भय होगा, बलवान से सभी बुराईयां दूर रहती हैं।

दूसरी बात, आत्मा का यश होगा, यह कैसे होगा, जब मनुष्य पर उपकार करेगा। एक मनुष्य धनवान है, बलवान है, ज्ञानवान है

परन्तु धनवान अपने महलों में रहता है। नाना प्रकार के भोजन, फ़ल, फूल इत्यादि खाता है, मोटरकारों हवाई जहाज़ों की सवारी करता है। न आये की खुशी न गये का ग़म। न दूसरों के दु.ख को अनुभव करता है। तो ऐसे मनुष्य का कोई यश गान करेगा, कदाचित् नहीं अपना खाया पीया तो टट्टी पेशाब बन जावेगा, बोया नहीं तो फिर काटेगा क्या।

हां यशतो तब होगा, जब भगवान् के लिये धन, ऐश्वर्य पदार्थों को उसकी दु:खी प्रजा के दु:ख, दर्द मिटाने में लगायेगी, फिर उसका यश वह दीन, दु:खी, निर्बल, संसार में गायेंगे। भगवान कृष्ण ने कहा है—धयान मार्ग से कर्म फल त्याग अति उत्तम है क्योंकि कर्म फल त्याग से ही शान्ति मिलती है।

कर्म (१)—एक मनुष्य अपने मुहल्लेमें नलका या कुआं लगवाता है। जिससे स्वयं भी लाभ उठाता है, और मुहल्ले वाले भी लाभ उठाते हैं। यह कर्म कहलाता है।

अच्छा कर्म (२)

एक मनुष्य नगर मैं कुआं या बावली बना देता हैं। जिसमें सर्व नगरवासी नर-नारी लाभ उठाते हैं। यह अच्छा कर्म है।

बहुत अच्छा कर्म (३)

एक मनुष्य नगर के ऐसे स्थान पर कुआं लगवाता है जिससे, प्राणी मात्र लाभ उठा सकते हैं। यह बहुत अच्छा कर्म है। कैसे सुनिये:-

खैरपुर सादात, ज़िला मज़फ्फर गढ़ (पाकिस्तान) Pakistan में एक महबूब नामी मुसलमान था इसका कर्म साधारण जनता तक को पानी पिलाना था, वह कैसे, वह सदैव बारह मास अपने कन्धे पर एक पानी का घड़ा भरे हुए रखे रहता था, साथ ही पानी पिलाने

का बर्तन (डोली) भी, वह पानी जब पिलाता, तो पानी पीने वाले को पानी देते हुए हंस कर कहता, 'सदके जाऊं उसदे नाम तों, जो प्यासों की प्यास को शान्त कर रहा है।' कहीं मजलिस हो, उर्स हो–मेला हो, वह पानी पिलाता जाता, परन्तु निष्काम भाव से, फ़िर उस ने ऐसे स्थान पर कुआं खोदा, उसे तैयार कराया जहां पर यात्रियों को पानी की अतिआवश्यकता थी तो यात्री आते जाते पानी पीते, उसकी महिमा गाते। जब उसकी मृत्यु हुई, तो उसकी समाध (कबर) एक हिन्दू भाई ने जिसका नाम दीवान भेरीलाल है बनवाई, परिणाम उसका क्या हुआ कि उसकी समाध पर हिन्दू मुसलमान सभी आकर नमस्कार, सिजदा करते। बढ़ते २ वह एक जियारत गाह बन गई, वह महबूब एक साधारण मुसलमान था। परन्तु वह महबूब उसका सच्चा वास्त्विक महबूब बन गया।

जात पान्त पूच्छे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि को होई।

परन्तु अब उसकी कबर पर दूर २ से बड़े मख़दूम, सैयद आकर सिजदा करते हैं और मेले लगते हैं। यह क्यों, उसने प्यासों को निष्काम भाव से अमृत पिलाया, अमर ही हो गया, यह है—सब से अच्छा कर्म—कवि लिखता है —

तिशना में नालद कि कुआं आवे गवार।
आब हम नालद कि कुआं आवे स्वार॥

अर्थात्—प्यासा रोता है चिलाता है कि मीठा पानी कहां है—पानी भी चिल्लाता है कि पीने वाला कहां है–यदि हम एक कदम परमात्मा की तरफ बढ़ाते हैं तो परमात्मा सौ कदम बढ़ाकर हमें अपनी गोद में लेता है।

उत्तम कर्म

मनुष्य नाम है मनन शील का—जो विचार शीलता से काय करता है। मनुष्य की पहचान शरीर से नहीं होती, चाहे मनुष्य का शरीर कितना ही सुन्दर हृष्ट पुष्ट क्यों नहो। शरीर तो नाशवान है। पशु की मृत्यु होती है शरीर त्याग से। मनुष्य की मृत्यु होती है शुद्ध आचार के न होने से—ऐसा मनुष्य जीवित रहता हुआ भी मृत के समान ही है। शुद्ध आचार होते हैं, शुद्ध विचारों से। सारा संसार ही विचारों के आधार पर चलरहा है। शुभ विचारों के होने से उन्नति और अशुभ विचारों के होने से अवनति होती है। मनुष्य की आंख बिगड़ जाय, या कान बिगड़ जाय, कोई भी अंग भंग हो जाय, तो मनुष्य जीवित रह सकता है। परन्तु मनुष्य के सर्वांग स्वस्थ और पूर्ण हों, यदि वह विचार हीन (बुद्धिहीन) हो तो वह पशु के समान है। शुद्ध विचारों के वास्ते वेद शास्ज, ऋषि कृत ग्रंथों का स्वाध्याय, सत्संग और प्रचार हो। प्रचार कार्य उत्तम कर्म कहलाता है।

उत्तम कर्म है प्रचार :—

कौन कौन वक्ता और कौन कौन श्रोता होते हैं ?

वक्ता की तीन श्रेणियां है।

(१) प्रचारक (२) उपदेशक (३) सुधारक।

(१) प्रचारक

वर्तमान कालमें प्रचारक वहहै जो किसी वस्तु का विषय का प्रापेगण्डा करता है जैसे एक मनुष्य अलैक्शन के लिए अपने आप को खड़ाकरता है तो वह प्रचारक कोरुपया देकर अपने हितार्थ प्रचार कराने और दूसरे की निन्दा या गिल्ला तथा उसको लोगों की दृष्टि में घटिया प्रकट करने और अपनी प्रशंसा और स्तुति के गीत गाने अर्थ नियत

करता है। प्रचारक 'जिसका खाये उसी का गाये'। की भांति प्रचार करता है। उसे अपने भावी जीवन की उन्नति या अवनति का कोई ध्यान नहीं होता। न वह सत्य असत्य की तमीज़ करता है। उसे तो चार पैसे ही चाहियें। वह मूढ़ और मन्दमति यह नहीं समझता, कि यह वाणी जो पानी से, अर्थात अमृत से बनी है जो लाखों करोड़ों रुपये देने पर भी नहीं मिलती यूं हो जड़ बुद्धि होकर पैसे टके में खो रहा हूं। अमृत को खोकर विष ले रहा हूं। चाहे वह अलैक्शन में खड़ा होने वाला आचार हीन, चोर डाकू ही क्यों न हो। लोगों को उसकी प्रशंसा करके वोट देने के वास्ते आकृष्ट करता है। भोले लोग प्रचारक की रसीली, मधुर आकृष्ट करने वाली आवाज़ पर लटटू होकर हिरण की भांति जो राग पर मस्त होकर अपनी जान खो देता है वैसे ही अपना कीमती अनमोल वोट उस आचारहीन को राग के नशे में अंधे होकर दे आते हैं। और फिर सदा के लिए रोते रहते हैं। ऐसे प्रचारक को भगवान और भगवान की रचना दृष्टिगोचर नहीं होती। इस वाणी की कीमत पूछे उस गूंगे से, जो लाखों करोड़ों की सम्पत्ति का मालिक है। क्या तू चाहता है कि भगवान तेरी इस वाणी में बोलने की शक्ति प्रदान करे, तो वह ज़ार ज़ार रोते हुये पुकार करते हुए कहेगा कि मेरी लाखों करोड़ों की सम्पत्ति लेलो परन्तु मुझे बोलने की शक्ति दिला दो। अब सोचो, विचारो, क्या लाखो करोड़ों की सम्पत्ति अर्पण करने पर यह बोलने वाली वाणी कहीं से मिलती है। क्याकोई ऐसा डाक्टर, वैद्य या साईन्सदान है जो दिला सके। वर्तमान काल में सिग्रेट बीड़ी के प्रचारकों को देखो, तीन-तीन, चार-चार प्रचारक इकठे होकर बाजा, चिमटा, खड़ताल, ढोलक लेकर उनमें से एक जनाना वैश्या का भेष धारण किये हुए नाचता है और सभी

मिलकर सुरीली तान से लोगों को आकृष्ट करके पहले मुफत सिग्रेट बीड़ी देते हैं, पश्चात उनको सदा के वास्ते अंधा कर जाते हैं। इसी प्रकार से सिनेमा आदि।

अब ऐसे आचारहीन प्रचारकों की कौन रोकथाम करे। जिस देश के वर्तमान काल में राजा और राज्य कर्मचारी इन विषयों में स्वयम् अंधे हों। जो पूर्व कर्मों की कमाई का फल पाया हुआ है। वह नशे में न शै बने हुये ज़रा भी विचार नहीं करते कि हम भी दूसरे मनुष्यों की तरह दो हाथ, दो पांव, आंख, कान, नाक, रखने वाले ही हैं। और ऐसे अनेको प्राणि मात्र जो प्रातः से सायंकाल पांव की की एड़ी से चोटींतकसर्दी गर्मी में पुरुषार्थ करते हुए भी उनको पेटभर अन्न प्राप्त नहीं होता। परन्तु हमें रहने की कोठियां, बिजली के पंखे चढ़ने को नाना प्रकार की मोटर कारें, और हवाई जहाज़, और सब सुखों के सामान मिले हुए हैं। यह किस कर्म की कमाई का फल है? उनका उद्देश्य भी यही है चाहे प्रजा डूबे या मरे उन्हें खज़ाने के वास्ते रुपया चाहिये। ताकि हमें हज़ारों रुपया मासिक वेतन मिलता रहे।

ओ राजाधिकारियो! संभल जाओ। यह जीवन अनमोल जीवन है, मूर्खता, जहालत, आचार हीनता, का प्रचार करने और कराने वाले को (अगला) भावी जीवन वर्तमान जैसा जीवन नहीं मिलेगा किन्तु बुद्धि से रहित, आंखों से अंधे, कानों से बहरे, हाथ पांव से लूले लंगड़े बनोंगे। गलीं कूचा पर पड़े हाहाकार करते हुए रोते रहोगे यह न्य य तो न्यायकारी करेगा। देखो अपने राज्य के अन्दर कितने अंधे, बहरे, बुद्धिहीन, गूंगे, लंगड़े इत्यादि हैं। उनकी क्या गति हो रही है।

यदि तुम जीना चाहते हो और अपने भावी जीवन के लिए कुछ

जमा करना चाहते हो, तो ऐसे दुष्ट प्रचारकों की रोकथाम करो। शुद्ध सदाचारी तथा शुभ विचार वाले प्रचारक, जो मनुष्यों के जीवन को शुभ मार्ग बतलाने वाले और संसार में सुख शांति का प्रचार करने वाले हों नियत करो।

वर्तमान राज्य के अधिकारी–प्रचारक

एक मनुष्य घर से रवाना हुआ कि कहीं जाकर नोकरी करूं। स्थान-स्थान पर जाकर नौकरी करने की याचना की, पर नोकरीकहीं न मिली। खाने को पैसा न रहा तो थक कर भीख मांगनी आरम्भ कर दी, कुछ दिन बीतने के पश्चात एक सेठ जी ने उस भीख मांगने वाले से पूछा कि तू नौकरी करेगा भिखारी नौकरी का नाम सुनते ही नौकरी देने वाले के पांव पर गिर पड़ा और कर जोड़ कर प्रार्थना की-महाराज ! घर से चला था कि जाकर कहीं नौकरी करूंगा परन्तु स्थान स्थान पर घूमता रहा,याचना करता रहा किसी ने मुझ पर कृपा नहीं की आज भगवान ने आपको प्रेरणा कर दी है मैं आपका बहुत आभारी हूंगा, जो मुझे नौकरी दे दोगे।

सेठ : अब तुम क्या काम किया करते हो ?

भिखारी : महाराज ! भीख मांग कर गुज़ारा करता हूं।

सेठ : कौन कौन से मुहल्ले में भीख मांगने जाया करता है ?

भिखारी : अमुक २ मुहल्ला से भीख मांग लाता हूं।

सेठ : अच्छा देखो ! तुम को नौकरी देता हूं, कोई नया कार्य नहीं बतलाता हूं ताकि तुम्हें कष्ट न हो, तुम यही कार्य करो—भीख मांगने का ही, अब तुम इन मुहल्लों के अतिरिक्त अमुक अमुक मुहल्लों में भी जाकर भीख मांग लाया करो, जितना आटा नित्यप्रति का प्राप्त हुआ करे, लाकर मुझे दे दिया करो और मैं तुमको दो सेर आटा

और चार आना प्रतिदिन दिया करूंगा।

भिखारी : सेठ के पांव पड़कर हाथ जोड़कर धन्यवाद करते हुए बोला—महाराज ! आपने बड़ी कृपा की है जो मुझे नौकरी दे दी है, अब भिखारी मुहल्ला में जाकर भीख मांगता, नित्यप्रति का पन्द्रह सोलह सेर के लगभग आटा इकट्ठा हो जाता। वह लाकर सेठ जी के यहां दे देता, और सेठ जी से चार आना और दो सेर आटा लेकर बड़ी प्रसन्नता से ले जाता। अब नौकरी लग जाने पर भिखारी ने अपने घर को चिठ्ठी लिखकर भेजी कि आपको यह जानकर हर्ष ही होगा कि प्रभु को कृपा से आज मेरी नौकरी लग गई है अब मैं बहुत प्रसन्न हूं।

जब चिठ्ठी उसके घर पहुंची तो फिर परिवार ने चिठ्ठी भेजकर पूछा कि अब तक तुम वहां क्या करते रहे हो । अब जो नौकरी लगी है, किस प्रकार की हैं। भिखारी ने उत्तर में लिखा कि पहले प हल पहुंच कर स्थान स्थान पर नौकरी की तलाश की, पर नौकरी न मिली—आखिर फिर भीख मांगनी आरम्भ कर दी । अब दो चार दिन से नौकरी लगी है। नौकरी का कार्य तो वही है जो पहले नौकरी न मिलने पर भिक्षा मांगनी आरम्भ कर दी थी । वही है अब नौकरी लगने पर भेद केवल इतना ही कार्यक्रम में है कि पहले मैं दो मुहल्लों में जाकर भीख मांगकर निर्वाह करता था, अब पांच छः और मुहल्लों में भी साथ भिक्षार्थं जाना पड़ता है । कोई लगभग पन्द्रह सोलह सेर आटा रोज़ाना इकट्ठा हो जाता है वह लाकर सेठ जी को दे देता हूं। वह दो सेर आटा और चार आना रोज़ाना वेतन मुझे दे देते हैं अब आटा से रोटी का काम चल जाता है। एक आना सब्ज़ी इत्यादि पर खर्च करता हूं तीन आना नित्यप्रति बच जाते हैं।

परिवार में चिट्ठी पहुंची—खोला, उसे पढ़ा। फिर उत्तर में लिखा

ओ मूर्ख ! पन्द्रह सोलह सेर आटा जिसका मूल्य पांच छः रुपये होता है तू वह सेठ को जाकर दे देता है और चार आना नकद और दो सेर आटा लेकर खुश हो रहा है।

प्यारे : यही अवस्था वर्त्तमान प्रचारकों को है साथ ही राज्याधिकारियों की हो रही है। 'कोई मरे या जीवे—सुथरा घोल पताशे पीवे।' इनको क्या।

उपदेशक २

जो सत्य, असत्य मार्ग को कथा व्याख्यान रूप से दर्शाते हैं और सत्संग के रूप में वक्ता बनने और श्रद्धालु लोग ही सत्संग को सुनने को आते हैं ये पुस्तक या बुद्धि अनुसार उपदेश करते हैं। अब वेद उपदेशक के सम्बन्ध में क्या आदेश करता है, पढ़िए :—

ओ३म् गन्ता नो यज्ञं यज्ञियाः सुशमि श्रोता हवम रक्ष एवयामरुत् ज्यष्ठासो न पार्वतासो व्योमनि यूयं तस्य प्रचेतसः स्यात् दुर्धर्त्तवोनिदः ॥

(ऋग्वेद मं० ५ सू० ८७ मं० ९)

भावार्थ—हे विद्वान् जनों ! आप लोग विद्या के प्रचार नामक व्यवहार के प्रचार से धर्म संबन्धी कार्यों को करके अन्यों से भी कराओ और निंदा आदि दोषों से मनुष्यों को पृथक् करके परमेश्वर की ओर प्रवृत्त करो और स्वयं भी ऐसा होवो। अब विद्वान् कैसा होनाचाहिये

ओ३म युधेन्द्रो मह्वा वीरवश्चकार देवेभ्यः सत्पतिश्चर्षणिप्राः विवस्वतः सदने अस्य तानि विप्रा उक्थेभिः कवयो गृणान्ति ।

(ऋ० मं० ३ सू० ३४ म० ७)

भावार्थ : उन्हीं लोणों को विद्वान् और धर्मात्मा जानना च हए कि जो राजादि की झूठी स्तुति को त्याग कर धर्म सम्बन्धी कर्मों को

प्रशंसा करते हैं और वही राजा होने के योग्य हैं कि जो धर्म युक्त आचरणों को करते हैं।

संज्जनों : बेद भगवान् ने आदेश किया है ऐसे विद्वान् बनो कि धर्म सम्बन्धी कार्यों को पहले स्वयं करो फिर दूसरों से करवाओ और परमेश्वर की ओर स्वयं प्रवृत्त होकर फिर दूसरों को प्रवृत्त कराओ।

वर्त्तमान काल में प्रायः उपदेशक लोग दूसरों को धर्म मार्ग और सत्य का उपदेश करते हैं। पर स्वयं कोसों दूर । इस वेद की पवित्र-अमृत वाणी की जय पुकारने वाले स्वयं अब वेद कैसे पढ़ें और भगवान् का भजन कैसे करें। उपदेशक प्रातः से रात्रि के बारह-बारह बजे तक उत्सव भुगतायें। तीन दिन उत्सव कार्य भुगताने के पश्चात् चौथे दि का आर्डर कूच सफ़र यात्रा, फिर कोल्हू के बैल की भांति वही चक्कर। भला संसार को संमार्ग दिखाने वाले स्वयं बारह २ बजे रात तक लोगों को गाना,बजाना,उपदेश सुनाना आदि में लगे रहें और दूसरो को बेदार किये रखें। फिर पण्डित, उपदेशक प्रातः क्यों कर जागें और भगवान् की पूजा कैसे करें । निदान ! परिणाम यह कि लोगों को भी प्रातः अमृत बेला से अमृत दात प्राप्त करने और प्रभु के चरणों से वंचित किया। आप भी डूबे, दूसरों को भी डुबो दिया। वेदी पर तो खड़े होकर लोगों को ललकार २ कर उपदेश करते हैं कि चार घड़ी रात्रि रहे जागो । भगवान् की अमृत दात मिलती है। जीवन शुद्ध, पवित्र होता है इत्यादि। पर कहने वाले ने कह दिया सुनने वाले ने सुन लिया दोनों हाथ ताली बज गई, पल्ला झाड़कर सब घर लौट गये फिर 'ढाक के वही तीन पात' । अब ऐसे उपदेश और कथा के सुनाने से और सुनने वाले को क्या लाभ । भोग के पुजारी होते हुए योगका उपदेश करें। भला चोर तो चोरी करे अंधेरे में छुप कर,

मगर विद्वान् चोरी करें सूर्य के प्रकाश में, और जनता के सामने होकर, फिर जनता उसके सत्य उपदेश को कैसे धारण करे, और संसार में सुख शान्ति कैसे हो ?

वेद भगवान् ने स्पष्ट कहा है उन्हीं लोगों को विद्वान् और धर्मात्मा जानना चाहिये कि जो राजादि की झूठी स्तुति को त्याग, धर्म सम्बन्धी कर्मों की प्रशंसा करे। कितना उत्तम आदेश वेद भगवान् ने किया है, विद्वान् तो वेद ज्ञान के अनमोल रत्न का मालिक स्वामी होता है, जिसके आगे बड़े बड़े राजे, महाराजे नमस्कार करते हैं, परन्तु वर्त्तमान काल में विद्वान् दर-दर पर धनियों के द्वार पर हाथ फैलाये उनकी झूठी प्रशंसा करने में अपना सौभाग्य समझते हैं। चाहे वह कितना ही आचारहीन क्यों न हो । न जप, न तप, न प्रभु भक्ति, न ईश्वर विश्वास, अब संसार का उद्धार (सुधार) ऐसे पण्डितों और उपदेशकों से कैसे हो। भगवान् ही उनको सुमति प्रदान करे।

भला आज इस प्रकार के प्रचारक उपदेशक महोदयों से पूछा जाय, क्यों महाराज ! आपका दिनचर्या प्रोग्राम कैसा होता है ? क्या आपके परिवार और घरों में पांच यज्ञों को किया जाता हैं। वेद का स्वाध्याय होता है-उत्तर दुर्लभ। मैं तो कहा करता हूं कि मुसलमान का लड़का मुसलमान, सिख का लड़का सिख, ईसाई का लड़का ईसाई, सनातनी का लड़का सनातनी बनेगा, परन्तु आर्यों की संतान आर्य दुर्लभ बनेगा क्योंकि यह तो 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम' के पुकार करने वाले हैं संसारके ठेकेदार हैं। अपने लिए नहीं । यदि आर्यकहलाने वाले स्वयं कर्म काण्डी होते तो इनका परिवार आर्य न होते, यहतो हाथी के दांत खाने के और, दिखाने के और की भांति ही हैं। हां एक बात का विशेष रूप से प्रचार हुआ हैं-वह शब्द है 'नमस्ते' बोलने का-वह भी केवल वाणी से न हाथ मिलायेंगे, न सिर झुकाएंगे, क्योंकि सिर झुकाना तो

अपनी हतक समझते हैं, गुरु डम नाम से पुकारते हैं, यह अहंकार से स्वयं न झुकेंगे, तो दूसरों को कैसे झुका सकेंगे भला टीले पर वर्षा होने और बीज बोने से क्या कुछ उगेगा। नहीं हरगिज़ नहीं देखो वेद क्या आदेश करता है (यजुर्वेद अध्याय १९ म० ६२)

आच्या जानु दक्षिणतो निषद्येमं यज्ञमभिगृणीत विश्वे।
मा हि ७ सिष्ट पितरः केन चिन्नो यद्व आगः पुरुषता कराम् ॥

भावार्थ : जिनके पितृ लोग जब समीप आवें, अथवा संतान लोग उनके समीप जावें तब भूमि में घुटने टिका नमस्कार कर उनको प्रसन्न करें। पितृ लोग भी आशीर्वाद विद्या और अच्छी शिक्षा के उपदेश से अपनी सतानों को प्रसन्न करके सदा रक्षा किया करें।

मनु महाराज लिखते हैं—

ब्रह्मारंभेऽवसाने च पादौ ग्राह्यौ गुरोः सदा।
संहत्य हस्तावधयेयं स हि ब्रह्मञ्जलिः स्मृतिः ॥ मनु २ ६१

भावार्थ : सदा वेद पढ़ने के आरम्भ में गुरु के चरण का स्पर्श कर हाथ जोड़ कर अध्ययन करना और पुनः समाप्ति में गुरु के चरणों को स्पर्श करना ब्रह्माञ्जलि है।

व्यत्यस्तपाणिना कार्यमुपसंगृहणं गुरोः
सव्येन सव्यः स्प्रष्टव्यो दक्षिणेन च दक्षिणः ॥२॥६२

भावार्थ : गुरु के वाम चरण कोअपने वाम हाथ से और दक्षिण चरण को अपने दक्षिण हाथ से इस प्रकार अपने हाथों को बदलकर गुरु के चरणों को दोनों हाथों से स्पर्श करे।

प्रियगण : जो प्राणी खाकर जुगाली करते हैं उनके मल त्याग में

दुर्गन्ध नहीं होती या बहुत कम होती है, और जो जुगाली नहीं करते उनके मलमूत्र में दुर्गन्ध आती है। ऐसे ही जो मनुष्य श्रवण करके मनन करने वाला होता है, जो तप त्याग यज्ञ दान आदि करता है उसमें दुर्गन्ध आदि नहीं होती जैसे गाय आदि जुगाली करने वाले पशुओं के मलमूत्र को चौका आदि में लेप करते हैं जो पवित्र करने वाले उपजाऊ करने वाले होते हैं। ऐसे मनुष्यों का कर्म उनको पवित्र करता है और नई उपज ज्ञान की करता है और जो मनन नहीं करते दान आदि नहीं करते उनसे दुर्गन्ध आती है अर्थात अहम-मम की दुर्गन्ध आती है उनके अन्तःकरण अशुद्ध रहते हैं और नई उपज अनुभव नहीं करते।

स्वार्थी मनुष्य को धर्म का स्वरूप मालूम नहीं हो सकता। यदि कोई मनुष्य स्वार्थ का त्याग कर देता है और अहंकार वृत्ति रखता है तो उसे धर्म का ज्ञान तो हो जाएगा मगर परमेश्वर का नहीं।

जो उपदेशक यह ठान कर बोलता है कि आज अमूक आदमी को रगड़ना है नाम ले ले कर, तो वह कठोर तामसिक होता है और जब नाम नहीं लेता परन्तु उसकी तरफ संकेत करके बीच-बीच में कोसता है कि अपने अपने लोग समझ लेवें, मेरी सभ्यता में फर्क न आये या निशाना न बनूं। तो उसका यह स्वभाव सभ्यता का नहीं होता, बल्कि उसकी निर्बलता को प्रकट करता है यह तामसिक होता है, इस से घृणा और द्वेष आपस में बढ़ती है एक दूसरे के सामने मुंह नहीं लग सकता।

(२) जो उपदेशक इस भाव से बोलता है कि मैं बहुत अच्छा बोलने वाला हूं ऐसी बातें सुनाऊं, इस ढंग से बनाकर सुणाऊं जिससे लोग सुनने वाले मेरी प्रशंसा करें व वाह-वाह करें और मुझ पर लट्टू हो जायें, तो यह स्वभाव राजसिक होता है। इसका फल केवल वाह-वाह है। लोगों के दिल नहीं बदलते दिमाग वाह-वाह करता है।

(३) जो उपदेशक सामान्य रूप से बिना किसी लागलपेट के सर्व

हित अर्थ बोलता है । यह स्वभाव सात्विक होता है इससे उपदेशक के अपने पवित्र भावों का जनता के हृदय पर प्रभाव पड़ता है ।

लालचन्द : जो उपदेशक ज्ञान और वाणी अच्छी रखता है। परमात्मा के सम्बन्ध में अथवा संसार के परामर्थ व्यवहार सम्बन्ध में ज्ञान भी रखता है और जनता के सम्मुख भली प्रकार से प्रकट कर सकता है, परन्तु स्वयं आचरण नहीं करता उसे क्या प्राप्त होगा ।

सन्त महात्मा : उसे अच्छा खाना पींना, अच्छा पहनना और धन भी मिल जावेगा, और मान भी, परन्तु जितनी अधिक सामान सामग्री उसे मिलेगी, उतना वह प्रभु से और भी दूर होता जाएगा । उसे अपना मोह और लोभ अन्त में काम, क्रोध में गिरा देवेगा ।

केदारसिंह : महाराज ! जो उपदेशक उपदेश और कथा बोलने पढ़ने में यह भाव रखता हो,कि मैं ही यह कार्य करूं,जनता में मेरी ही वाह-वाह हो, और किसी को यह यश प्राप्त न हो, दूसरों को बोलने का समय ही न मिले, या उस समय (दूसरे के समय) को भी अपने प्रयोग मैं लाये, तो उस उपदेशक का क्या होगा ।

सन्त महात्मा : उस उपदेशक में कामवृत्ति कामवासना अधिक होगी, इस प्रकार के लोभ अहंकार (अभिमान) मिश्रित का परिणाम होगा या ऐसे स्वभाव वाले का ही दिल जलता रहता है ।

नोट : विस्तार पूर्वक लेखक की लिखी अतिथि 'यज्ञ प्रसाद' नामक पुस्तक में पढ़ें ।

'परउपकार करने से पूर्व उपकारी बनो'

प्रेमनाथ अच्छा पढ़ा लिखा और एक अच्छी सम्पत्ति का स्वामी था । अपने नगर में अच्छी मान प्रतिष्ठा थी । देश जाति का इतना सेवक था कि दिन भर इसी धुन में लगा रहता । इतना अवकाश न था, दो घड़ी घर में भी बाल बच्चों में बैठकर प्रेम प्यार की व त

करता, और न अपने घर के कार्यक्रम की ओर रुचि और उनकी देख भाल करता और ध्यान देता । हां, घर में कई सेवक रख लिए थे। वही शासन कार्यक्रम करते और चलाते। उसकी धर्मपत्नी बहुत सुशील बड़े शुद्ध और पवित्र विचार वाली थी । उसके दो कन्यायें और दो बेटे थे। यह कन्याएं और बेटे बड़ी अभिलाषा रखते थे कि पिता जी दो घड़ी हमारे साथ बैठकर प्रेम प्यार की बातें करें, परन्तु दुर्भाग्य वश यह अभिलाषा बालकों की पूर्ण न हो। कारण यह था कि बच्चों को खिलाये तो सेवक, उन्हें नगर में ले जाए घुमाये तो सेवक, यदि मिलकर बैठें तो सेवकों के संग, कोई घर रोगी हो जावे तो वैद्य डाक्टर को लाना, औषधि लाना, खिलाना पिलाना, लगाना तो सेवक ही करें। जब बच्चे दिल बहलाने को सिनेमा (चित्रपट) देखने जायें तो साथ सेवक जायें, कभी कभी बच्चे नौकरों के साथ अकेले चले जाते थे। तो कभी कभी कन्याएं नौकरों के साथ अकेली चली जाती थीं। प्रेमनाथ ने कभी भी न देखा न पूछा कि कौन किधर जाता है। कहां जाता है।

अब कन्यायें, बेटे युवावस्था में हो गये, फिर भी उनकी यही अवस्था रही । उन्हें सेवकों का संग ही सदैव रहता । अपनी अपनी मन-मानी करने से कई प्रकार के दोषों का ग्रास बनने लगे और अपने अपने दोष को छिपाने में एक दूसरे को कुछ न कह सके और न भय से एक दूसरे का भेद प्रकट करते और न एक दूसरे को जतलाते। दैवयोग से धर्मपत्नी को अन्तड़ियों (पेचिश) का रोग हो गया। दिन भर में कई २ बार टट्टी जानेसे शरीर अत्यन्त निर्बल हो गया था, परन्तु पति देव अपनी धुन में मस्त कभी दो मिण्ट भी निकट न आ कर बैठे दुर्भाग्य वश ज़रा घर के अन्दर आ जावें, तो बिलबिलाती हुई, देवी कर जोड़ अपने रोग को प्रकट भी करती, तो वह यह कहते, मुझे तो मरने तक का समय नहीं मिलता । तुम चाहो जितने डाक्टर वैद्य

बुला लो अपनी इच्छा से औषधीं कराओ। जितना भी खर्च ही करो, परन्तु मुझे कुछ न कहो।

अबं डाक्टर वैद्य को नौकर बुला लाते, कुछ दिन एक डाक्टर को बुलाया जाता, फिर दूसरा, एक दिन वैद्य आता, तो तीसरे दिन हकीम साहिव को धुलाया जाता। जो भी आता बस यही कहता, दो चार दिन में अवस्था ठीक हो जाएगी, परन्तु उनकी कामना, भावना तो जेव पुर करने की होती थी, परन्तु कुछ ऐसे भी भगवान् का हृदय में भय रखने वाले वैद्य, डाक्टर जो कर्त्तव्य परायण होकर सेवा करने वाले आ जाते थे। जो देवी की दुःखित अवस्था को देख कर शुद्ध प्रेम से सेवा करते और उसे ढारस बंधाते।

परन्तु सेवक लोगों का इसमें लाभ न था जो कि वह नित्यप्रति नये डाक्टर के बुलाने पर डाक्टरों से कुछ मिल जाता था, ऐसी अवस्था में रोग निवृत्ति कैसे हो, जब बाड़ ही खेत को खाने लग जाये तो रखवाला क्या करे। इस रोग निवृत्ति पर हज़ारों रुपये खर्च हो गये, परन्तु देवी की अवस्था 'दन प्रति दिन वहुत कमज़ोर होती गई। अब प्राण निकलने का समय आ पहुंचा। वह कभी कभी आंख खोल कर इधर उधर देखती, परन्तु उसके निकट केवल एक बुढ़िया सेवका ही बैठी हुई थी, जो कभी कभी उसके मुख में पानी की बूंद डाल देती, दोनों कन्यायें सिनेमा गई हुई थीं। बेटे अपने साथियों के साथ कहीं पर रंगरलियां मना रहे थे। अन्त में देवी के मुख से यह शब्द निकले :—

'जल जाये यह घर-बार, आह ! मैं उत्पन्न ही न होती, या ब्याही, न जाती या बांझ ही रहती' यह कह कर प्राण छोड़ दिये और सदैव के लिए इस संकट से निवृत्ति पाकर प्रभु की गोद में चली गई।

अब सेविक सेविकायें चिल्लाने लगे, प्रेमनाथ को टैलीग्राम दी गई कन्याओं और बेटों कों सेवक बुला लाये, अब किसी को भी ज़रा दुःख

दर्द अनुभव नहीं हो रहा। उसका मृतक संस्कार किया गया। माता के जीवन काल में कन्याओं और बेटों को मनमानी करने में कुछ भय जौ रहता था वह भी चला गया था। अब खुल्लम-खुल्ला अवसर पाकर अपनी अपनी मनमानी करने में मग्न हो गये। बड़ा बेटा शराब पीने का अभ्यासी हो चुका था। मानो उसकी शराब घुट्टी बन गई थी, कहावत है—

पीवे शराब, करे खाना खराब ॥

शराबी की शराब पीने के पश्चात् नशे में ऐसी अवस्था हो जाती है कि यदि नाली में शराबी गिर पड़ा हो, कुत्ता आकर उसके मुख में मूत देवे, तो वह उसे अमृत जानकर पी लेता है, कुछ सुध नहीं रहती।

एक दिन बड़े बेटे ने इतनी शराब पी कि शराब के नशे में एक स्त्री का बध कर दिया, पोलीस ने पकड़ा, (मुकद्दमा) अभियोग चलाया गया। सहस्रों रुपये खर्च किये गये, परन्तु परिणाम यह हुआ कि फांसी के तख्ते पर उसे लटका दिया गया। बड़ी कन्या अधिक समय सिनेमा घर में जाकर रहा करती थी, और सिनेमा वालों के फन्दे में आकर एक्ट्रस बन गई। फिर सिनेमा के एक अधिकारी के साथ सम्बन्ध जोड़ लिया, जो अति भयानक रोग में ग्रस्त था, परिणाम स्वरूप उसे कोढ़ का रोग हो गया। उसी रोग में ही बिलबिलाती हुई, झोंपड़ी में बाहर पड़े हुए प्राण दे दिये।

छोटी कन्या ने अपने एक सेवक से सम्बन्ध जोड़ रखा था। एक दिन नौकर के संग घर से काफी रुपया, भूषण लेकर निकल गई। जब तक तो कन्या के पास रुपया इत्यादि था सेवक ने अपने संग रखा खब खाया, पिया। जब धन समाप्त हो गया तो उसने उसे घर से निकाल दिया। अब कन्या ने दर-दर के धक्के खाये उसका परिणाम यह हुआ कि वह वैश्या का वेष धारण करके व्यभिचार खाने में

जाकर बैठी।

अब प्रेमनाथ के हृदय में अपनी धर्मपत्नी का वियोग और अपनी सन्तान की दुर्दशा, बीती अवस्था के कारण अति दुःख हुआ। वह अब मकान के अन्दर रह कर समय व्यतीत करने लगा, क्योंकि बाहर जनत को अब मुँह दिखाने के योग्य न थे।

सब से छोटा बेटा जुआ खेलने का अभ्यासी हो चुका था। वह घर से किसी न किसी वस्तु को उठाकर उसे बेच कर अपनी आदत को पूरा करता था, परन्तु जब पिता घर में ही चौबीसों घण्टे रहने लगा, तो उसे कोई भी वस्तु घर से उठाने का अवसर न मिले, अपनी बद आदत से अतिव्याकुल था। एक दिन यह विचार करके कि जो मेरा पिता मेरे कार्य में बाधा बना हुआ है उसे दूर कर देना चाहिये, तो एक रात को उसने अपने जन्म दाता पिता को सोते पाकर उसके सर पर कुल्हाड़ी से दो चार वार किये, जिससे पिता की आवाज़ तक न निकली! बेटे ने उसे मुर्दा जान कर चाबियां पिता के सरहाने से उठाईं। जिस कदर रुपया सोना घर में था, उठाकर चलता बना। स्थान स्थान पर घूमने और रुपये को बरबाद करने में लगा रहा, अन्त में दूर जाकर एक शहर में मकान किराए पर लिया और खूब जुए में रुपया लुटाने लगा, एक रात को अपने संगी साथियों के साथ वैश्या के घर पहुंच गया, पहुंचने पर जूंही उस मकान में बैठी वैश्या पर दृष्टि पड़ी तो उनकी चीख निकल गई और धड़ाम से भूमि पर गिर पड़ा और सदैव के लिए चल बसा। जब वैश्य ने शव के निकट होकर देखा तो देखते ही चीख मारी और बेहोश होकर ऐसी गिरी कि फिर न उठ सकी।

पाठकगण : आपको ज्ञात होगा कि वह कौन वैश्या थी, जिसको देखकर जुवारी लड़के ने प्राण दे दिये थे। यह वही बदनसीब उसकी

बहिन थी।

अब प्रेमनाथ को अति चोटें लगने से घाव वहुत गहरे थे। रक्त काफी निकल चुका थाअब बेहोशी की अवस्था में पड़ा हुआ था, जब सेवकों ने जाकर देखा, तो शोर मचाया तो लोग इकठे हो गये पोलीस भी आ गई और डाक्टर बुलाए गये। देखा कुछ स्वांस अभी हैं। दवाई दी गई और मर्हम पट्टी कर दी गई अब प्रेमनाथ के पांव में कुछ हलचल सी हुई। थोड़ी देर के पश्चात आंख खोली परन्तु बहुत निर्बल होने पर बोल न सका, कुछ समय व्यतीत होने पर होश में आया तो अपने मित्र सम्बन्धी जो एकत्रित थे उनसे इस प्रकार कहा मेरा सौभाग्य समझो या दुर्भाग्य कि भगवान ने अंत काल में आपके दर्शन करा दिये।

और दुर्भाग्यशाली इसलिये अपने को कहता हूं, कि मेरे जो बीते कर्म हैं, उनको अपने सामने रखता हुआ मेरा कोई अधिकारनहीं कि मैं आपको मुंह दिखाऊं, और कहा, सांसारिक सुख समान जो मनुष्य के लिए होने चाहिये, वह सब मुझे प्राप्त थे। मैंने उनसे कुछ लाभ नहीं उठाया, मेरा जीवन न केवल असफल ही रहा, किन्तु निकृष्ट रहा। मेरी धर्मपत्नी जो सचमुच देवता थी, मैंने उसकी रोग अवस्था में अपने हाथों से कोई सेवा न की। किन्तु इस बाणी से प्यार तक के शब्द तक न बोल सका और उल्टा तिरस्कार करता रहा। उसकी अन्तिम मृत्यु जो हुई उसका फल मुझे जन्म जन्मान्तर ही भुगतना पड़ेगा। दूसरी बात यह है कि मैंने गृहस्थ में रहते हुए चार सर्प (सन्तानें) उत्पन्न किये भगवान् जाने उन सर्पों ने कितने प्राणियों को डसा और संसार में किस कदर विष फैलाई होगी, इसका कारण मेरी बेपरवाही और कर्त्तव्य हीनता ही है। यदि मैं अपना कर्त्तव्य पालन करता तो मुझे यह बदनसीब अवसर प्राप्त न होता, मैंने

वाहर जाकर दूसरों के दिये जलाने का यत्न किया, परन्तु घर को अन्धकार में रखा। कहावत है—

दिये तले अन्धेरा : Nearer the church, further the God.

और कहा, जो मनुष्य हाथ में लैम्प रखता है और दूसरों को प्रकाश देता है और स्वयं आंखें बन्द कर चलता है। उसे सफलता के स्थान पर असफलता ही मिलती है । ऐसे ही उसका विनाश होता है मैं दूसरों को लैक्चर, उपदेश गर्ज गर्ज कर देता तर्क और दलील से लोगों को आकर्षित करता, लोग तालियां बजाते,मैं फूला नहीं समाता था। मैंने इस झूठी प्रशंसा में फंसकर अपने सारे फले फूले घर को सुनसान बनाया। जो अब मैं संसार मे मुँह दिखाने के योग्य नहीं रहा।

मैंने यह अनुभव न किया कि संसार में रौशनी फैलाने से पहले आपने घर में उजाला करना आवश्यक है । जिसके अपने घर में उज़ाला नहीं, उसका वाहर चांदना करने के लिए जाना एक वहम है। और कहा, अब मैं अधिक बोल नहीं सकता, परन्तु अन्त में इतना आपसे कर जोड़ कर प्रार्थना करता हूं कि आप अपने हाथ को तवे से काला करके मेरे मुंह पर मलो और इन हाथों से मेरे मुख पर बारी वारी से थप्पड़ लगाओ, और मेरी यह बात याद रखना कि अपने घर का दिया ज़लाये विना दूसरे के घर के दिये जलाने का प्रयत्न मत करना। इतना कहने के पश्चात् बोलना बन्द हो गया। आंख से आंसुओं की धारा चल पड़ी और तड़प २ कर प्राण दे दिये, जो सदा के लिए चल दिये। कबि ने कहा है—

खुद करदा रा इलाजे नस्ते—

सज्जनों : ज़रा विचारो, सौचो, सम्भल जाओ, परउपकारी बनने में पूर्व उपकारी वनो, अब कहने का समय नहीं रहा, किन्तु करने का

है। जैसा करोगे, वैसा भरोगे।

अधिकार लेने से पूर्व अधिका ी वनो

एक धोबी ने कुत्ता और गधा रखा हुआ था, गधा इसलिए रखा हुआ था कि कपड़े लाद कर धोने को ले जाया करता था, और कुत्ता इसलिये कि जब कपड़े धो धो कर खेत में सूखने अर्थ फैला देता त कुत्ता उनकी चौकीदारो करता। एक दिन रात्रि को धोबी के घरो चोर घुस आये, गधे ने जो देखा, उसने कुत्ते को कहा कि मालिक को जगा दे, नहीं तो यह सारा सामान लूट ले जाएंगे, मालिक बरबाद हो जावेगा। कुत्ते ने कहा—कि मैं नहीं जगाता, अच्छा होगा, यदि चोर इसका सब सामान लूट ले जावें, क्योंकि वह अधिकारी भो ऐसा है। गधे ने कहा—कैसे ? कुत्ते ने कहा—यह कन्जूस और बेरहम है और कहा तू ने तो इसके कपड़े उठाये, खेत में जाकर उतार दिये और दिन भर खूब खेत में घास खाता रहा और पेट भर लाया, परन्तु मेरा कार्य इसके धुले हुए कपड़ों की चौकीदारी करनी होती है। चाहे कितनी धूप कड़कती हो, चाहे अति सर्दी पड़ रही हो। मैं रखवाला वना हुआ सर्दी गर्मी में बैठा रहता हूं। इसका एक भी कीमती कपड़ा कोई उठा ले जावे तो फिर इसको मां याद आ जावे। यह कंजूस एक दूसरे का रक्त चूससे वाला है। आप तो पेट भर रोटी खा लेता है मुझे जूठा रुखा डाल देता है। पर वह भी पेट भर नहीं देता, तो क्या ऐसे कंजूस का माल यह लूट जावें या न—

गधा : न भाई मैं ऐसा नहीं चाहता, अच्छा तू नहीं जगाता तो मैं ही मालिक को जगाता हूं कुत्ते ने कहा बेशक तू जगा दे, तेरा पेट जो भरा हुआ है। अब गधे ने ज़ोर ने दो तीन वार हींग लगाई तो स्वामी गधे की हींग पर जागा।

क्रोध में भरा हुआ लट्ठ उठाकर दो चार गधे को लगा दिये और

कहा, कमवख्त बेवक्त वांग देता है। नींद हराम कर दी है, इतना कह कर लट्ठ को छोड़ कर फिर चारपाई पर लेट गया।

अब कुत्ते ने गधे से कहा—अरे तू आप बंधा हुआ दूसरे की रक्षा का दावा करता था, अब जगाने का फल पा लिया। अब बता यह लूटा जावे कि नहीं? गधे ने सिर नीचा कर लिया। फिर कुत्ते ने कहा अब मालिक को मैं जगाऊं। गधे ने कहा—हां हां! अवश्य तुम जगाओ। अब दिल ही दिल में गधा खुश हो रहा है कि इसको भी दो चार लट्ठ लग जावेंगे तव मुझे मज़ा आ जावेगा। अब कुत्ते ने चोर की ओर मुख करके भौंकना आरम्भ किया, मालिक जागा, तो चोर को देखा, पकड़ने लगा, वह दीवार फान्द कर भाग गया, अब मालिक दो चार रोटी अन्दर से उठा लाया और कुत्ते के आगे रख दीं और उसे बहुत प्य र किया। फिर जाकर सो गया, अब सोचो। गधे ने मालिक को जगाया तो लट्ठ खाये—कुत्ते ने जगाया तो उसे प्यार किया और साथ में रोटियां खिलाई—यह क्यों?

प्यारे: गधा अनधिकारी था। दूसरा स्वयं बंधा हुआ दूसरे को कैसे बांधे—इसका अधिकार यह न था—जो वांग लगानी आरम्भ कर दी थी, कई लोगों की नींद को खराव किया। कुत्ता अधिकारी था, उसका कर्तव्य था और इसने पालन किया। प्यार और फल पाया।

सुधारक ३.

सुधारक वह जो अपने संयम तप, त्याग और अनुभव से विशेष रूप से सत्संग, वार्तालाप, मेल मिलाप से ज़नता का कल्याण करते हैं। लोगों से दोष, पाप दूर कराते और उनके जीवन की देख भाल करते हैं, या अपने मन हृदय के पवित्र भावों से प्रेरित होकर बोलते हैं। इन्हें मनुष्य जाति के उत्थान के लिए एक तो दर्द लग्न होती है। उन्हें सब से प्रेम भाव से वर्ताव करना पड़ता है। ईर्ष्या, द्वेष इनक

पास तक नहीं फटकती न ही किसी मतमांतर की निंदा करते हैं। वह केवल मनुष्य के सुधार के लिए क्रिया में लाते हैं। यह लोग सुधारक होते हैं, जो दिल से कार्य करते हैं । उनके दिलों में भगवान् निवास करते हैं। उनकी बागडोर भगवान के हाथ में होती है। वह उसी के आश्रित होते हैं।

प्यारे: सोचो, वर्तमान काल में कितने ऐसे सुधारक दिखाई देते हैं। यह योगी लोग जिन्हों ने भगवान् से योग किया होता है। जो निर्भय, निष्पक्ष, सत्य निष्ठ, शारीरिक, आत्मिक, सामाजिक शक्तियों से भरपूर होते हैं। जो संसार के प्राणी मात्र का हित चाहते हैं। और अपने जीवन तथा प्राण तक उसी की पूजा के लिए अर्पण करके अमर हो जाते हैं। फार्सी का कवि लिखता है—

एक ज़माने सोहबतै औलिया, खुशतर अज़ सद साला तायेते रिया।
गर तू संगे खार ओ मर मर बवी, चूंबा साहिब दिल रसी गौहर शवी

अर्थात्: योग्य गुरु की संगति में एक घड़ी गुज़ारना सौ वर्ष की दम्भ भक्ति से बढ़ कर है । हे मनुष्य! चाहे तू नोकदार पत्थर की भांति है। या संगमरमर की भांति उजड़ा हुआ है, परन्तु योग्य गुरु की संगति मैं रहने से गौहर (मोती) बन जाएगा।

सुधारक की भावना—

नाहं कामये राज्यं न स्वर्गं नपुनर्भवेम्।
कामये दुःख तप्तानां प्राणिनामार्ति नाशनम्॥

अर्थात्: सुधारक यह नहीं चाहता कि मुझें राज्य मिले, या स्वर्ग प्राप्त हो, किन्तु वह यह चाहता है कि मुझे प्राणी मात्र के हित अर्थ प्यास लगी रहे, और कोई इच्छा नहीं। इसके अतिरिक्त कि मेरे से प्राणी मात्र (मनुष्य का ही नहीं अपितु पशु जाति) का भी भला होता

रहे। जो इस प्रकार की कामना, भावना से कर्म-कार्य करता है। उसे वेद भगवान् क्या फल देता है।

ओ३म् त्वं तमग्नेगमृतत्र उत्तमेमर्त्तं दधासि श्रवसो दिवे दिवे। यस्तातृशाण उभयाय जन्मने मयः कृणोषि प्रयश्रा च सूरये॥

भावार्थ : हे प्रकाशक ! देव जो द्विपद चतुष्पद या मनुष्य मनुष्येतर दोनों प्रकार के जीवों के भले के लिए अत्यन्त तृषित है। प्यासा है, उस मनुष्य को तू यश के लिए प्रतिदिन श्रेष्ठ अमृत पद में पहुंचता है, और उस ज्ञानी पुरुष के लिए तू सुख करता है और आनन्द भी ।

सुधारक : आत्मायें धैर्यवान्, हाथी के समान गम्भीर होती हैं। परमात्मा के आश्रय रहते हैं। परमात्मा जब उनसे कार्य कराना चाहता है, शक्ति वह अपनी देता है, ताकि वह विरोधियों से न दब सके। उन्हें चीरता हुआ अपने कर्तव्य को पूरा कर सके। विरोधी उसके बल और उत्साह को बढ़ाते हैं, परन्तु परउपकार सेवा करने वाले मनुष्य का अपयश भी अनुचित रूपसे होता रहता है। कोई महा-पुरुष, महा व्यक्ति इससे नहीं बच सका, यहां उसकी परीक्षा है। जो तो किसी यश या स्वार्थ से परउपकार सेवा करते हैं। वह अपमान से घबराते हैं और उनमें क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष की वृत्ति बढ़ जाती है, और वह पार्टी बना लेते हैं, और जो त्याग निष्काम भाव से, प्रभु आज्ञा से उस पवित्र कार्य में लगे हुए हैं, उन्हें क्रोध नहीं आता। क्रोध न करना, बदले की भावना न लाना, दिल में गुस्सा न मानना अन्तिम सीढ़ी है। छोटे से छोटा पवित्र कार्य करने वाले का भी अपयश होना आवश्यक है। यह सफलता और परीक्षा का चिह्न है।

(१) जो मनुष्य उपकार करके अपने लिए सुख सामग्री की इच्छा रखता है वह तामसिक बंधन है।

(२) जो मनुष्य उपकार करके सुख सामग्री त्याग करता हैं परन्तु अपने किये काम की प्रशंसा का इच्छुक है वह राजसिक बन्धन है।

(३) जो अपना परिवार जान कर सुधार, उपकार करता है वह सात्विक बंधन हैं।

(४) जो प्रभु का काम समझ कर अपनी व परमात्मा की आत्मा को जान कर उपकार करता है। वह जीवन मुक्त है।

वह जीवनमुक्त मनुष्य कैसे हो सकता है ?

ओ३म् द्विषो नो विश्वतो मुखाति नावेव पारय।

अप नः शोशुचदघम् ॥ (ऋ० मं० १ सू० ९७ मं७)

भावार्थ : जैसे न्यायाधीश नाव में बिठाकर समुद्र के पार व निर्जन जंगल में डाकुओं को रोक के प्रजा की पालना करता है। वैसे ही अच्छी प्रकार, उपासना को प्राप्त हो। ईश्वर अपनी उपासना करने वालों के काम, क्रोध, लोभ, मोह शोक रूपी शत्रुओं को शीघ्र ..माप्त कर जीतेन्द्रयादि गुणों को देता है। वेद भगवान कहता है ऐसे उपासक दुर्लभ होते हैं।

ओ३म् को अद्धा वेद क इह प्रवोचद्देवाँ अच्छा पथ्या कासमेति दद्दश्र एषा मवमा सदांसि परेषु या गुह्येषु व्रतेषु ॥

(ऋ० मं० ३ सू० ५४ मं० ५

भावार्थ : इस संसार में दुर्लभ हो ऐसा मनुष्य होता है कि जो परमात्मा को जाने और उसकी आज्ञा के अनुकूल आचरण स्वीकार करके सत्य का उपदेश देता है ऐसा कोई विद्वान जो इस संसार में इस लोक और परलोक का ज्ञाता होवे।

सज्जनों, परमात्मा को कौन जान सकताहै। उपासक या भक्त ही जाने। भक्ति का रस तो भक्त ही प्राप्त कर सकता है यह यथार्थ बात है और उपासना या भक्ति श्रद्धा, त्यागके विना नहीं हो सकती, जब तक मनुष्य त्याग नहीं करता तब तक भक्त नहीं बन सकता जो जो महा पुरुष संसार में हुए हैं, वह भक्त उपासक ही थे वह संसार से छुटकारा नहीं चाहते वे सदैव भगवान को भक्ति ही चाहते हैं और साथ ही ज्ञान चाहते हैं जो कि भगवान की निज सम्पत्ति है। और छुटकारा ज्ञान से ही हता है। ज्ञान वह जिससे प्रकृति तथा आत्मा परमात्मा के भेद का ज्ञान हो यह सच्चा ज्ञान है। यह ज्ञान प्रभु उपासना तथा भक्ति से प्राप्त होता है। अब ज्ञान विना कर्म के व्यर्थ है मनु जी लिखते हैं।

विद्या तपोभ्यां भूतात्मा

अर्थात : जीवात्मा तप और ज्ञान से शुद्ध होता है।

भगवान दयानन्द जी महाराज ने श्रद्धा, त्याग, तप-गुरु सेवा से ज्ञान पाया, परन्तु उसका साक्षात प्रभु उपासना भक्ति से ही किया। विना भक्ति तपस्या के ज्ञान के वास्तविक स्वरूप को नहीं पाया। भगवान दयानन्द जी महाराज के जन्म लेने से पूर्व काशी (बनारस) के अन्दर कितने विद्वान धुरन्धर पण्डित थे। परन्तु भारत में अनेकों मतमतान्तर उत्पन्न होकर एक दूसरे से मनुष्य मनुष्य से पृथक हो रहे थे। और हिन्दू जाति को हड़प कर रहे थे जिसका परिणाम यह था कि दस करोड़ भारत के सपूत जो गोरक्षक थे, गोभक्षक बन गए। इस का कारण केवल यह था कि ज्ञान अधिक था, परन्तु तप त्याग नहीं था। वह स्वार्थ में अंधे हो रहे थे। परन्तु उस महान आत्मा भगवान दयानन्द महाराज ने एक सच्चे गुरु (त्यागी, तपस्वी अनुरागी, देश हितचिंतक जिनकी आत्मा ऐसे प्यारे शिष्य को प्रतीक्षा मेंतड़प रह थी बड़

परिश्रम के पश्चात प्राप्त किया जिन्होंने वेद की अमृत. पवित्र वाण कल्याणी जो भगवान की निज पूंजीथी, का ज्ञान देकर प्रकृति, आत्मा परमात्मा का सच्चा मार्ग बतला कर मोक्ष मार्ग बतलाया। जिसने ससार की डूबतो नैयाको भवर से किनारे पर खींचकर ललकार कहा खबरदार ! फिरकिसो ने इस किश्ती को हाथ लगाया। यह ललकार सुनकर चारोंदिशाओं के सम्प्रदाय (अपनी अपनी गीदड़ा लेकर भागे) परिणामक्या हुआ।

कवि ने सुन्दरता से ऋषि के उपकारों का वर्णन किया है पढ़िये—

ऋषि उपकार (कविता)

सोये हुये भारत को जगाया ऋषि ने हैं—
वैदिक धर्म का नाद, बजाया ऋषि है।
ईश्वर की वाणी वेद जो थे लोप हो गये—
दर्शन फिर उनका हमको कराया ऋषि ने है॥
काली घटा छाई हुई थी धोर अज्ञान की—
विद्या का लाईट हाऊस जगाया ऋषि ने है।
मूर्ति था पूजतो कोई, कोई शजर कबर—
ईश्वर का एक जाप सिखाया ऋषि ने है॥
मुस्लिम इसाई हड़प करने, को तैयार थे—
पंजे से उनके हमको छुड़ाया ऋषि ने है।
घृणा थी हमको, दलित जाति और अछूत से—
छाती से उनको अपनी, लगाया ऋषि ने है॥

लट्टू बने हुए थे हम, तफ़रीक और तक़सीम के-
कायदा जमा ज़रब का, सिखाया ऋषि ने है।
हिन्दू धर्म बना हुआ था तागा सूत का-
उनको लोहे का हार बनाया ऋषि ने है।
मुरदों के श्राद्ध, पशुओं का यज्ञों में मारना-
इन सब कुरीतियों को हटाया ऋषि ने है।
बूढ़ों के ब्याह बच्चों की शादियां अब कहां-
ब्रह्मचर्य का यह आदेश सुनाया ऋषि ने है॥
विधवाओं और यतीमों की हालत खराब थी-
उनके भी दुःख दर्द को, मिटाया ऋषि ने है।
पाखंडियों के जन्तर मन्तर जादू टूने को-
मन्तक की फूंक मार उड़ाया ऋषि ने है॥
भूले थे चारों आश्रमों के महत्व को-
उनका भी ठीक बोध कराया ऋषि ने है।
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र थे जन्म से बने-
उनको भी गुण कर्म से बनाया ऋषि ने है॥
मद्य, मास और व्याभिचार आदि का निषेध कर-
मुक्ति का सीधा राह दिखाया ऋषि ने है।
आओ महक से अपना, मुअत्तर करें दिमाग़-
आर्य समाज रूपी बाग़ लगाया ऋषि ने है॥

धन्यवाद ऋषि दयानन्द का गावें न किस तरह—
यह आर्य जाति जिसको बचाया ऋषि ने है।
माने न माने कोई मगर सच यह है विशन-
सिक्का दिलों पे यह, सबके बिठाया ऋषि ने है ।।

वेद भगवान आदेश करता है कि सुधारक कैसा होना चाहिए।

यो मर्त्येषु निध्रुवि ऋतावा तपुर्मूर्धा घृतान्नः पावकः ।।
(सा० अ० ९ षष्टखंड मं० १)

भावार्थ : जो मनुष्यों मैं खूब स्थिर निश्चय वाला धैर्यवान सत्याचारी, सत्कर्मा तपस्या युक्त सहनशील और राजाओं को तापकरो सब में सिर के समान मुख्य और तेजस्वी सात्विक भोजन करने हारा पवित्रकारी हो।

भर्तृहरि जी महाराज, महात्मा के लक्षण लिखते हैं—

मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मानाम्

अर्थात जिनके मन वचन कर्ममें एक ही बात हो।

जीवन समुक्तं निशिच्चे उपदेशाः

जगत गुरु ऋषि दयानन्द महाराज के जीवन चरित्र को पढ़ो, जो आदेश वेद भगवान ने सुधारक के लिए किया है। उसमें कोई कमी दृष्टि में नहीं आती है। वह वेद का प्रचारक, उपदेशक ही न था किन्तु वह सुधारक, सच्चा सुधारक ही था, जो कुछ पढ़ा सुना, चिन्तन मनन निदिध्यासन, कीर्तन में लाया। वह पिता का सच्चा आज्ञाकारी बना पिता की पूंजी को पाया। निर्भय होकर संसार को वेद की सत्य और अमृत वाणी कल्याणी का संदेश सुनाया और कहा—

एकं सद विप्रा बहुधा वदन्ति

वह एक ही है पर ज्ञानी लोगों ने अपने अपने अनुभवों के अनुसार उसे भिन्न भिन्न नाम दिया है। ऐश्वर्यवान होने से वही इन्द्र है। मृत्यु से त्राता होने से वही मित्र है पाप निवारक होने से वही वरुण है प्रकाशक होने से वही अग्नि है। वेद मन्त्रों में नाना प्रकार के नामों। पुकारा से जाता हुआ भी वही—एक ही है।

अब यदि हम एक के हो जावें—तो जीवन मुक्त हो जावें—कैसे—

दृष्टांत

एक राजा अपने अनजान छोटे बालक कोसाथ लेकर नगर में घूमने को गया। शहर में लोगों की बड़ी भारी भीड़ थी। बालक राजा से जुदा हो गया। फिर न मिला बालक लोगों के धक्के खाता हुआ बहुत दूर निकल गया, तो एक साधु ने उसे देखकर प्यार किया। मिठाई खिलाई। उसे साथ लेकर चला गया। अपने पास रख लिया। पालन पोषण करता रहा और उसे अपना चेला बना लिया। घूमते घूमते उसी राजा के नगर में पहुंच गये। बालक को भीख मांगने को नगर में भेजा। उसने एक गृहस्थी के द्वार पर भीख मांगी, तो गृहस्थी ने कहा—अरे दर दर की भीख मांगने से एक दर से भीख मांग ले जो तेरा पल्ला भर देगा। बालक बोला किस द्वार पर जाऊं। ग्रहस्थी ने कहा राजा के द्वार पर चला जा। अब बालक राजा के द्वार पर आ पहुंचा। भीख मांगो, रानी अन्दर से बाहर आई जूंही रानी की बालक पर दृष्टि पड़ी तो प्रेम के आंसू आंखों में आ गये। यह दृश्य देखकर बालक भी रो पड़ा। रानी ने बालक को छाती से लगाया। राजा को बुलाया। राजा ने बालक को प्यार किया। अन्दर ले गये फिर राज्य का अधिकार सौंप दिया।

परिणाण : मनुष्य तो राजाओं के अधिराज अमृत का पुत्र है। पर

भूला हुआ अपने कर्तव्य से आवागमन के चक्कर में फंस कर दर दर पर धक्के खा रहा है यदि एक पिता का हो जाये तो संसार भर का मालिक हो जावे ।

ऋषि दयान्द महाराज ने उसी एक पिता के पाने का व्रत किया उसी पिता को पाया । वह परम पिता अमर है । उसी ने अपने पुत्र को अमर कर दिया । यदि भारतवर्ष एक का पुजारी होता तो वर्त्तमान भारत स्वर्ग बना हुआ होता ।

कविता

(स्वर्गीय पूज्यपाद श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज की लेखनी से)

ईश्वर का भारत जो होता पुजारी, न भूखों से मरता न बनता भिखारी
विद्या के प्रकाश से जाग जाता, अविद्या से अपना पीछा छुड़ाता ।
ईश्वर के नियमों को उसने भुलाया, फिर अज्ञान ने उसको आकर सताया
चला उल्टे राह सीधे को छोड़कर, बना सारा देश फिर दु:खों का घर
कभी ऐसी हालत न होती हमारी, ईश्वर का भारत जो होता पुजारी
दुर्बल हों या कोई बलवान होवे, निर्गुण हो या कोई गुणवान होवे ।
धनी हो कोई या धनहीन होवे, मूर्ख या विद्या में प्रवीण होवे ।
सकल विश्व का है वही एक स्वामी, सभी नामों में है वही एक नामी

वही एक ईश्वर है सब नर नारी का,
इसी को पता सब घरबार दर का ।
दु:खों से होता न हरगिज़ दुखारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥२

उसी ने यह संसार सारा बनाया,
वेदों ने उसकी ही महिमा को गाया।
जिधर देखोगे तुम उठा कर नज़र,
कोई ज़र्रा हो या शमसो क़मर।
इशारा उसी को यह करते सदा,
बिना उसके सकता न कोई बना।
हर एक चीज़ में राज उसका छिपा,
ज़रा ग़ौर से देखो होता अयां।
उसी की है हर रंग में चमत्कारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥३
भूला हुआ भटकता फिर रहा,
कष्टों से रोता है आंसू बहा।
मुसीबत दिनो दिन बढ़ी जा रही,
करे कोई क्या जब हो उलटी मति।
बुरे कर्मों का है जबकि मिलता है फल,
समझ उलटी हो यह है नियम अटल।
उलटे को वह सीधा है मानता,
सीधे को उलटा सदा जानता।
न दुःखों से करता कभी आहोज़ारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥४

जो अपने ही हाथों से बरबाद है,
उसे कौन कर सकता आबाद है।
अधूरे लिये उसने मार्ग बना,
चला जल्दी जल्दी कदम् को बढ़ा।
हुई दूर मन्ज़िल गिरा हार कर,
हिम्मत गई उसको लाचार कर।
सिर को पकड़ फिर वह रोने लगा,
आंसू बहा मुख को धोने लगा।
बिगड़ी हुई बात बन जाती सारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥४
कहां ईश का होता अवतार है,
अकल की कमी का यह इज़हार है।
बनाता है जो सारे संसार को,
कहो कैसे फिर उसका अवतार है।
सकल विश्व में रम रहा सब का प्यारा,
विचित्र है फिर भी रहे सब से न्यारा।
जो अवतार का करता इकरार है,
सच्चाई से साफ उसका इनकार है।
न आती कभी देश पर विपता भारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥६

कई क़िसम की मूर्ति को बनाया,
फिर मन्दिरों में जा उनको बिठाया।
लोगों को उसकी महिमां सुनाने,
मुफ़्त माल उड़ाने के सूखे बहाने।
फंसा फिर अविद्या के जाल में,
तड़पता है यह देखो बद हाल में।
नहीं भेद सच झूठ में उसने जाना,
करी भूल उसने जो पूज्य उसको जाना।
ऐसा कभी यह बनता अनाड़ी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥७
खड़ा जल के आगे कोई हाथ जोड़,
सच्चाई से अपना लिया नाता तोड़।
कोई वृक्ष के आगे कुछ रहा,
फिर बैठ कर देता सिर को झुका।
बे समझी के सब काम करने लगा,
दिन रात आपस में लड़ने लगा।
मुश्किल है अब इससे पीछा छुड़ाना,
है मुश्किल अब एकता का हाथ आना
न होती कभी दूर शान्ति प्यारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥८

नहीं कौम सकती यह हरगिज़ संभल,
जिनके प्रभु होवें बड़ और पीपल।

न उस जाति में है संभलने की शक्ति,
करती फिरे जो मुरदों की भक्ति।

बुरी रसमों ने ही जिसको दबाया,
झगड़ों ने ही अपने बल को बढ़ाया।

बुरी रीति यह सबसे बड़ी,
मुसीबत को लाती है सर पर कड़ी।
न बन्धन में आता यह बारी बारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥९
वेदों में ईश्वर को ऐसा बताया,
वह भरपूर सब जगत में है समाया।
कहा सर्व देशी को एक देश में,
व्यापक को इन्सान के वेश में।
बना ऐसी बातें जगत को हंसाया,
इन्सास के दर्जे से खुद को गिराया।
अविद्या से हर दम यह डरने लगा-
जो कुछ सूझा उसको वह करने लगा।
न फिर देश भारत की होती ख्वारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥१०
जन्म जिसका होवे वह मर जाता है,
न्याय यही सब को सिखलाता हैं।
अगर अकल है तब इसे मान लो,
किये वेदों में इस के प्रमाण को।

वह है विश्व कर्मा अजन्मा सदा,
पवित्र है निर्मल है वह सर्वदा।
वही सृष्टि सारी का आधार है,
उसी की ही रचना यह संसार है।
बढ़ती न फिर देश में यह बेकारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥११
हिरण्य गर्भ उसको कहीं है बताया,
उसी में है ब्रह्माण्ड सारा समाया।
यही नियम न्याय है उसका अटल,
करे जैसे कोई मिले वैसा फल।
निराधार वह सब का आधार है,
विचित्र पवित्र निराकार है।
वह माता पिता, सब का भ्राता वही,
वही पूज्य सबका त्राता वही।
अविद्या न आती फिर उसके अगाड़ी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥१२
उसे सच्चिदानन्द कहते हैं वेद,
करो पूजा उसको होवें दूर खेद।
अद्भुत विचित्र अनोखी है चीज,
वही समझें उसको जो हों बातमीज़।
सूक्ष्म से सूक्ष्म महान से महान,
पूर्ण है निरदोषी उसका ज्ञान।
जब इसके लिए नहीं उसकी तलाश,
फिर उसके मिलने की हो कैसे आस।

बिगड़ने की भारत न करता तैयारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥१३

वही सब का आदि वही अन्त है,
समझे वही सच्चा जो सन्त है ।
सीना से कोना जो कर दे दूर,
वही देखेगा दिल में अपने हजूर ।
दुनिया की उल्फत में जो घिर रहा,
नहीं मिलता उसको यह सच्च है कहा
वह नज़दीक तू ढूंढता उसको दूर,
पड़ा अकल तेरी में यह है फ़तूर ।
पराधीनता से न होता लाचारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥१४

वह है शुद्ध निर्मल, है वह सर्वदा, पवित्र कहें वेद उसको सदा ।
वह है रम रहा सब के भरपूर होकर वह नजदीक हैं देखे तू दूर होकर
तू ढूंढे जिसे बैठा वह तेरे घर में, है भूला भटकता तू दर बदर में ।
प्रभु संग प्रीति तू दिल से लगा ले, तू घर बैठे ही उसको हृदय में पाले
न फूलों की फिर सूखती यह क्यारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥१५

असल की भी होती है नकल, नकल जिसकी होवे वही वह असल ।
बहुत किसम की मूर्ति कोवनाया, फिर भी नभारत को सन्तोष आया
कबरों का भी बन गया पुजारी, मिली मिट्टी में आबरू इनकी सारी
आ जावे जिसकी अकल में खलल, नहीं रासती फिर उसका दखल
नहीं बात यह उसने मन में विचारी,
ईश्वरकाहभारत जो होता पुजारी ॥१७

जिसने है ईश्वरको मनसे भुलाया, दुःखों ने फिर उसको आकर सताया
प्रभु पूजा में हैं करते यत्न, करें प्रेम वह सब से होकर मग्न।
यह संदेश देता है संसार सारा, वही सबका मित्र वही सब का प्यारा
इसे भूल कर किसने है सुख पाया, यह वेदों के उपदेश ने है बताया
मानो उसी को है कल्याण कारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥१७

ऋषि मुनियों की बात को जान लो, यह है सत्यमार्ग इसे जान लो
तेरे मन में उसका सदा है निवास, फ़िरे ढूंढता जिसको वह तेरे पास
खबरदार हो इससे तू बेखबर, इसी से भटकता फिरे दर बदर
वह हरदम तुम्हें कररहाहैइशारा, इधरआ क्योंफिरताहै तू मारामारा
पूर्व पुरुषों की रीति है हमने विसारी,
ईश्वर का भारत जो होता पुजारी ॥१७

ऋषि एक का पुजारी हुआ, सबको एक ही झंडे के नीचे एकत्रित होने का मार्ग बतलाया। जिस मृत्यु को देखकर आत्मा कम्पायमान हो उठी थी उस मृत्यु को विजय पाते हुए अमृत को पाया। अन्त समय अपनी शरण में आए हुए धुरन्धर विद्वान् नास्तिक पण्डित गुरु दत्त जी को वाणी से नहीं, आंख से नहीं किन्तु प्रभु के तेज के द्वारा आस्तिक बनाया। उसके पुजारी किस प्रकार से होते हैं देखिए—

ओ३म्. को नानाम वचसा सोम्याय मयायुर्वा भवति वस्त ऊस्राः
क इन्द्रस्य युज्यं कः सखित्वं को भ्रात्रं वष्टि कवये क ऊती ॥

ऋ० म० ४. २५. २.

भावार्थ : जो मन, वचन, कर्म से नम्र होते हैं जो किरणो के तुल्य प्रकाश स्वरूप, व्यवहार युक्त जो जगदीश्वर के साथ मित्रता करता तथा सब के साथ भ्रातृपन की रक्षा करता है और जो विद्वानों के

लिए हित करता है वह सम्पूर्ण इष्ट फल को प्राप्त होता है।

कौन इष्ट फल को प्राप्त करता है—

ओ३म् यो जागार तमृचः कामयन्ते, यो जागार तमु सामानि यन्ति।
यो जागार तमयं सोम आह, तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः॥
ऋ० ५. ४४. १४.

भावार्थ : जो जागता है उसे ऋचायें, स्तुतियां चाहती हैं, जो जागता है, उसे ही साम स्तुतिगान प्राप्त होते हैं और जो जागता है उसे उसके सामने आकर सोम, भोग्य संसार कहता है—कि मैं तेरा हूं तेरी मित्रता में मेंरा निवास है। तेरे सख्य के लिए सदा नियत स्थान पर उपस्थित हूं।

संसार में परिपूर्ण जागृत तो एक ही है वह अग्नि परमात्मा है यह अनिद्र है त्रिकाल में जागृत है उसमें तमोगुण का (अज्ञान व आलस्य का स्पर्श तक नहीं है। अतएव सब ऋचायें ससार की सब स्तुतियां उसी को चाह रही हैं, उसके प्रति हो रही हैं, सब सामों का मनुष्यों के लिए सब यशोगानों का सब स्तुतिगीतियों का भाजन भी वही एक परम जागृत देव हो रहा है और देवों का यह समस्त भोग्य संसार भोग्य बना हुआ यह सोम रूप भंडार उसी गुरु के अग्नि देव के पैरों में पड़ा हुआ है और कह रहा है 'मैं तेरा हूं तेरे ही आश्रय में मेरी सत्ता है, तेरी मित्रतां में मेरा विकास हो रहा है, तुझ से हट कर मुझे कहीं ठौर नहीं है, परन्तु वास्तविक गुणयुक्त होना आसान नहीं। संसार के विष्य पुरुष तो भोगों के भोक्ता होने की जगह भोगों के भोग्य बने हुए हैं, परन्तु वही ऐश्वर्य, वही मुख, वही सुखभोग, जिसके पीछे यह सब संसार दौड़ता फिरता है पर जो लोगों को मिलता नहीं, वही ऐश्वर्य (सोम) जागृत पुरुष के सामने हाथ बांधकर, सेवक तुल्य

शरण पाने के लिए आ। खड़ा होता है। अग्नित्व को प्राप्त उस मनुष्य के लिए वास्तव में संसार सब भोग्य पदार्थ उसकी मित्रता में उसी के हित्त साधन के निमित्त सदा नियत स्थान पर उपस्थित रहते हैं। उसे उन पर ऐसा प्रभुत्व हो जाता है। अतः हे मनुष्यो ! जागो ! जागो ! सदा जागृत रहो, तामसिकता त्यागो और निरालस जीवन का अभ्यास करो। जागरुकों के लिए ही संसार है। स्तुतित्यित लोक, मान्यता, यश, भोक्तृत्व ये सब जागते रहने वालों के लिये हैं।

अब कुछ उन सुधारक व्यक्तियों के सम्बन्ध में लिखते हैं, जिन्हों ने वेद तथा जगत् गुरु ऋषि दयानन्द जी महाराज के पद चिन्हों पर चलकर संसार का उद्धार और सुधार करते हुए अपने जीवन को सफल किया।

सुधारक नं० १

एक साधु घोड़े पर सवार होकर जा रहा था तो मार्ग में एक डाकू मिल गया जो ऊंट पर सवार था। उसने साधु से कहा कि यह घोड़ा मुझे दे दो और मैं आपको ऊंट इसके बदले में देता हूं। साधु ने कहा—मैं ऐसा नहीं करता। डाकू ने कहा—अच्छा, देखना बिना दिये हो यही घोड़ा तेरे हाथों से लूंगा। यह कहकर डाकू चला गया। जंगल में जाकर ऊंट को बांधा। स्वयं साधु का वेष धारण करके सड़क पर आकर लेट गया। साधु को दूर से आता देखकर सड़क पर लेटते हुए रोने और धाड़ धाड़ करने लगा और मुंह से कह रहा है, ओ मैं मरा-मैं मरा, मैं-मरा, अब साधु जब निकट पहुंचा, तो घोड़े से उतर पड़ा और उससे कहा कि आपको क्या कष्ट, दुःख है। वह बोला—मेरे पेट में बहुत दर्द है, मुझसे बैठा नहीं जाता। खड़ा हो नहीं सकता। साधु ने कहा मैं तुझे अपने घोड़े पर बिठाकर शहर ले चलता हूं। वह

बोला—मैं उठ नहीं सकता । अब साधु ने डाकू को उठाकर अपने घोड़े पर बिठाया आप घोड़े के पीछे पीछे चला । अब डाकू ने संभल कर घोड़े को ऐड़ी लगाई और घोड़े को दौड़ा कर दूर जाकर बोला देखा—अब किस तरह से घोड़ा तुमसे लिया है और कहा—तू तो ऊंट के बदले भी नहीं देता था मैंने जो तुझको कहा था कि तेरे हाथ से ही यह घोड़ा ले लूंगा । अब ले लिया है कि नहीं ।

साधु : प्यारे ! एक बात सुन और इसे याद रखना । वह यह कि तू घोड़ा तो ले जा, मुझे वापस मत दे, पर यह कहीं न कहना कि मैं साधु वेष धारण करके में घोड़ा ठग लाया हूं । ऐसा करने से साधु वेश कलंकित हो जायगा ।

अब डाकू ने जो यह शब्द साधु से सुने तो तत्काल घोढ़े से उतर कर साधु के चरणों में आ गिरा और रोते हुए हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि मैं आज से डाका नहीं डालूंगा । आप मुझे सन्मार्ग पर चलावें और वह सदा के लिए पवित्र हो गया ।

सज्जनों : यह थे साधु सुधारक, जो वेष (वेश) की लाज रखने वाले तपस्वी, त्यागी । वर्तमान काल में तो ऐसे साधु हो दुर्लभ हैं यदि कुछ हैं भी सही, तो आजकल के पढ़े लिखे कोरे तर्क वादियों ने यह दिल में ठान रखी है, कि जो भी गैरुवे वेष में आवे यह उसे अठ्ठावन लाख ही कहेंगे । फारसी के कवि ने कहा है कि—

हर कि रा जामाए पारसा बीनी ।
पारसा दांनो नेक मर्द अंगार ॥

अर्थात् : जिस किसी को तू भक्ति के वेष में देखे उसे भक्त समझ, और धर्मात्मा जान । हां जब उसके अवगुण मालूम हो जावें तो उसका परित्याग कर दे । कवि ने लिखा है

तू भला सब जग भला—भला भला कर देखे,
तू बुरा सब जग बुरा—बुरा बुरा कर देखे।

फारसी के कवि ने कहा है—

दिल चूं अलूदस्त, अज़ हिर्सो हवा।
कै शवद मकशूफे, इसरारे खुदा ॥
सद दर तमन्ना दिलत ए बूउलफ़ज़ूल।
कै कुनद नूरे खुदा दर दिले मनज़ूल ॥

अर्थात्—जब तेरा मन सांसरिक विषय वासनाओं में लिप्त है तो उसमें प्रभु के रहस्य कैसे प्रकट हो सकते हैं। ऐ मूर्ख ! जब तक तेरे मन में सैंकड़ों इच्छायें विद्यामान हैं। तब तक प्रभु की ज्योती उसमें कैसे प्रवेश कर सकती है,परन्तु आज कल तो हमारी दृष्टि प्रायः दुर्योधन जैसी बनी हुई है। कवि ने लिखा है।

इतनी ही दुश्वार अपनी बुराई की पहचान है।
जिस तरह करनी मलामत और को आसान है ॥

प्यारे : में आपको सही घटना सुनाता हूं स्वर्गीय आदरणीय पूज्यपाद स्वामी सर्वदा नन्द जी महाराज वर्तमान युग में आदर्श सच्चे वीतराग़, तपस्वी सन्त महात्मा सन्यासी हुए हैं। उन्हें एक आर्य समाज ने उत्सव का निमन्त्रण दिया। स्वामी जी ने स्वीकृति दे दी। उनका यह स्वभाव ही था कि वह प्रायः उत्सव के आरम्भ होने से पूर्व एक दिन पहुंच जाते थे। स्वामी जी महाराज निकट की एक आर्य समाज में ठहरे हुए थे। सायंकाल को सैर करके वापिस लौटे, अकस्मात ख्याल हुआ कि मैं ने तो आज सायंकाल उत्सव पर पहुंचना था, तो

तत्काल मन्त्री जी से कहा, कि आप मेरा सोटा, कम्बल, चिप्पी लाएं। मैंने अगली समाज में जाना है। मन्त्री जी ने कहा महाराज! रात होने को हैं। उत्सव तो कल ही आरम्भ होगा, प्रातः काल चले जायें, परन्तु स्वामी जी ने कहा—कि नहीं, हमने अभी जाना है। इतना कह कर स्वामी जी महाराज चल पड़े। जब आर्य समाज के द्वार पर पहुंचे तो रात्रि बहुत व्यतीत होने के कारण उपदेशक अन्दर से दरवाज़ा बन्द करके लेट गये थे। तो स्वामी जीने उन्हें जगाना उचित न समझकर दरवाजा के आगे थल्ला सा बना हुआ था। उस पर कम्बल बिछा चादर ओढ़ कर लेट गये। अब दैवयोग से मन्त्री जी समाज मन्दिर आए देखा मन्दिर का दरवाज़ा बन्द है। बाहर दरवाज़ा पर कोई चादर ओढ़े लेटा हुआ है तो मन्त्री ज़ोर से बोला—अरे कौन है यहां पर सोया हुआ,एक दो बार ऐसा कहने के पश्चात् लात मार कर कहा अरे कौन सोया हुआ है, अब स्वामी जी ने घुटने सुकेड़ लिए और चुपचाप लेटे रहे। अब मन्त्री ने दिल ही दिल में विचारा, अच्छा पड़ा रहे। बाहर ही तो पड़ा है। इतना कह कर चल पड़े।

अब प्रातः जब आर्यसमाज मन्दिर का दरवाज़ा खुला तो स्वामी जी अन्दर में चले गये और घूम रहे थे तो मन्त्री जी आ गये, आर्य समाज मन्दिर में जब श्री स्वामी जी महाराज को घूमते हुए देखा तो निकट जाकर नमस्ते की और पूछा, महाराज आप कब पधारे हैं? स्वामी जी ने कहा—तुमको कहा था पहुंच जायेंगे। बस आ ही गये। मन्त्री ने फ़िर पूछा--महाराज! कब पधारे हैं? स्वामी जी ने हंसते हुए कहा तुमको कहा था हम आ जावेंगे आ ही गए। अब कब काहे को पूछता है? अब मन्त्री जी के दिल में लगी कि शायद रात को स्वामी जी महाराज बाहर सोये हुए थे। तो फिर पूछा— महाराज!

आप ही रात आर्य समाज मन्दिर के दरवाज़े पर सोये हुए थे ? अब स्वामी जी ने कहा—प्यारे मैं हूं अथवा कोई दूसरा हो पर तुम्हें लात नहीं मारनी चाहिये। भविष्य में सावधान रहना।

सज्जनों ! अब सोचो ! वर्तमान काल में हमारी दृष्टि कैसी है ? कितने वह तपस्वी, त्यागी, सहनशील थे। स्वयं कष्ट सहन कर लिया दोषी के दोष को स्वयं न जतला कर किन्तु उसको स्वयं अनुभव होने के पश्चात् बतलाया और भविष्य के लिए सावधान किया। ये थे वेद और ऋषि के सच्चे पुजारी, अनुयायी। जैसा नाम वैसा काम कर गए। पर हम स्वयं सुधरने की बजाये विगड़ने ही लगे हैं। हमारी गति कैसी हो रही है। कवि ने कहा है—

हर चे मा करदेम न खुद न नवीना न करद।
दरमियाने खाना गुम करदेम,साहिव खाना रा ॥

अर्थात् : जो कुछ हमने अपने साथ बर्ताव में किया है वह अन्धे भी ऐसा नहीं करते। घर में घरके म लिक को गुम कर बैठे हैं, सूई गुम की मकान में तलाश करते हैं बाहर। वह तो क्षणक्षण में जगाता और अपनी शरण में लेने को तैयार है। कवि लिखता है।

हम तो माइल बा कर्म हैं कोई सायल ही नहीं।
राह दिखलायें किसे रहरो मन्ज़िल ही नहीं ॥

अर्थात् : परमात्मा कहता है कि हम बखशिश करने को बैठे हैं। परन्तु जब कोई साइल ही न हो तो बखशिश किस पर करें, जब कोई मार्ग पर चलने वाला न हो तो मार्ग किसको दिखायें।

सुधारक नं० २

एक गृहस्थी जिसका नाम सत्य व्रत और उसकी धर्म पत्नी का

नाम प्रेम प्यारी था, प्रभु ने प्रत्येक ऐश्वर्य पदार्थ से उन्हें भरपूर कर रखा था, उनके चार सपुत्र थे। जिनके नाम राम कृष्ण, गोपाल कृष्ण देव कृष्ण, बाल कृष्ण थे, चारों भाइयों की आयु में एक–एक, दो–दो वर्ष का अन्तर था। चारों भाई देखने से कद में एक जैसे प्रतीत होते थे। माता पिता ने बड़े लाड़ प्यार से पाला था। शरीर में तो चारों भाइयों का कुछ अन्तर न था, परन्तु स्वभाव में बड़ा अन्तर था, राम कृष्ण सादा जीवन और मधुर भाषी होने के साथ साथ आज्ञाकारी सद्‌गुण सम्पन्न था। इसके जीवन में माता पिता बहुत सन्तुष्ट थे। और इसका अन्य परिवार तथा संगी साथियों की दृष्टि में बड़ा मान था। मित्र लोंग प्यार और साथी प्रेम और छोटे आदर सत्कार करते थे।

दूसरा : लड़का गोपाल कृष्ण प्रायः मौन अवस्था अर्थात् बहुत कम बोलता और एकान्त में रहता। किसी सभा या सोसायटी में जाने से कतराता और घबराता था। किन्तु वह यह चाहता था कि न उसे कोई बुलाये न वह किसी से स्वयं बोले। वह सदा एकान्त में रह कर प्रसन्न रहता था।

तीसरा : लड़का देव कृष्ण कुछ स्वभाव में कठोर, माता पिता की आज्ञा पालन करने में पहले संकोचित रहता, बाद में उसे पूरा करता, इसी प्रकार से खाने पीने में उसकी यही अवस्था रहती अपने संगी साथी से समय २ पर लड़ पड़ता, थोड़ी देर पश्चात् फिर पश्चाताप करता और अपने किये पर क्षमा मांगता।

चौथा : लड़का बाल कृष्ण—निःसन्देह सबसे छोटा था, परन्तु उसक स्वभाव टेढ़ा और चिड़चिड़ापन का था, वह जितना समय घर पर रहता कोई न कोई छेड़ छाड़ करता, और बाहर से भी लोग

इसके दुःखभाव से अति व्याकुल होकर उसके माता पिता के पास आकर दुःख प्रकट करते, माता पिता नित्य की गिला–निंदा और उसके दुःखभाव की बातें सुनकर अति दुःखी थे। कई बार प्यार से समझाने पर तथा कई बार लानत मलामत करने पर भी वह अपने स्वभाव को न बदला । एक दिन उसने एसी दुर्घटना की कि जिसको सुन कर माता पिता उदासीन होकर आपस में यूं विचार करने लगे।

प्रेम प्यारी : स्वामी जी ! बाल कृष्ण ने तो अब हमारा नाक में दम कर रखा है–निःसन्देह गोपाल कृष्ण की बातें भी सुनने में अनुचित आती है, परन्तु बालकृष्ण ने तो अब जीवित रहने के योग्य नहीं रखा। प्रत्येक समय कोई न कोई पड़ोसी स्त्री दुर निकट की इसके दुर्व्यवहार की बातें सुनाती रहती है । समझ में नहीं आता कि क्या किया जावे ?

सत्य व्रत : क्या बताऊं, मैं तो इसके सुधार में जितना भी मुझ से बन पड़ा, यत्न किया, परन्तु यह तो कुत्ते की दुम की भांति जितनी देर उसको खोंच कर रखो, तो फिर छोड़ने पर वैसे ही टेढ़ी की टेड़ी ही हो जाती है । यह वैसे ही बन चुका है। अब तो यह निश्चय किया है कि इसको घर से निकाल दिया जावे । जहां जी चाहे जो चाहे करे, मुझे ऐसे निर्लज्ज लड़के की आवश्यकता नहीं।

प्रेम प्यारी : आपका विचार तो ठीक होगा, परन्तु मुझको इसके निकाल देने पर अधिक दुःख ही होगा, और आप की भी संसार में निंदा ही होगी।

सत्य व्रत : मुझे इसकी कुछ चिन्ता नहीं वह निंदा एक बार हो जावेगी, फिर बस यह रोज़ का दुःख तो न सहना पड़ेगा।

प्रेम प्यारी : महाराज ! मैं कर जोड़ प्रार्थना करती हूं कि अभी ऐसा न कीजिए, यह घर से निकल कर इससे अधिक बुराईयां करेगा कहीं से जाकर आपके नाम रुपया ऋण ले आवेगा और चोरी तक करने लग जावेगा, भगवान करे ऐसा न हो यदि हो भी जावे तो परिणाम फिर आप सोचिए।

सत्यव्रत : कुछ परवाह नहीं,जब वह समय आवेगा देखा जावेगा। अब मैं जो निश्चय कर चुका हूं उससे टल नहीं सकता।

प्रेमप्यारी : आपका क्रोधित होना उचित है। निस्सन्देह आप मुझ से अधिक बुद्धिमान हैं। और जो कुछ आप विचार कर सकते हैं मैं इस के सम्बन्ध में कुछ सोच नहीं सकती परन्तु आपकी अर्धांगनी होने के के नाते मेरा धर्म और कर्तव्य है,जो भी विचार इस तुच्छ बद्धि में आवे उसे सेवा में प्रकट करूं, मैंने शास्त्रों में पढ़ा है कि मनुष्य जब भी किसी कार्य को करने लगे जिसका परिणाम भयानक हो तो उसके सम्बन्ध में गम्भीरता से विचार करने के पश्चात निश्चित परिणाम निकाले अतः ऐसौ इतनी शीघ्रता न करें।

सत्यव्रत : मैंने बहुत सोच विचार करने के पश्चात यह निश्चय किया है इसमें अब कुछ भी परिवर्तन नहीं हो सकता, क्योंकि मैं बहुत तंग आ चुका हूं।

प्रेमप्यारी : स्वामी जी ! मेरे लिए उचित तो यह है कि में आप से वाद विवाद न करूं परन्तु आप जानते है कि माता का प्रेम और उसकी ममता कैसी हौती है। जब हीं आप बालकृष्ण का नाम घर से निकालने को प्रकट करते हैं तो मेरा हृचय कम्पायमान हो जाता है।

सत्यव्रत : आप अपने विचार से जो कुछ कह रही हैं कर सकती हैं, परन्तु जो कुछ मैं निश्चय कर चुका हूं, उसे पूरा करके ही रहूंगा

चाहे सूर्य अपनी गर्मी छोड़ देवे, पृथ्वी सूर्य के गिरद घूमना छोड़ दे, किन्तु मेरा नाम सत्यव्रत है। मैं अपने व्रत को पूर्ण ही करूंगा।

प्रेमप्यारी : बेशक आप जो कुछ भी कर रहे हैं ठीक कह रहे हैं। मर्द वह जो अपने व्रत को पूर्ण करे, परन्तु यह व्रत, नियम शुभ कामों के वास्ते होता है। पर जिसका परिणाम हानिकारक हो, उस के लिए जितना विचार किया जावे अच्छा होता है।

इतने में सत्यव्रत के एक मित्र जिसका नाम प्रियव्रत है। जो वेद के पुजारी, ऋषि, भक्त, ईश्वर विश्वासी, सांसरिक हित चिन्तक और सुधारक थे। अकस्मात् सत्याव्रत के घर पहुंच गये। पति पत्नी की चिन्तित अवस्था को देखकर पूछा कि आप दोनों उदासीन अवस्था में क्यों है? सत्यव्रत तो कुछ न बोला परन्तु प्रेमप्यारी बोली :–

प्रेमप्यारी : भ्राता जी! प्रभु की अपार कृपा ही है कि आपको यहां पर भेज दिया है और सारी वीती अवस्था प्रकट करने के पश्चात् पूछा, भ्राता जी! आप तो सुधारक स्वाध्यायशील वेदशास्त्रों को जानने वाले ही है और लोगों को उपदेश करने और सुधार करने वाले हैं। अब मुझे यह बतलाने का कष्ट करें कि मेरे चारों बच्चों के विचार एक दूसरे से भिन्न २ क्यों हैं, हालांकि चारों बच्चे मेरे ही गर्भ से उत्पन्न हुए और एक ही पिता की सन्तान हैं।

प्रियव्रत : वहिन जी! यह भेद इस लिए ही है, कि पति पत्नी के विचार प्रत्येक समय एक जैसे नहीं मिलते, (एक जैसे नहीं होते) प्रत्येक मनुष्य के अन्दर दैवी, असुरी शक्तियां होती हैं। अर्थात् जिन को नेक व बद भाव कहा जा सकता है। मनुष्य में किसी समय शुभ विचारों की धारा चलती है किसी समय अशुभ। इसलिए हमारे

पूर्वजों, ऋषियों; मुनियों का आदेश है कि सन्तान उत्पन्न करने से पूर्व अपने अन्दर शुभ विचार तथा आचरण लाने चाहियें, तब भगवान् की करुणा से वैसे शुभ विचार व आचरण वाली सन्तान उत्पन्न होती है।

प्रेमप्यारी : यदि आपका यह विचार सत्य है, तो मेरा कृष्ण क्यों इतना अच्छा है ? उसके उत्पन्न करने से पूर्व मैंने कोई तैयारी नहीं की थी।

प्रियव्रत : वहिन जी ! बिना कारण के कार्य नहीं होता, बीज बिना फल नहीं उत्पन्न हुआ करता। निःसन्देह आप ने राम कृष्ण के जन्म लेने से पूर्व तैयारी नहीं की होगी, वह सत्य है। किन्तु आप दोनों के उस समय विचार शुभ और एक होंगे और दूसरे बच्चों के समय न होंगे।

प्रेमप्यारी : अब आपकी बात मेरी समझ में आ गई, यदि मुझे यह शिक्षा पहले दी जाती, तो मुझे जो दुःख बाल कृष्ण के आचरण से हो रहा है, न होता। मैं चारों बच्चे ही राम कृष्ण की भांति उत्पन्न करती,और मैंने पढ़ा है कि जो माता ऐसे बच्चे दुराचारी, जो अपनी कुल और बंश को कलंकित करने वाले ही जनती है। वह यूं जानो कि उसने सांप पैदा किया है। अब यह बतलाइये कि जो विचार मेरे स्वामी जी ने इस समय बाल कृष्ण के सम्बन्ध में कर रखें हैं उसके प्रति आप की क्या सम्मति है।

प्रियव्रत : आपके पतिदेव के विचार उचित नहीं, बुरी सन्तान के उत्पन्न करने वाले माता पिता होते हैं। एक तो आपके पति ने यह पाप किया कि बालकृष्ण जैसा दुःखदायक पुत्र उत्पन्न किया है। अब दूसरा पाप यह कर रहा है कि अपनी बुराई को संसार में फैलाने का

कार्य कर रहा है।

सत्यव्रत : आपने अपनी सम्मति तो दे दी, किन्तु मुझे इससे अन्य मार्ग ही नहीं दीख रहा, मैं तो चाहता हूं कि अभी बालकृष्ण को अपने हाथों से मार डालूं और स्वयं फांसी के तख्ते पर चढ़ जाऊं। भाई साहिब! दूसरे को समझाना तो आसान है, परन्तु यदि अपने पर आ पड़े तो पता लगे। अच्छा आप बतलाओ यदि आप की ऐसी सन्तान होती तो आप क्या करते? भाई! जिसके सर बीतती है, वही जानता है।

प्रियव्रत : आपका कथन सत्य है, परन्तु यह सब आपके कर्मों का ही तो फल है। फिर चीखने, चिल्लाने, शोर मचाने का क्या काम। कर्मफल तो अटल होता है।

खुद करदा रा इलाजे नेस्त।

मनुष्य अपना आप मित्र और अपना आप शत्रु ही है। वह ही अपने सुख दुःख का उत्तरदाई है।

सत्यव्रत : आपकी प्रत्येक बात सत्य है। मैं मानता हूं, परन्तु अब यह बतलाएं इसका उपाय क्या किया जाये।

प्रियव्रत : हां अवश्य बतलाऊंगा, परन्तु धैर्य, सन्तोष पूर्बक रहने पर कार्य ेगा। संसार में सफलता तब होती है, जब मनुष्य दृढ़ (पृथ्वी) होकर शान्ति से कार्य करे। कोई कार्य भी संसार में ऐसा नहीं जो मनुष्य उसे पूरा न कर सके। धैर्यवान् विश्वासी पुरुष तो पहाड़ों को खोद डालते हैं। समुद्रों के सीने को चीर देते हैं। मनुष्य शेरों को सिधा लेता हैं। फिर ममुष्य के बच्चे का सिधा लेना कौनसी बड़ी बात है? हां! प्रत्येक बात के लिए विचारशीलता का होना आवश्यक है। जल्दबाजी से कार्य नहीं हो सकता।

सत्यव्रत : कोई बात नहीं, जितना समय लग जावे, मुझे कोई चिन्ता नहीं, पर वह बालकृष्ण सुधर जावे । मैं तो आयु पर्यन्त आपका सेवक बन कर रहूंगा ।

प्रियव्रत : पहले आप मुझे यह प्रतीत करके वतला दें, कि बाल कृष्ण किन लड़कों की संगति में रहता है और कौन से खेल तमाशे की ओर इसको रुचि है और आप उसको बुरा भला मत कहें । ऐसा करने पर परिणाम अच्छा नहीं होता । सुधार की बजाए उल्टा बिगाड़ हो जाता है । प्रायः माता पिता अपनी बिगड़ी सन्तान पर अधिक डांट डपट करते हैं, इसका परिणाम यह होता है कि फिर वह सुधरने से रह जाती है । जो प्यार, मिठास से काम हो जावे वही अच्छा होता है ।

सत्यव्रत : बहुत अच्छा मैं पूरी जांच पड़ताल करके आपको सेवा में उपस्थित हूंगा । मुझे आपके इन शुभ विचारों और दृढ़ता को तथा सन्तोष को देखकर बहुत सन्तोष आ गया है । यह मेरा अहोभाग्य ही है, जो भगवान् ने अपनी प्रेरणा द्वारा अकस्मात आप को मेरे घर भेज कर मुझे कृत्य-कृत्य किया है ।

प्रियव्रत : आप निश्चिन्त रहें प्रभुदेव अपनी कृपा से सर्वकार्य सिद्ध कर देंगे । प्रत्येक मनुष्य के स्वभाव को प्रथम जांचना होता है कई ऐसे मनुष्य हमारी दृष्टि में बुरे प्रतीत होते हैं । उन के अन्दर सद्गुण होते हैं । जिनको हम नहीं जानते, उनके प्रतीत हो जाने पर वही मनुष्य नेक बन जाते हैं ।

सत्यव्रत : मैं आपका बहुत अभारी हूं । आपने तो मुझ डूबते को सहारा देकर मृत्यु से बचाया है । प्रभु देव आपके इस पुरुषार्थ को सफल करें और हम दुःख से छुटकारा पाएं ।

प्रियव्रत : प्रभु कृपासे सब कार्य ठीक हो जाएगा, नमस्ते कर चले गये

अब प्रेमप्यारी सत्यव्रत जो दुःख चिन्ता से अति व्याकुल हो रहे थे, शान्त चित्त हो गए, अब सत्यव्रत, बाल कृष्ण के संगी साथियों तथा उनके खेल तमाशों की जांच पड़ताल करके प्रियव्रत के मकान पर जा पहुंचा, समाचार सुनाया—

प्रियव्रत : अच्छा ! अब आप अपने घर जाएं । गम्भीरता से रहें और कोई भो बालकृष्ण से छेड़ छाड़न करें । किन्तु उससे प्यार और मधुर भाषो होकर व्यवहार करें ।

अब सत्यव्रत के चले जाने के पश्चात् आर्य वीर दल के कुछ ऐसे शुद्ध आचारी वीर सैनिकों को जिन्हों ने अपनो निष्काम सेवा से नगर की प्रायः जनता को आर्कषित कर रखा था, बुला कर सारी अवस्था प्रकट की और कहा प्रत्येक मनुष्य के अन्दर तरंगें उठा करती हैं। कभी नेकी की, कभी बदी की। और वह वहा ले जाने वाली होती हैं । उनके बहाव को परिवर्तन करना पड़ता है। यदि नेको को छोड़ कर बदी की ओर जावेगा, तो नेकी से दूर हटता जाएगा । यदि बदी से हठ कर नेकी की ओर चल पड़ेगा। तो बदी से दूर होता जाएगा, अब आप वीरों ने अपने शुभ विचार तथा शुद्ध आचरण से इसके बहाव को रोकना है। भले पुरुषों के संग रह कर समय निबाहना अच्छा, परन्तु सबसे अच्छा वह कार्य है जो बुरे को अपने शुभ विचारों और आचरण से बुराई से मोड़ कर शुद्ध आचारी बना देना है । इतना कह कर दो आर्य वीरों को बाल कृष्ण के हां भेज दिया, वह दोनों आर्य वीर पहुंच कर बाल कृष्ण से मिले जुले, खूब हंसी मज़ाक उसके स्वभाव के अनुकूल ही की, अब जब मिल जुल गए, बाल कृष्ण का विश्वास इन पर हो गया तो एक दिन

बालकृष्ण को आर्य वीर दल में ले गये, वहां पहुंचने पर आर्य वीर दल के कुछ वीरों ने निकट आकर वालकृष्ण का आदर सत्कार किया जो पहले से तैयार किये गए थे और उसको प्रशंसा की अब आर्य वीर दल के सैनिक ने कहा।

वीर सैनिक : प्यारे आर्य वीरो ! आज हमारे सौभाग्य की बात है कि हमारे मध्य में बाल कृष्ण जी उपस्थित हैं। यह ऊंचे कुल और वंश के हैं। हम इनके माता पिता को भली प्रकार जानते और परिचित हैं। अड़ोस पड़ोस सभी उनका मान और पूजा करते हैं और इसका बड़ा भाई रामकृष्ण आप सभी जानते है। वह हमारा मित्र किन्तु वह हमारा सर ही है। उसकी आज्ञा पालन करने में हम अपना सिर तक निछावर करने को तेयार हैं और यह वाल कृष्ण भी राम कृष्ण जी का छोटा भाई है। इसमें भाई जेसे गुण हैं। हम चाहते हैं कि इसे अपनी आर्य दल की एक टोली का सैनिक वना दें। निःलन्देह हम इससे पूरे परिचित नही। फिर भी जिस बृक्ष का यह फल है हम उसे भली प्रकार से जानते हैं। निश्चय जानें वही गुण इसमें भी होंगे, जो इसके माता पिता तथा इसके बड़े भाई राम कृष्ण में हैं,इस प्रकार और आर्य वीरों ने भी बातें कहीं। इनवातों के सुनने पर वाल कृष्ण के दिल को ठेस लगी क्षौर अपने दिल में विचार करने लगा कि इन लोगों को मेरे जीवन का ज्ञान नहीं कि मैं कैसा हूं। वरना यह ऐसी बातें मेरे सम्वन्ध में क्यों कर कहते, और जो बातें उन्हों ने आज कही हैं, कितनी अच्छी हैं। अब मैं इन पर अकेला बैठ कर विचार करूंगा।

प्रियव्रत : एक आर्य वीर को वाल कृष्ण के संग कर दिया, ताकि उसको अपने बुरे संगी न फिसलायें, परन्तु जो भी फिसलाने को आते

तो वह आर्य वीर को संग में देखकर भाग जाते थे, क्योंकि ईश्वरीय नियम है अन्धेरा प्रकाश के निकट नहीं आ सकता। पापी मनुष्य सदैव धर्मी पुरुष से दूर रहता है। दूसरे दिन जब बाल कृष्ण को आर्य वीर दल में ले गये तो प्रियव्रत भी वहां पहुंच गये तो आर्य सैनिक ने उपदेश करने की याचना की तो उन्होंने उपदेश देना आरम्भ किया।

उपदेश नं० ४

प्यारे आर्य वीरो! वीर वह है जो वीर्यवान् हो. बिना वीर्य के बल प्राप्त नहीं होता। संसार सदैव बल वालों के पांव चूमता है और उसका आदर सत्कार और पूजा करता है। बलवान् का बल, निर्बलों दु:खियों दीनों के हित अर्थ होता है। वर्तमान काल में प्राय: देखा जा रहा है कि भूख से विधवाएं, अनाथ बिलबिला रहे हैं। माता पिता के सम्मुख भूखे बालक रो रो कर सो जाते हैं। वहां तक माता पिता इस पेट के लिए अपने बच्चों तक को बेच डालते हैं और ऐसी बातें सुनने में आती हैं कि माता पिता ने अपनी पेट की भड़कती हुई आग को बुझाने के लिए अपने बच्चों तक को भून कर खाया है और वर्तमान मातृ शक्ति का इतना अपमान किया जा रहा है जो उसे प्रकट करने को हृदय कांपता है और नवयुवकों को देखो, तो विषय विकार, भोग विलास का ग्रास बने हुए हैं। उन्हें देश का जरा भी विचार नहीं है।

ज़रा विचार कीजिये कि वह नवयुवक कितना मन्दभागी है कि जिसकी माता दु:खों से तड़प २ कर जान तोड़ रही हो, परन्तु वह नवयुवक अपनी रंगरलियां मना रहा हो।

वीरो! आपकी मातृ शक्ति वास्तव में संकट में ग्रस्त है। वह

विलख बिलख कर तुम्हारी ओर देख रही है और पुकार २ कर कह रही है।

ओ मेरे नौनिहालो—आओ मेरी दुःखी अवस्था को देखो, मैं कहां से कहां तक पहुंच चुकी हूं। मेरे वह भी बच्चे थे जिन्हों ने मुझ पर विषय विकारों की कभी भी आंच तक न आने दी थी और मेरी आन, शान को जीवित रखा था, परन्तु अब मैं अभागिन मृत्यु के निकट हूं तुम विषय विकारों में मस्त हो।

ओ३म् न यस्य सातुर्जनितोरवारि न मातरा पितरा नू चिदिष्टौ। अधा मित्रोन सुधितः पावको३ग्निर्दीदाय मानुषीषु विक्षु ॥७॥ ऋ० म० ४ सू० ६ मन्त्र ७

भावार्थ: हे मनुष्यो! जिस पुत्र के विद्यमान रहने पर माता और पिता को दुःख होता है और सत्कार नहीं होता है वह भाग्यहीन निरन्तर पीड़ित होता है, और पुत्र की सेवा से माता पिता प्रसन्न होते है उसकी प्रजा में प्रसन्नता और सुख होता है।

प्यारो! याद रखो कि यदि मैं समाप्त हो गई तो तुम भी न रहोगे धन्य हैं वह माताएं जिनके बच्चे हर समय अपनी माताओं की सेवा के लिए तैयार रहते हैं और उनके निकट किसी को भी फटकने नहीं देते और कहा—जो बच्चे अपनी माता पिता को अपनी सेवा से प्रसन्न व सन्तुष्ट नहीं करते, वह दीन व दुनिया से खाली हाथ जाते हैं। वह गधा, कुत्ता बिल्ली का ही जन्म पाते हैं। यह सुन कर कुछ आर्य वीरो पड़े और बालकृष्ण यह दृश्य देख कर ज़ार २ रोने लगा।

और कहा—ऐ वीरो! कितने शोक की बात है कि आपके भाई भूखे मर रहे हैं पर आप विषय विकार और शराब खाना खराब इस भूखे देश की पूंजी नष्ट-भ्रष्ट कर रहे है। जो जुए खानों में

और अपने माता पिता की मान, मर्यादा को बरवाद कर रहे हो। आपका कर्त्तव्य तो यह था कि आप अपनी वहिन और माताओं की रक्षा करते। उल्टा तुम उनको कुदृष्टि से देखते और उनकी शान को नष्ट करने पर तुले हुए हो, और कई भाइयों के पेट में ग्रास तक न जाये, वहां आप होटलों में गुलछर्रे उड़ा रहे हो और आपके माता पिता रातदिन अपना खून वहाकर एक२ पैसा कमायें और आप उनके गाढ़े पसीने की कमाई को ऐश्प्रस्ती में लगा रहे हो। क्या आपको माता पिता ने इसलिए जन्म दिया था कि आप उनके लिए कलेश और संकट का कारण बन कर रहो। सन्तान माता पिता को वृद्ध अवस्था में सहारा हुआ करती है। किन दु:खों से उन्हों ने आपको जन्म देकर पाला था, क्या इसलिए कि बजाये उनके सहारे की लाठी बनने के उनके सिर कुचलने वाली लाठी बनो। सोचो ! होश करो, तुम किधर जा रहे हो। क्या कर रहे हो।

जब प्रियव्रत ने यह शब्द कहे तो वालकृष्ण जोर २ से रोता हुआ प्रियव्रत के चरणों में जा पड़ा और वोला– महाराज ! आपका एक एक शब्द मुझ पापी के जीवन के उत्थान का ही कारण बन गया है। आपका यह उपदेश केवल मुझ पापी के जीवन सुधार अर्थ ही है। आपने जो कुछ कहा है मुझ कम्बख्त के जीवन को उज्ज्वल बनाने के लिए कहा है।

वालकृष्ण : अब वह अपने साथियों से कहने लगा कि जो भी उपदेश आज हुआ है, इसकी एक एक वात मुझ पापी में है। मैं मुंह दिखाने के योग्य नहीं हूं। आप सब मुझे आशीर्वाद दें कि जो मेरी बीती सो बीती—अब रही सही कुछ वन जावे—अव जब वालकृष्ण ने यह शब्द कहे, तो प्रियव्रत जी ने उसे प्यार किया और कहा, बेटा ! तू

सच्चा सपूत है। जो अपने किये मन्द कर्मों का चिन्तन करने और त्याग करने का व्रत ले रहा है। यहां तो सैंकड़ों नहीं सहस्रों ऐसे नवयुवक हैं जो प्रतिदिन ऐसी पुकार को सुनते हैं। परन्तु उनके कानो पर जूँ तक नहीं रींगती, निःसंदेह प्रत्येक मनुष्य भूल कर सकता है। परन्तु मनुष्य कहलाने का अधिकारी वही हो सकता है जो अपनीभूलों को मानकर उनका प्रायश्चित करता हुआ भविष्य के लिए अपने को सावधान रखता है।

बालकृष्ण ने अब प्रियव्रत से हाथ जोड़ कर प्रार्थना की कि आपने रोगी के रोग की पहचान तो कर दी अब कृपा करके इस रोग के दूर करने का उपाय बतला दें, ताकि मैं अपने पूर्वकाल के कर्मों से छुटकारा पा सकूं। और भावी जीवन को उज्जवल कर सकूं।

प्रियव्रत : ऐ माता-पिता के सच्चे सपूत। जो कुछ तू पूर्वकाल में कर चुका है। वह तेरे प्रायश्चित तेरे रोने ने वहुत कुछ उसे धो डाला है। जो मनुष्य अपने दुष्कर्मों को त्याग देता है, तो परमात्मा देव स्वयं गुप्त रूप से उसे सन्मार्ग पर चलाते हैं। प्रकाश के आ जाने पर अंधेरा रहा ही नहीं करता, और कहा, मनुष्य को परमात्मा देव ने बुद्धि दी प्रदान की है। जिसके द्वारा नेकी-बदी, भलाई बुराई सत्य असत्य का निर्णय कर सकें और अपनी बुद्धि से ऐसे कर्म करें, जिससे दूसरे भाइयों तथा संसार के प्राणीमात्र का कल्याण हो। परन्तु वर्तमान काल में बुद्धि का ऐसा प्रयोग किया जा रहा है कि अपने भाइयों के लूटने और उनका रक्त तक चूसने—धोखा और फरेब से कष्ट देकर उनके नाम तक को मिटाने का प्रयत्न कर रहा है। और दूसरे को कष्ट देकर वरबाद करके लाई हुई पाप की कमाई मनुप्य को नाश वरबाद कर देने वाली होती है। स्वार्थी मनुष्य कभी भी शांत चित्त नहीं रह सकता जिस प्रकार दूसरों को कष्ट देकर लूट लाता है। उससे कई गुणा

अधिक आप लूटा जाता है और विनाश को प्राप्त करता है दुर्लभ ऐसे मनुष्य हैं जो दूसरों के दुःख दर्द को अपना समझकर उनको अपनी आत्मा केसमान जानकर सेवा करके अपना जीवन सफल करते हैं। अब कुछ ऐसी बातें तुम्हारे हित अर्थ और कल्याण तथा भविष्य के जीवन को उज्जवल बनाने वाली आपसे कहता हूं। सावधान होकर सुनिए—

१. मनुष्य पहली बात यह समझे कि मैं संसार में क्यों आया हूं। मनुष्य जन्म धारण करने का उद्देश्य आनन्द प्राप्ति ही है। इसके प्राप्त करने को वेदों, शास्त्रकारों तथा ऋषियों ने अपने अनुभव से अनेक उपाय बतलाए हैं। यदि एक ही उपाय को लक्ष्य रख कर मनुष्य श्रद्धा विश्वास और पुरुषार्थ से आचरण करे तो अपने जीवन के उद्देश्य को पूर्ण करके आनन्द प्राप्त कर सकता है।

(२) प्रातः ५बजे घड़ी रात्रि खड़ी हो जागो फिर ओ३म् नमःउच्चार कर नमस्कार करो, और रात को सोते समय यदि कोई बुरा स्वप्नयाण बुरा दृष्य आया हो तो प्रायश्चित करें, यदि कोई अच्छा स्वप्न, उत्तम दृष्य आया हो तो परमात्मा का धन्यवाद करो, और निम्नलिखित वेदमन्त्रों का उच्चारण करके परमात्मा से प्रार्थना करो—

प्रभात वन्दन

ओ प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रा वरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम ॥
ओं प्रातर्जितं भगमुग्र — हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता।
ओध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह ॥
ओं भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः।

भगप्रणो जनय गोभिरश्वैर्भग प्रनृभिर्नृवन्तः स्याम ॥
ओं उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम् ।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवाना ७ सुमतौ स्याम ।
ओं भग एव भगवां अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम ।
तं त्वा भगसर्व इज्जोहवीति स नो भग पुर एता भवेह ॥

ऋग०, ६–४१–मन्त्र १–५

फिर चारपाई से उठकर माता पिता जी के चरणों में नतमस्तक नमस्कार करो, शौच, दातुन, स्नान से निवृत्त होकर १००० वार गायत्री का जाप कर फिर सन्ध्या अग्निहोत्र प्रार्थना किया करो और माता, पिता बड़ों की आज्ञा पालन करके उनको सन्तुष्ट किया करो दिनभर के कार्यक्रम से निवृत्त होकर फिर सायंकाल अग्नि होत्र सन्ध्या प्रार्थना करने के पश्चात पहले माता पिता बड़ों को भोजन कराओ पश्चात तुम भोजन खाओ फिर थोड़ा सा चहल पहल करके घर में आकर माता पिता के चरण दबाओ, जब वह आदेश करें कि तुम जाकर सोओ तो तुम उनके चरणों में नतमस्तक हो नमस्कार करो। अपनी चारपाई पर बैठकर दिनभर के बीतेसमय को सम्मुख लाकर निरीक्षण करो कि मेरी आंख, मेरे कान, मेरी वाणी, मन इत्यादि ने दिन भर में क्या क्या शुभाशुभ कार्य किए हैं। और जो बुरे कर्म किये गये हैं, उनका प्रायश्चित करके भगवान को सम्मुख जानकर प्रतिज्ञा करें, कि फिर ऐसा अशुभ कर्म नहीं करूंगा जो अच्छे कर्म किये गये हों तो भगवान का धन्यवाद करते हुए, भविष्य के वास्ते बुद्धि मति, बल, शक्ति की प्रार्थना करें। पश्चात निम्नलिखित वेदमन्त्रों का पाठ करके नतमस्तक नमस्कार कर सों

जाया करो ।

ओं यज्जाग्रतो दूरमुदैतिदैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरङ्गम ज्योतिषांज्योतिरेकं तन्मेमनः शिव संकल्पमस्तु ।
ओं येन कर्माण्यपसोमनीषिणों यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषुधीराः ।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ॥
ओं यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिन्नरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्न ऋते किंचन कर्मक्रियते तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु ॥
ओं येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तोहता तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ॥
ओं यस्मिन्नृचःसाम यजूंषियस्मिन्प्रतिष्ठता रथनाभाविवाराः ।
यस्मिश्चितसर्वमोतं प्रजानां तन्ममनः शिव संकल्पमस्तु ॥
ओ सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभर्वाजिनइव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु ॥

बालकृष्ण : महाराज यदि शौच किये विना गायत्री जाप तथा भजन में बैठ जाया करें तो कोई हर्ज तो नहीं होगा ।

प्रियव्रत : आप अच्छे पढ़े लिखे हुए जानते ही होंगे जब सूर्य निकलता है, तो उसकी किरणें संसार की हर वस्तु को छिन्न भिन्न करके फैला देता हैं, और वही किरणें मनुष्य के भीतर मल को सारे शरीर में फैला देती हैं, जिससे विना शौच से निवृत्त हुए जाप या भजन में बैठने से तो तमोगुण वृति होकर मोह को उत्पन्न करती है। और मोह में सदैव संशय और भय का विकास हुआ करता है। मानो

भजन करने वाले मनुष्य भी जो जागकर भजन में बेठ जाते है। और मल का त्याग नहीं करते उनमें भी तम वृत्ति का कारण होता है संशय और भय उन्हे ग्रस्त रखता हैं। उनको आत्मा मानो नहीं जगी प्राण और वलवान होता है। कई ऐसे मनुष्य भी होते हैं, जिन्हें प्रातः शौच आता ही नहीं उनमें तामसिक वृति और कठोरता होती है। भय और संशय नहीं यह मोह भ्रम ग्रस्त होता है।

द्वेष : मनुस्य में जो सवसे बड़ा दोष है, जिससे आनन्द (भगवान) प्राप्ति से वञ्चित होता हैं, वहहै द्वेष द्वेष कहते हैं दो को, जहां दो हैं वहां एकता नहीं, एकता होगी एक के साथ प्रेम करने से, इस द्वेष के दूर करने के लिये सन्ध्या करते समय छः दिशाओं में परिक्रमा करते हुये भगवान से प्रार्थना की गई है—

योऽस्मान द्वेष्टि य वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥

द्वेष करने वाला भगवान को कभी प्राप्त नहीं कर सकता, वह अपने आप को लोक परलोक से वंचित रखनेवाला होता हैं। जिसके हृदय से द्वेष निकल जाता है तो वह प्रत्येक प्राणी मात्र को अपनी आत्मा के तुल्य जानता है। और सर्वप्राणी उससे प्रेम करते है। वह सदैव जीवित रहता है।

चाहो न सुगति, सुमति, संपति कुछ विधि विपुल बढ़ाई।
हेतुरहित अनुराग राम पद बढ़ु अनुदिन अधिकाई ॥

भावाथ : इसी प्रकार वह किसी जीव से या लौकिक दृष्टि से प्रतिकूल मानें जाने वाले पदार्थ या स्थिति से कभी द्वेष नहीं करता वह सव जीवों में अपने प्रभु को और सब पदार्थों और स्थिति में प्रभु की लीला को देख२ कर क्षण-क्षण में आनन्दित होता है।

योन हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति ।

शुभाशुभ परित्यागो भक्तिमानयः सोमे प्रियः ।।गीता १२-१७

भावार्थ : जो मनुष्य न कभी हर्षित होता है । न द्वेष करता हूं, न शोक करता है न कामना करता है, तथा जो शुभाशुभ सब को त्याग देता है । वह भक्तिमान पुरुष मुझको प्रिय है । फार्सी का कवि कहता हैं

जे शादी में शादां न अज़ग़म ग़मी ।

हमां अस्त दूर ऐश मन आदमी ।।

अर्थात : जो मनुष्य खुश.में ख़ुश न हो और ग़म में ग़मग़ीन न हो परमात्मा कहता है वह मनुष्य मेरे निकट है । कवि ने लिखा है—

बिगाना गर नजर पड़े तो आशना को देख ।

बन्दागर आवे सामने तो भी खुदा को देख ।

(३) बर्तमान काल में तो सादगी का दिवाला निकाल दिया गया है कहावत है—'सादगी जीवन, सजावट मृत्यु' अमृत की इच्छा रखते हुये मृत्यु का ग्रास वने ज़ा रहे हैं। ओ शरीर की सजावट वनावट पर लट्टू होने वाले वीरो ! सम्भल जाओ, जिस नाशवान शरीर पर तुम मस्ताने मतवाले दीवाने होकर अपने वास्तविक कर्तव्य से कोसों दूर जा रहे हो, यह खाक से बना हुआ शरीर तुम्हारे देखते ही देख़ते ख़ाक मेंमिल ज़ावेगा और तुम्हारे नाम कोभी मिटा देगा संसार में जिनका नाम विख्यात है, उनके जीवन को आदर्श रखो आचरण करों, फिर नित्य जीवित रहोगे ।

(४) शुद्ध विचार : यह वाज़ारी वस्तु नहीं है । यह मिलेगी, शुद्धाचारी महापुरुषों की संगति औरउनके आचरणों पर आचरण करने से । सदा सत्संग और स्वाध्याय और धर्म सभाओं में जाकर

अपने जीवन को शुद्धाचारी बनाया करो।

(५) सेवा : यह कई प्रकार से हो सकती है। धनी धन के द्वारा ज्ञानी ज्ञान के द्वारा, बलवान बल के द्वारा। निर्धनदीन दुखियों अनाथों की धन के द्वारा, निर्बलों के उत्थान कल्याण के लिए बल द्वारा। अज्ञान मूर्खता को, दूर करने के वास्ते ज्ञान द्वारा। परन्तु निष्काम भाव से अपना कर्तव्य जान कर करे—ऐसा करने पर आत्मिक शान्ति तत्काल मिलती है।

(६) परोपकारः स्वर्गाय पापाय परपीड़नम।

अर्थात—परोपकार करने वाला स्वर्ग में जाता है और दूसरों को दुख देने वाला नर्क में जाता है।

(७) ईश्वर विश्वास : जो ममुष्य ईश्वर विश्वासी बन जाता है, वह अपने आप को सदैव राजा समझता है। इसके दुःख कष्ट कभी निकट नहीं आते। उसका मुख सदैव कमल की तरह खिला रहता है वह अपने आप में ऐसे अनुभव करता है कि मेरी उंगली को मेरी मां ने पकड़ा हुआ है। और वह यह समझता हैं कि मैं सदैव माता की गोद मैं निवास किये हुये हूं। वह काम क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार से रहित होता है।

तन पवित्र सेवा करे—धन पवित्र किये दान,
मन पवित्र प्रभु भजन में-होत त्रिविध कल्याण।

(८) दान : दान देने वाला दाता कहलाता है। दाता प्रभु हैं। वह प्रभु के गुण को धारण करता है। मानो उसने प्रभु को पा लिया है। कैसे दान किया जावे वह यूं। जैसे मुंह में थूक है। वह सर्वप्रिय है। परन्तु जब अपने हाथ की हथेली पर अपने मुख की थूक निकाल कर रखी जावे—तब ममुष्य उसे देखना तक भी नहीं चाहता तत्काल उसे

फेंक कर हाथ को जलसे साफ सुथरा कर लेता है। ऐसे ही दान की हुई वस्तु को मत छुवे, मत देखे-मत स्मरण करे, यूं जाने जिसकी थी उसको दे दी–मैंने अपना कुछ भी नहीं दिया। जब यह हाथ जिसके द्वारा मैंने दिया है, वह मेरा अपना बनाया हुआ नहीं हैं। जिसका यह हाथ है, उसने दिया है। कवि कहता है—

संग किसी के न चले-माया धन अरु माल ।
संग चले हाथों दिया-यही जगत की चाल ॥

ओ३म् अभित्वा शूर नोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः। ईशानमस्य जगतः स्वर्दृश मीशान मिन्द्र तस्थुषः ॥ (अ० का० २० सू० १२१)

भावार्थ : जैसे दूध से भरी गोएं दूध देने के लिये झुक जाती हैं। वैसे ही मनुष्य विद्यादि शुभ गुणों से भरपूर होकर परमेश्वर की महिमा देखते हुए नम्र हो कर संसार में उपकार करें।

(८) नम्रता यही एक वस्तु ही है,जो मनुष्यकी अपनी है-जो जन्मसे से ही साथ लाया है जिसने नम्रता जैसे अनमोल रत्न को अपना लिया है, सचयुच उसने भगवान को पा लिया है। कवि कहता है...

उच्चे पानी न टिके नीचे में ठहराय,
नीचा हो तो भर पिये उच्च प्यासा जावे।
प्यारे जो झुका नहीं वह झुका नहीं सकता,
बिना नम्रता के ज्ञान का कोरा।
बिना नम्रता के दानी का दान खोटा,

विना नम्रता के ईमानदार का ईमान छूटा।
विना नम्रता के प्राणी का प्राण छूटा कवि कहता है—
मत ऊंची मन नीवां शिव दी संगी थीवा,
हम तो बुलबुले पानी के ठहरे है, गहरे गम्भीर शब्द सुनाते हैं।
मत ऊंची मन नींवा वाले शाह को संग में पाते हैं॥

नोट : नम्रता के विषय के सम्वन्ध में लेखक की 'पितृयज्ञ प्रसाद' नामक पुस्तक को पढ़ें और अपनेसोभाग्य को बढ़ावें।

प्यारे! आर्य वीरो : कहने को तो अनेक वातें हैं, परन्तु बुद्धिमानो का कथन है कि थोड़ा सुनो, अधिक करो। कवि ने कहा है—

कहना करना दो हैं भाई, करने की है धन्य कमाई,
कहना कह कह जावे थक, करना पहुंचे मंजिल तक।

आज मैं प्यारे वालकृष्ण को वधाई देता हूं। सचमुच आज यह आर्यवीर वन गया है। आर्य कहते हैं श्रेष्ठ को और भगवान के अमृत पुत्र को, वीर वह है जो अपने आपको दुर्गुणों दुर्व्यसनों को दूर करके निर्मल शुद्ध पवित्र करदे। जो वुराइयां का नाश करदे। आज प्यारे बालकृष्ण ने अपने आप को कुन्दन की भांति शुद्ध पवित्र कर दिया है इस पर भगवान की अपार कृपा ही है—वरना मनुष्य की क्या सामर्थ्य जो दूसरे के जीवन को शुद्धकर सके।

और कहा मैं परम पिता परमात्माका धन्यवाद करता हूं कि वहहम सब को सदबुद्धि, बल शक्ति प्रदान करें ताकि हमवेद तथा ऋषि मुनियों और महान आत्माओं के वतलाए हुए मार्ग पर चल सकें और

अपना भावी जीवन सफल बना सकें।

अब प्रियव्रत जी सुधारक, बिगड़े का सुधार करके सबको नमस्कार कर चलने लगे तो सबने धन्यवाद करते हुए नतमस्तक हो नमस्कार किया फ़िर सभी आर्य वीर अपने अपने घरों को चल पड़े।

अब बाल कृष्ण भी अपने घर को चला, साथ एक आर्य वीर भी उसके संग चल पड़ा, वह इसलिए ताकि जमती के ऊपर पाला न पड़ जावे अर्थात यूं जानो कि कोई कुसंगी इसके बिगाड़ करने वाला उसकी भेंट, मार्ग में फिर न हो सके, ताकि बना बनाया काम न बिगड़ने पावे क्योंकि बिगाड़ना आसान, बनाना कठिन होता है।

अब बालकृष्ण सर नीचे किये हुए धीरे २ उधर जाते हुए, सुने हुये उपदेशों का मनन करता जा रहा है। जब मकान के द्वार पर पहुंचा तो रुक गया, अकस्मात् बालकृष्ण का पिता सत्यव्रत जो बाहर गए हुए थे द्वार पर आ गये। देखा बालकृष्ण सर नीचे किये अपने अन्दर ही अन्दर देख रहा है। जूं ही बालकृष्ण ने पिता के आने की आहट को सुना, चौंका, तत्काल पिता के चरणों में सर धर कर ज़ार ज़ार रोने लगा। अब सत्यव्रत उसको उठाने का यत्न कर रहा है। परन्तु बालकृष्ण आंसुओ से पिता के पांव को तरबतर धो रहा है। तब प्रेमप्यारी ने घर में बैठे हुए बालकृष्ण के ज़ार ज़ार रोने की आवाज़ को सुना, यह जानकर तत्काल बाहर आई कि उसके पिता जी उसे मार पीट रहे हैं, परन्तु वहां पहुंचने पर क्या देखा कि सत्यव्रत जी की आंखों से आंसुयों की झड़ी लगी हुई है और प्यार से कह रहा है—आओ मेरे प्यारे लाल उठ और मेरी छाती से लग जा।

बालकृष्ण बोला—नहीं पिता जी मैं इस योग्य नहीं कि आपकी छाती को स्पर्श कर सकूं—मैं बहुत पापी हूं। मैंने अपने जीवन काल

में जितने कष्ट आपको दिए हैं, भगवान् ही जानता है कि मुझे उस का क्या क्या और किस किस रूप में फल भुगतना पड़ेगा, मैंने आपके नाम को कलंकित किया और आपकी आन शान को धब्बा लगाया है। मैं अब मुंह दिखलाने के योग्य नहीं जिस वाणी से मैंने आपका तिरस्कार किया है, आप कैंचो लाकर इसी समय इसको काट डालें। और मुझे बांध कर नदी में ही फैंक दें, अब किन आंखों से आपके सामने होऊं? किस मुँह से अपनी प्यारी माता के सम्मुख जाऊं। यह शब्द सुन कर माता चीख मार कर बालकृष्ण के ऊपर गिर पड़ी। अब सत्यव्रत, प्रेमप्यारी, बालकृष्ण तीनों जी भर कर रोये। परिणाम यह हुआ कि अब माता पिता के हृदय में जो दुःख दर्द बालकृष्ण के जन्म से जमा थे सब निकल गये। अब इस ने अपने आप को ऐसा सुधार लिया कि रामकृष्ण से भी नम्बर ले गया। देव कृष्ण में जो कुछ कठोरता थी वह भी कोमल हो गई। चारों भाई राजा दशरथ के पुत्रों की भांति अपना जीवन व्यतीत करने लगे। प्यारे यह होते हैं सुधारक।

प्यारे! इस प्रकार का धर्म प्रचार-सुधार कैसे फैला? केवल एक तपस्वी, त्यागी के उपदेश से। यदि तपस्वी महात्मा को निमन्त्रण न देते। यह ज्ञान यह तप त्याग कैसे होता। घर में राम राज्य कैसे होता?

परन्तु आजकल तो प्रायः उपदेशक सन्यासी जहा पर भी प्रचारार्थ जायेंगे, स्वार्थ साथ ले जाएंगे। कोई आश्रम के लिए, कोई गुरुकुल के लिए, कोई विद्यालय के लिए धन याचना साथ ले जावेंगे। दो चार उपदेश मन्दिरों में करने के पश्चात् झोली पसार दी। अभी बीज उगा नहीं। फल पहले चाहते हैं। उस समय श्रोतागण एक दूसरे के

मुंह को देख और दु:खी होकर कुछ न कुछ लज्जा भय से दे देते हैं। यह तामसिक दान होता है, परिणाम यह होता है कि दुवारा यदि फिर वहां सन्यासी जावे तो प्रेमी सत्संग में आना छोड़ देते हैं। उचित तो यह था कि आप लोगों का जीवन अग्नि की भांति होता, ताकि स्वयं श्रोतागण विना मांगे आपकी झोली भर देते—

मांगन गये सो मर रहे मरे सो मागन जाहीं।

तिनसे पहले वह मरे जो होत कहत हैं नाहीं।

सुनिये ! एक वार महात्मा टैगोर ने शान्ति-निकेतन के वास्ते महात्मा गांधी ने धन की इच्छा प्रकट की। तो महात्मा जी ने विरला को वह पत्र भेज दिया। अव विरला ने चेक—बुक से चैक काट कर अपने हस्ताक्षर करके महात्मा गांधी जी की सेवामें भेज दिया। साथ ही प्रार्थना पत्र भेजकर लिखा कि जितना रुपया चाहिये आप रुपयों के स्थान पर संख्या लिखकर महात्मा टैगोर की सेवा में भेज देवें।

पाठकगण ! यह है तप त्याग जिनके पीछे लक्ष्मी चरण छूती फिरती है। काश ! हम प्रभु के पुजारी होते तो क्या धन के लिए शरावी, मांसाहारी ब्लेक मारकिट घूसखोरों के द्वार पर याचना करते और आर्य समाज की पवित्र वेदो पर ऐसे लोगों को अधिकारी वना कर इनका मान करके उन्हें ऐसे बुरे कर्मों के करने में सहायक वनाते। जिनका वेद शास्त्र, ऋषि मुनि निषेध करते हैं। प्रभु ही इस डूबती नौका के बचाने के वासते फ़िर से ऋषि आत्मा को भेजें।

आपबीती नं० १

सं० १९४५ को मुझे एक प्रेमी जंडियाला (रावलपिण्डी) यज्ञ कराने अर्थ ले गये। यज्ञ पूर्ण होने पर महता बलदेव सिंह जी बी. ए. एल. एल. वी. रावलपिण्डी ले गये। वहां पर कुछ दिन पारिवारिक

सत्संग होता रहा । जब मैं वहां से चलने लगा तो मेरे पास (महता नरेन्द्र नाथ) एन. एन. मोहन जी धर्मपत्नी सहित आए, (जो इस समय सोलन ब्रूरी में रहते हैं) मुझसे कहा कि कल पारिवारिक सत्संग हमारे घर में कराएं । मैंने कहा कि मेरा प्रोग्राम कल जेहलम जाने का है । उन्होंने कहा स्वामीजी ! हम ४ भाई हैं । सबसे बड़ा मैं हूं । मेरे ३ भाईयों के घर आपने सत्संग कराया है क्या मैं वंचित रहूं और साथही कहा कि मैं जेहलम को टेलीग्राम कर देता हूं कि हमने स्वामी जी को रोक लिया, अब मैं उनके प्रेम तथा श्रद्धा भावना को रुक गया, दूसरे दिन प्रातः काल का सत्संग कराना मान लिया, महता जी धर्म-पत्नी सहित अपने घर को चले गए । अब महता वलदेव सिंह जी ने, जो मोहन जी के छोटे भाई हैं मुझसे कहा स्वामी जी ! आप मांस आहारी के हां भोजन नहीं करते, मेरे भाई महता मोहन जी तो मांस खाते है यह मांस छोड़ते भी नहीं और न ही छोड़ेंगे क्योंकि यह गवर्नमैंट के ठेकेदार हैं, वड़ी वड़ी पार्टियों में जाते हैं, साहब लोगों के द्वारा इनकी हज़ारों रुपयों की आमदनी होती है । स्वामी सर्वदानन्द जी, स्वामी आत्मानन्द जी, स्वामी सत्यानन्द जी, इत्यादि सभी महात्मा पुरुष इनके यहां आकर ठहरते हैं और यह समाज के प्रधान हैं । मैंने कहा --कोई बात नहीं हम भोजन नहीं करेंगे । यदि उसके भाग अच्छे हो चुके हैं तो प्रभु कृपा से पवित्र बन जाएंगे । अब दूसरे दिन प्रातः काल सत्संग आरम्भ हुआ । महता एन.एन.मोहन पत्नी सहित यज्ञ के यजमान बने । यज्ञ हुआ, पश्चात् मैंने महता जी से कहा, आप प्रार्थना कराएं । अब महता जी ने

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥

मन्त्र पढ़ा और प्रार्थना की । पश्चात् मैंने उपदेश करते हुए अन्त में

मोहन जी से कहा, क्या आप अब दक्षिणा देंगे ? तो उन्हों ने कहा— हां ज़रूर। तो मैंने कहा भगवान आपसे विष लेकर आपको अमृत देना चाहता है। क्या आप विष देकर अमृत लेना चाहते हैं ?

महता जी हंस कर—महाराज ! यह तो हर एक ही इच्छा रखता है कि अमृत मिले।

मैं—क्या आप विष देकर अमृत लेंगे ?

महता जी—ज़रूर चाहता हूं।

मैं—आपका हृदय परमात्मा के जीवों के रक्त से लतपत है, आप मांस खाना छोड़ दें, पवित्र होकर अमृत प्राप्त करें। बस यही हमारी दक्षिणा है।

महता जी—सिर नीचे करके। मैं यत्न करूंगा त्याग करने का।

मैं—मैंने कहा सुनिये ! एक पुलिसमैन शहर के चौक के मध्य में खड़ा होता है। तांगा, कार, मोटर, लारी, साईकल जो भी आता है उसे वारी वारी जाने के लिए हाथ से संकेत करता है। कोई विना पुलिसमैन की आज्ञा से आगे नहीं जा सकता। अब एक डिप्टी-कमिश्नर अपनी कार पर सवार है। वह विना पुलिसमेन की आज्ञा के इसी विचार से अहंकारवश चला जाता है कि ऐसे पुलिसमैन हज़ारों की संख्या में मेरे आधीन हैं, अब पुलिसमैन कार का नं० नोट करके रिपोर्ट कर देता है। अमुक नम्बर की कार मेरी आज्ञा लिये विना चली गई। अब तहकीकात करने पर मालूम हुआ कि डी.सी. की कार थी तो उस पर मुकद्दमा वना। लिखा गया सरकार वनाम डी.सी. अदालत में तलव किये गये, अब जब सरकार की तलबी का आर्डर डी. सी. को मिला तो मां याद आई कि मेरे ऊपर और भी शक्ति है जो मुझे दण्ड दे सकती है। मैंने कहा महता जो हमारी

वर्दी तो भगवान् की दी हुई है। हम उसके दूत हैं, कर्तव्य जानकर आपको जगा दिया है। वहां पर रिश्वत देकर छुटकारा नहीं होगा। शहादतें नहीं होंगी जो धन खर्च करके झूठे गवाह पेश कर मुक्त हो जावेंगे।

दूसरी बात यह कि हमने आपने निमन्त्रण को आप की धर्म पत्नी की श्रद्धा को देख मान लिया था। यह ही है आपके ऐसे मंगल कार्य के कराने वाली। इसका नाम है धर्मपत्नी अर्थात् धर्म की मालकिन। आपके सौभाग्य बढ़ाने वाली है। हमने यहां आकर अपना कर्त्तव्य जानकर सत्संग किया, कराया। अब आपका कर्त्तव्य हो जाता है कि मुझे भोजन करायें, पर मैं आपका भोजन नहीं करूंगा, क्योंकि निर्दयी का अन्न खाना अपने भावी जीवन को पतित करना ही होगा। यदि आपका भोजन खा लूं तो मेरा मन, बुद्धि निर्दयी हो जावेगी तो उससे आपका भी विनाश होगा। यदि मैं भोजन किये बिना आपके दरवाज़े से चला जाऊंगा, तो भी आपका विनाश ही होगा। कण्ठ उपनिषद में लिखा है—

आशा प्रतीक्षे संगतं सूनृताञ्चेष्टापूर्ते पुत्रपशूंश्चसर्वान्। एतद्वृंक्ते पुरुषस्याल्पमेधसो यस्यानश्नन् वसति ब्राह्मणो गृहे ॥

अर्थात्! जिस गृहस्थी के घर से अतिथि निराश जाता है, उस का जप, तप, यज्ञ, दान आदि सभी शुभ कर्म निष्फल हो जाते हैं।

और कहा आपको ज्ञात ही है कि नचिकेता का यम ऋषि के द्वार पर तीन दिन भूखा रहना और फिर यम ऋषि का आकर प्रायश्चित करना, तीन वर का देना, इत्यादि आप सब कुछ जानते ही हैं। बस हमने अपना कर्त्तव्य पालन कर दिया है, यज्ञ अग्नि आपको शुद्ध पवित्र करके कुन्दन बनाना चाहती है—भाग्य जगाना, न जगाना अब

आपकी इच्छा पर है ।

३. और आपने भगवान् से उसकी अमृत वाणी कल्याणी वेद के द्वारा प्रार्थना की है ।

ओ३म् विश्वानि देव ॥

मंत्र पढ़ा है । हे परमेश्वर ! आप मेरे सम्पूर्ण दुर्गुण दुर्व्यसनों को दूर करके अपने गुण, कर्म स्वभाव और कल्याणकारी ही पदार्थ प्राप्त कराएं ।

क्या आपने भगवान् से ऐसी प्रार्थना की है—आप अमृत को तो प्राप्त करना चाहते हो किन्तु विष देना नहीं चाहते । अपवित्र पात्र में अमृत कौन डाले । अब महता जी ने कहा, मैं अब मांस त्याग करता हूं । मेंने कहा हाथ में जल लें और मंत्र पढ़ें—

ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम् । इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि ॥ (यजु० अ० १ म० ५)

मंत्र पढ़ने के पश्चात् कहा, हे प्रभु मैं आज यज्ञ की पवित्र वेदी पर आपको साक्षात करता हुआ प्रतिज्ञा करता हूं कि आज से मैं मांस मछली, अण्डा का सेवन नहीं करूंगा, आप मुझे बल दें, ताकि मैं इस व्रत को पूर्ण करके अपने भावी जीवन को उज्ज्वल कर सकूं और आप सब उपस्थित सत्संगी मुझे आशिर्वाद दें ।

अब चारों ओर से प्रसन्नता, खुशी की तरंगें उठने लगीं । महता जी मुझे अपने मकान के अन्दर ले गये और मुझसे यूं कहा—स्वामी जी ! मेरे घर में मांस नहीं बनता । न मैं घर में खाता हूं । मेरी धर्म पत्नी घर में हर रोज़ अग्नि होत्र करती है । हां मैं सोसाइटी में मांस खाया करता था, पर जिस दिन मैं मांस खाकर आता था, तो मेरा सारा दिन रात बुरी तरह से व्यतीत होता था, परन्तु आज प्रभु

की कृपा से मेरे भाग्य जाग गये। अब धर्मपत्नी को देखो—जो फूली नहीं समाती। अब गाड़ी के दोनों पहिये बराबर हो गये हैं। यह सुधार करने वाला कौन था? क्या मैंने किया, हरगिज़ नहीं, किन्तु जिसके आश्रय रहता हूं उसने सुधार किया है। साथ ही महता जी की धर्मपत्नी की सद्भावना को प्रभु ने पूर्ण किया है—

आपबीती नं० २

रावलपिण्डी से चलकर मैं जेहलम गुरुकुल पहुंचा तो पण्डित जयदेव जी जो बड़े श्रद्धालु भुगीवाला (पाकिस्तान) के वासी थे वह मुझे मिले, श्री आचार्य रामदेव जो गुरुकुल जेहलम जिनसे मेरा मेरा पुराना सम्बन्ध था, उपस्थित न थे दूसरे दिन मैंने जेहलम से होशियारपुर साधु आश्रम भल्ला जी के निमन्त्रण पर जाना था, क्यों कि साधु आश्रम के उद्घाटन अर्थ चारों वेदों का यज्ञ रचाया जा रहा था तो पं० लयदेव जी ने मुझ से कहा—अभी यज्ञ आरम्भ होने में दो दिन रहते हैं यह दो दिन गुरुकुल जेहलम के हित अर्थ दे दें। मैंने कहा, कैसे, उन्होंने कहा—आप यहां से चल कर मार्ग में मेरे साथ उतर पड़ें मलकवाल, भलवाल दो मण्डियां हैं वहां से गुरुकुल के लिए धन संग्रह करना है। मैंने कहा—पण्डित जी! धन मांगना मेरा काम नहीं है। अग्नि का जामा पहन कर अपने आपको भगवान् करते हुये गृहस्थी से याचना करूं, अपने पिता का अपमान करूं। अब पण्डित जी ने कहा, आप धन न मांगना केवल आप मेरे साथ होकर चलें उपदेश ही करें—सज्जनों—गुरुकुल जेहलम से चलकर मलकवाल मण्डी पहुंचे पं० जी उपप्रधान की दुकान पर ले गये वहां पर बैठते ही उपप्रधान ने कहा—पं० जी! अब तो गुरुकुल के वास्ते कुछ धन संग्रह नहीं हो सकेगा क्योंकि कमेटी का इलैक्शन है सभी

लोग उसी धुन में लगे हुये हैं, पं० जी—कोई बात नहीं अब रात का तो ठहरना है सत्यसंग तो समाज में लगेगा—

उपप्रधान : महाराज ! आज सत्संग में कौन आवेगा किसको उपदेश करेंगे—लोग तो आवेंगे नहीं, हां रात यहां ठहरें तो भोजन मेरे यहां होगा-और फिर पूछा यह स्वामी जी महाराज क्या आपके संग आये हैं।

पण्डित जी : हां, स्वामी जी महाराज रावलपिण्डी से पधारे हैं, होशियारपुर में भल्ला जी ने साधु आश्रम बनाया है उसके उदघाटन पर चार वेदों का यज्ञ रचाया जा रहा है—स्वामी जी महाराज को निमन्त्रित किया गया है मैंने प्रार्थना की कि दो दिन मुझे दे दें मैं ही इन्हें साथ लाया हूं।

उपप्रधान : स्वामी जी महाराज मेरे यहां ही भोजन करेंगे।

स्वामी जी : क्या आप रोजाना घर में अग्निहोत्र करते हूं।

उपप्रधान : नहीं महाराज ! कभी कभी हो जाता है।

स्वामी जी : तो मैं आपके यहां भोजन नहीं करूंगा-क्योंकि मैं जिस घर में अग्निहोत्र नहीं होता, वहां पर भोजन नहीं करता। ऋषि दयानन्द महाराज ने लिखा है, वह शूद्र ही है जो प्रतिदिन अग्निहोत्र नहीं करता।

उपप्रधान जी : तो महाराज मैं आज हवन कर लूं तो फिर आप भोजन करेंगे।

स्वामी जी : मैंने कहा जरूर अब उन्होंने घर चलकर हवन किया फिर भोजन कराया।

उपप्रधान : महाराज ! अब आप समाज मन्दिर में चलें मैं भी आता हूं अब हम समाज मन्दिर में चले गये-रात्री को दो तीन सज्जन

ओर आ गये तथा प्रधान जो भी, वह पण्डित जी से मिले, प्रधान जी ने कहा, कल भोजन मेरे हां होगा तो उपप्रधान ने कहा कि स्वामी जी तो भोजन वहां करते हैं जिस घर में अग्नि होत्र होता हो दूसरा पं० जी गुरुकुल के वास्ते धन संग्रह अर्थ आये हैं इनसे मैंने कहा है कि अब तो कमेटी का अलैक्शन है सभी लोग उधर रुके हुए हैं—इसके पश्चात आना।

प्रधान जी : हां ठीक कहा है अब क्या होना है किसी ने बात भी नहीं सुननी, अच्छा तो कल मैं घर में हवन करूंगा स्वामी जी महराज भोजन वहीं करें।

स्वामी जी : आप कल प्रातःकाल अपने सर्व परिवार को संग्रह करें हम साथ बैठकर यज्ञ करायेंगे, छः बजे प्रातः ठीक तैयार हो जाना।

प्रधान जी : बहुत अच्छा महाराज ! हमारे सोभाग्य बढ़ायेंगे, दूसरे दिन प्रातः यज्ञ प्रार्थना उपदेश हुआ अन्त में स्वामी जी ने कहा कि क्या अब आप दक्षिणा देंगे।

प्रधान जी : महाराज ! ज़रूर दूंगा।

स्वामी जी : क्या दोगे।

प्रधान ज़ी : जो आप आदेश करें।

स्वामी जी : अच्छा आप हाथ में जल लेकर संकल्प करो, अब मैं दक्षिणा आप से लेता हूं।

प्रधान जी : धर्मपत्नी सहित हाथ में जल ले लिया, स्वामी जी ने यजुर्वेद के प्रथम अध्याय का पांचवां मन्त्र उच्चारण कराकर कहा आप दोनों बोलिये हे प्रभुदेव ! हम आज यज्ञ की पवित्र वेदी पर आपको साक्षात करते हुये प्रतिज्ञा करते हैं आजसे नित्यप्रति घर में अग्निहोत्र किया करेंगे, विना अग्निहोत्र किये हम भोजन नहीं सेवन करेंगे आप हमें बल, शक्ति प्रदान करें ताकि हम इस व्रत को जो तेरे

आश्रय कर रहे हैं इसे पूर्ण निभा सकें।

प्रधान जी : प्रतिज्ञा करने के पश्चात दोनों पति पत्नी ने उठकर स्वामी जी को नतमस्तक नमस्कार किया, और कहा महाराज ! आज आपने आकर हमको आर्य बनाया है हमारे भाग्य उदय किये हैं और कहा अब मैं गुरुकुल के लिए धन इकट्ठा करके ही दूंगा।

पण्डित जी : प्रधान जी ! मैं आपके साथ मण्डी चलता हूं स्वामी जी महाराज यहां पधारेंगे।

प्रधान जी : नहीं महाराज ! अब आपके संग चलने की आवश्यकता नहीं रही, आज तो स्वामी जी के उपदेश ने हमें अपना कर्तव्य जतला दिया है आपको साथ लेकर चलना तो विद्वानो का अपमान करना है अब मैं स्वयं जाकर धन संग्रह करके लाता हूं।

अब प्रधान जी एक और आर्य सज्जन को साथ लेकर मण्डी में चले गये, डेढ़ दो घण्टे पश्चात लगभग चालीस पचास रुपया संग्रह करके सन्मुख रखे और कहा, महाराज ! अब आप भोजन करें, घर में ले गये, बलि वैश्व देवयज्ञ की आहुतियां देने के पश्चात् बड़ी श्रद्धा और सात्विक भावना से भोजन कराया और गाड़ी का टिकट लेकर गाड़ी में रवाना करके अपने घर चले गये।

सज्जनों—अब सोचो, विचारो, क्या पण्डित जी ने दर दर पर जाकर धन संग्रह किया जैसा कि पहले किया करते थे, जहां पर पहले उप प्रधान–प्रधान जी ने इन्कार किया था—अब किसने उनको प्रेरणा की, अब परिणाम आप निकाल लें कहावत है—बिन मांगे मोती मिलें मांगे मिले न भीख, वर्तमान काल में तो प्रचारक, उपदेशक, साधु, सन्यासी महात्मा केवल मन्दिर में जाकर उपदेश कर देंगे। मन्दिर में तो दोआना चन्दा देने वाले ही आयेंगे—और दूसरा तो नहीं आयेगा,

फिर आर्य परिवार कैसे सुधरेंगे, ऋषि दयानन्द महाराज तो उपदेशकों से कहा करते थे कि भोजन, भोजनशाला में ही जाकर करना, भोजन करने से पूर्व भोजन कराने वाले परिवार के घर में जाकर उनके आहार व्यवहार विचार आचार को देखना उनका संशोधन करके पश्चात् भोजन करना। इस प्रकार से कार्य करने से सुधार उद्धार होगा, यह कार्य नौकरों का नहीं किन्तु स्वार्थ त्याग हितचिन्तक निष्काम भावना से तपस्वी त्यागी कर सकते हैं —

विश्व सुधारक

मेरे गुरुदेव पूज्यपाद प्रातः स्मरणीय त्यागी, तपस्वी, अनुरागी, योगी प्रभु के अटल विश्वासी ! वेद की अमृत वाणी कल्याणी के सच्चे पुजारी, पतित-पावनी वरदा वेद माता सावित्री गायत्री के अनन्य भक्त श्री महात्मा प्रभु आश्रित स्वामी जी महाराज !

आज २२–७–५४ अमृत समय शौच इत्यादि से निवृत्त होकर तीन बजकर पैंतीस मिन्ट पर जब मैं प्रभु चरणों में बैठा तो अकस्मात् मुझे प्रभु प्रेरणा हुई कि दूसरे सुधारकों के सम्बन्ध में तूने 'अमृत प्रसाद' पुस्तक में लेख लिखे हैं, जो वास्तविक सुधारक हैं। जिन्हों ने तुझे सुधारा, नहीं, नहीं अनेकों ही प्राणीमात्र को सन्मार्ग दिखाया और दिखा रहे हैं। तू कितना कृतघ्न है कि ऐसे महासुधारक के सम्बन्ध में कुछ लेख भी नहीं लिखा। 'दिये तले अन्धेरा' वाली बात की है और जिस महात्मा ने तुझ पतित को सन्मार्ग दिखला कर इस गेरुवे भेष को धारण कराया। लगातार चार बज कर पचास मिन्ट तक प्रभु के चरणों में बैठे रहने पर यही दृश्य विचार सामने रहा। अतः कागज

कलम उठाकर लेख लिखना प्रारम्भ कर रहा हूं। कोटान कोट धन्यवाद करता हूं। परम पिता परमात्मा का जिसने मुझ कृतघ्न को अपने कर्त्तव्य से गुप्त रूप से जागृत किया।

पाठकगण ! मेरी जन्मभूमि में आर्य समाज वैसे दीर्घकाल से थी, परन्तु अवस्था शिथिल थी। कोई आर्य समाज का मन्दिर न था, जहां पर साप्ताहिक अधिवेशन हो सके, या किसी प्रचारक उपदेशक का प्रचार हो सके। यदि कोई उपदेशक या प्रचारक आ भी जाता तो श्री महाशय चन्दूराम जी प्रधान, उन्हें यहां ठहराते, सेवा करते और धर्मशाला में प्रचार करा देते। प्रभु कृपा से नवयुवकों में उत्साह जागृत हुआ, एक दुकान का चुवारा किराये पर लेकर उस पर आर्य समाज का मन्दिर का बोर्ड लगा दिया गया और मुझे समाज का मंत्री नियुक्त कर दिया गया।

एक दिन श्री महाशय टेक चन्द जी और एक भक्त प्रेमी जो भजन गाया करते थे उनको साथ लेकर जतोइकी गौशाला के लिए धन संग्रह अर्थ पधारे और मुझे मिले और कहा कि मैंने हवन करना है, तो मैंने मन्दिर का दरवाज़ा खोला। यज्ञ सामान भेंट किया आप तीन दिन प्रातः सायंकाल अग्नि होत्र करते रहे और साथ ही मैं साम्मिलित होता रहा। चौथे दिन आप चले गये, परन्तु मेरे हृदय में पवित्र जीवन द्वारा ज्योत जगा गए, कैसे—

सज्जनों ! मैंने महाशय जी के चले जाने के बाद हवन सामग्री मोल ली और समिधा उठाकर घर पहुंचा। लोहे की वाटी थी उसको उठाकर हवन कुण्ड के रूप में रख लिया। उर्दू की हवन मन्त्र पुस्तक हाथ में लेकर अग्नि होत्र करना आरम्भ कर दिया, तो मेरी माताजी ने मुझ से पूछा कि क्या कर रहा है ? मैंने कहा माता जी हवन कर

रहा हूं। वह चुप होकर चली गई। अब दूसरे दिन फिर घी सामग्री उठा यज्ञ आरम्भ करने लगा तो माता जी ने फिर पूछा कि अब क्या करने लगा हैं, मैंने कहा हवन करता हूं। क्योंकि यह काम मुझे वहुत अच्छा लगता है। वह दिल में अच्छा न जानकर चुप होकर चली गई—अब तीसरे दिन मैं फिर यज्ञ आरम्भ करने लगा, तो माता जी ने क्रोध में आकर कहा कि तू रोज २ घी जलाता रहेंगा ? क्या कोई और भी आर्यसमाजी ऐसा काम करता है, जो तू करने लगा है ? क्या तू उनसे भी वड़ा हो गया है। मैंने कहा माता जी, 'अपनी करनी ते अपनो भरनी' जो जिसको अच्छा काम लगता है, वह करता है। माता जी मुझ यह यज्ञ वहुत ही प्यारा लगता है। चाहे आप मुझे रोटी न दें, मैं निर्वाह कर लूंगा पर ऐसा कर्म करने से मुझे मना न करें। अब वह चुप हो गई—यह भगवान् जाने कि किस महाशक्ति ने उसे शान्तचित्त कर दिया कि मेरे नित्यप्रति अग्निहोत्र करने पर कुछ भी न कहा और न पूछा।

अब मैं ने सत्यार्थ प्रकाश पुस्तक का स्वाध्याय करते हुए चौथे समुल्लास में पढ़ा, लिखा है—

नतिष्ठति तुयः पूर्वां नोपास्ते यस्तु पश्चिमाम्।
स शूद्र वद्ध बहिष्कार्यः सर्वस्माद द्विजकर्मणः॥

अर्थात् जो मनुष्य सन्धया, हवन यह दोनों कार्य प्रातः सायं काल न करें। उसको सज्जन लोग सव द्विजों के कर्म से वाहर निकाल दें अर्थात् उसे शूद्रवत् जानें—तो हृदय में प्रेरणा हुई क दोनों काल नित्यकर्म अग्निहोत्र तुम्हें करना चाहिये, नहीं तो आर्य कहलाने का अधिकार नहीं है। किन्तु शूद ही है और साथ ही महाशय जो का दृश्य सामने आ गया जो प्रातः सायंकाल अग्निहोत्र करते थे, अब मैं

ने प्रात सायंकाल अग्निहोत्र करना आरम्भ कर दिया, और यज्ञ का प्रचार स्थान स्थान पर आरम्भ कर दिया और हवन कुण्ड बनवा कर यज्ञ करने वाले प्रेमियों को भेजता रहा। सन् १९२६ में मैंने महात्मा बुद्ध का जीवन चरित्र पढ़ा, तो मुझे वैराग्य आ गया। मैं घर बार छोड़ कर चला गया और सन्यास धारण कर लिया। कारण-वश मुझें फिर घर लौटना पड़ा, वृत्तान्त लम्बा हैं। यहां पर लेख से इसका कोई लम्बन्ध नहीं रखता, यदि कोई प्रेमी इस वृत्तान्त को पढ़ना चाहे तो मेरी लिखित पुस्तक 'नारी धर्म कर्त्तव्य प्रसाद' में 'भक्ति में शक्ति' लेख को पढ़कर लाभ उठा सकता है जो शिक्षा-दायक है। उसे नर–नारी को अवश्य पढ़ना चाहिये।

सन् १९२७ में मेरी धर्मपत्नो स्वर्गवास हो गई। अब मैं डी. ए. वी. हाई स्कूल मुलतान में अध्यापन कार्य अर्थ आ गया, कुछ समय के पश्चात् भुझे आर्य अनाथालर मुलतान में सुप्रिटेन्डेंटी का कार्य सौंप दिया गया। अनाथालय की सेवा करते करते नुझे ईश्वर विश्वास की शिक्षा मिली, उसका वर्णन मैं इस पुस्तक में आप वीती घटनाओं में लिख चुका हूं। सचमुच मुझे अनाथों की सेवा करने से नाथ की अद्भुत शक्ति का भान हुआ।

अन थालय का चार्ज लेने के पश्चात् विचार आया कि अनाथालय का वार्षिक उत्सव मनाना चाहिए, जिसमें अनाथालय की आय और व्यय के दूसरे वृत्तान्त छाप कर जनता के सन्मुख रखे जावें, इससे अनाथालय की भूमि और कर्मचारियों की आत्मा पविव होगी और साथ ही यजुर्वेद यज्ञ उत्सव से पूर्व किया जावे। अब मैंने महाशय जी की सेवा में प्रार्थना पत्र भेज कर निवेदन किया कि आप यहां पधार कर मुझ से यजुर्वेद यज्ञ करायें। तो इसका उत्तर श्री ला०

नन्द लाल जी ने, (जो महाशय जी के गुर भाई हैं) दिया कि महाशय जी एक वर्ष आदर्शन मौंन व्रत से अभी बाहर निकले हैं उनका स्वास्थ्य कमज़ोर है । अतः वह यज्ञ कराने अर्थ नहीं आ सकते । मुझे उत्तर पढ़कर बड़ी उदासीनता हुई, परन्तु दूसरे दिन महाशय जी का हस्तलिखित उत्तर आ गया कि मैं यज्ञ कराने अर्थ आ रहा हूं। तो मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि सविता देव ने अपनी गुप्त प्रेरणा से उन्हें यज्ञ कराने की प्रेरणा की है वह आ गए। मुझे यज्ञ के दिनों में मौन रहने और यम नियम के पालन करने का आदेश दिया गया और यज्ञ कराकर पूर्ण आहुती हो गई—तो मुझे यज्ञ करने और यज्ञ कराने की शैली को देखकर अति प्रसन्नता हुई। अब दूसरे दिन उत्सव की कार्यवाई होनी थी, तो मैंने महाशय जी से कहा कल प ले पहल आपका उपदेश होगा। तो आपने कहा—मैं उपदेश पूज्यपाद श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज की उपस्थिति में नही कर सकता। किन्तु उनके चरणों में बैठकर उनके अमत उपदेश से लाभ उठाऊंगा । तो मैंने अति विवश किया कि कल अवश्य पहले पहल आपका उपदेश होगा । चुनांचि दूसरे रोज़ यज्ञ के पश्चात् उत्सव की कार्यवाई आरम्भ हुई, तो मैंने सभा में खड़े होकर कह दिया कि अब श्री महाशय जी का उपदेश आरम्भ होगा—कृपया शांतचित होकर लाभ उठायें ।

अब महाशयजी ने उठते ही पहले पूज्यवाद श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज के चरणों में माथा रखकर नमस्कार किया। फिर वेदी पर पधार कर उपदेश किया—

सज्जनों ! उपदेश क्या था, मानो वह तप त्याग की अद्‌भुत शक्ति बोल रही थी। उपदेश समाप्ति के पश्चात् श्रोतागण प्राज्ञ-

चित्त होकर आपस में ये कह रहे थे कि उपदेश दाता हों तो ऐसे हों। फिर देखिए संसार का कितना कल्याण होता है। अब महाशय जी दोपहर की गाड़ी चले गये, तो मैं श्री स्वामी जी महाराज के चरणों में गया। मेरे पहुंचते ही श्री स्वामी जी महाराज ने हंसते हुए मुझसे कहा कि आज बहुत उत्तम उपदेश हुआ है, यह महात्मा जी बहुत अच्छा बोलते हैं। मानों यह स्वामी जी की महाशह जी के लिए आशीर्वाद ही थो, उसी दिन से मैंने महाशय जी को महात्मा जी के नाम से उच्चारण आरम्भ कर दिया और मेरे हृदय में अगाध श्रद्धा आपके प्रति हो गई।

एक दिन सायंकाल महात्मा जी अनाथालय पधारे। दूसरे दिन आपने टोबटिक सिह जाना था। मुझे आदेश हुआ कि यज्ञ का सामान मुझे अब दे दें, ताकि मैं प्रातःकाल अग्निहोत्र करके गाड़ी पर चला जाऊंगा, क्योंकि मैं जब तक अग्निहोत्र न करूं मौन से रहता हूं मैंने यज्ञ का सामान ला दिया। प्रातः यज्ञ किया और चलने लगे, तो मैंने साथ जाने की इच्छा प्रकट की। अतः वह मुझे साथ लेकर चल पड़े। टोबाटेक सिह में पहुंच कर ला० ठाकुर दास के सुपुत्र का नाम करण संस्कार कराना था करा दिया गया। भोजन किया, अब बख्शी राम नाथ जी महात्मा जी की सेवा में आए। निवेदन किया कि आपके व्रतस्थान का प्रबःधमैं अपने घर में बनाता हूं। मैंने यह बात सुत कर पूछा आःप क्या व्रत करते हैं, क्योंकि मैं सामाजी था, व्रतों का खण्डन किया करता था, व्रत सुन कर आश्चर्यमय हो गया था। अब महात्मा जी ने हंसते हुए कहा कि मैं रात को जहां पर ठहरूंगा। कल अमावस के दिन उसी स्थान पर दरवाज़ा वन्द करके मौन अदर्शन व्रत करूंगा, तो मैंने तत्काल बिना सोचे समझे कह दिया कि

मैं भी यह व्रत करूंगा, तो राम नाथ ने मेरे व्रत का स्थान भी दूसरे कमरे में बना दिया, और दातुन, जल देकर ही स्थान भी दिखा दिया गया, उसी दिन गायत्री रहस्य पुस्तक मुझे पढ़ने को महात्मा जी ने मुझे दी थी । अब प्रातः शौच इत्यादि से निवृत्त होकर संध्या प्रार्थना की, फिर मैं पुस्तक पढ़ने लगा और बन्द कमरे में सारा दिन गुजारना पड़ा । अभ्यास न होने के कारण अपने आपको कैदी समझ कर डरा बैठा रहा । आखिर प्रभु ने सायंकाल का समय ला दिया, महात्मा जी बाहर निकले और मैं भी निकला । नमस्कार कर स्नान करके अग्निहोत्र प्रार्थना इत्यादि करके भोजन किया । दूसरे दिन वहां से चल पड़े । खानेवाल जक्शन स्टेशन पर गाड़ी परिवर्तन करनी थी उतर कर बैठ गए । अब मैंने पूछा कि क्या आप अमावस को अमावस ऐसे अदर्शन मौनव्रत रखतेहैं और जबतक अग्निहोत्र न करलें मौन रहते हैं । तो आप ने कहा—मैं अमावस, पूर्णमाशो दोनों दिन ऐसे अदर्शन व्रत करता हूं और नित्यप्रति विना अग्निहोत्र किये मौन अवस्था मैं रहता हूं । अब गाड़ी आ गई, हम उसमें बैठ गये और महात्मा जी अपनी जन्म भूमि को चले गए ।

सज्जनों ! मैं ने उसी दिन से व्रत कर लिया कि नित्यप्रति अग्नि होत्र न करने तक मौन और अमावस्या पूर्णमाशी का अदर्शन मौन व्रत किया करूंगा, और ऐसे ही व्रत करना आरम्भ कर दिया, परन्तु मैंने आज तक ही महात्मा जी से यह नहीं पूछा कि इन व्रतों के रखने का महत्त्व क्या हैं । बस नकलिया बन आचरण करता गया । महात्मा जी अपने कार्य अर्थ प्रायः टोबा टेक सिंह जाया करते थे । वहां पर महाशय मथुरादास जी प्रधान आर्य समाज आपके अन्य प्रेमी भक्त थे । उनके यहां ठहरा करते थे, एक दिन महात्मा जी के हृदय में

विचार प्रकट हुआ कि मैं एकान्त में घास फूस की कुटिया बनाकर एक मास अदर्शन मौन व्रत करूं । उस समय रबनिवाज़खां जो महाशय मथुरादास जो का व्यापारी था, बैठा था. उसने कहा—मैं अपनी भूमि में घास फूस की कुटिया अभी तैयार करा देता हूं। आखिर कुटिया बन गई । आपने एक मास अदर्शन मौन व्रत किया। अब रबनिवाज़खां जी ने कहा कि यहां पर अपनी कुटिया बनालो। मैं बना देता हूं आखिर लगभग दो कनाल भूमि के चारों ओर दीवार डलवाने लगा तो महात्मा जी ने कहा– इस कदर दीवार क्यों बना रहे हो मुझे तो केवल एक कुटिया ही चाहिये। अब रबनिवाज़खां ने कहा—महात्मा जी ! जहां सन्त लोग बैठ जाते हैं वहां जनता आकर अमृतपान करती है।

पाठकगण ! देखिये यह कौन हैं जो एक मुसलमान को इस कदर प्रेरणा करके इतना बड़ा आश्रम तैयार कर रहा है। अपने प्यारे के हित अर्थ उसे गुप्त प्रेरणा कर रहा है। गुरु नानक देव जी ने कहा है :—

जो तू उमदा हो रहे, सब जग तेरा होय ॥

आश्रम बन गया । एक सुन्दर यज्ञशाला बहुत बड़ी पांच वर्ग फुट का यज्ञ कुण्ड भगवत प्यारे लाला कश्मीरी लाल जी सहगल ने तत्काल तैयार करा दी । अब तो महात्मा जी के हृदय में भगवत प्रेरणा हुई इसआश्रम केप्रवेश समय चारोंवेदों तथा दस लाख सावित्री गायत्री माता द्वारा वृहद् यज्ञ किया जावे । महाशय मथुरा दास जी व भक्त सोनूराम जी B. A. B. T. यह दोनों प्रेमी महात्मा जी के अनन्य भक्त थे । वह लोगों से इस यज्ञ की घोषणा करने और यज्ञ अर्थ कुछ धन संग्रह करने को तैयार हुए, तो महात्मा जी ने व्रत में

मुझे पत्र लिखा कि यह जो वृहद् यज्ञ आरम्भ करने का संकल्प हुआ है। इसके लिए किसी भी व्यक्ति से कुछ न मांगा जावे, यह जिसकी प्रेरणा से हो रहा है, वह अपने आप पूरा करेगा, नहीं तो समिधा पड़ी हुई हैं उसी से ही यज्ञ आरम्भ कर देंगे। अब मैंने यह पत्र महाशय मथुरादास और भक्त सोनूराम जी को दिखला दिया, वह पढ़ कर चकित हो गए और कहा कि इस कदर बड़ा भारी यज्ञ हो, पल्ले पैसा न हो, और फिर मांगा भी किसी से न जावे। क्या भगवान आकाश से वर्षा करेगा ? पता नहीं महात्मा जी के मन में क्या २ विचार आ जाते है ? यह दोनों उठकर महात्मा जी की सेवा में पहुंचे और पूछा—महाराज ! यह आपने क्या लिखा है। विना लोगों से मांगने से यज्ञ होगा, कहां से घी सामग्री, समिधा इत्यादि आवेगी। और यह यज्ञ कैसे होगा ? अब महात्मा जी ने हंसकर कहा—भाई ! बस यही संकल्प हुआ है ? मत मांगो इस बात को वह जानें कि कैसे यज्ञ होगा और घी, सामग्री इत्यादि कौन लावेगा। आप किसी से भी कौड़ी तक मत मांगिये। अब महाशय मथुरादास, भक्त जी दोनों चुप हो गए। वहां से छुट्टी ले कर चले गए।

अभी तीन दिन बाकी यज्ञ आरम्भ होने को ही थे कि एक पत्र महात्मा जी के पास झंग मंघियाना से डा० मोहन लाल जी का आया उसमें लिखा था कि मुझे ज्ञात हुआ है कि आप आश्रम में एक वृहद् यज्ञ करने लगे हैं। मैं ने लाला ठाकुरदास जी को मण्डी में लिख दिया है कि वह यज्ञार्थ एक बड़ा टीन घी का लाकर आपकी भेंट करें, कृप्या आप उसे स्वीकार करें।

दूसरे दिन एक और सज्जन महात्मा जी की सेवा में पहुंचें, उन्हों ने महात्मा जी को एकान्त में लेजाकर प्रार्थना की कि महाराज !

आप एक वृहद् यज्ञ करने लगे हैं आपका जिस कदर इस यज्ञ पर खर्च हो वह मुझे बता देवें, मैं आपको बैंक का चैक देता हूं या रुपया चाहें तो निकलवा कर दे सकता हूं आप और किसी से भी न लेवें। महात्मा जी ने कहा—मैं आपकी श्रद्धा उदारता का धन्यवाद करता हूं। पर मुझे आपका धन नहीं चाहिये, यह यज्ञ विश्व कल्याण अर्थ हो रहा हैं। इसमें एक मज़दूर अपनी पवित्र मज़दूरी के दो पैसे भी यज्ञ अर्थ डाल जावेगा तो यज्ञ सफल हो जावेगा। कहावत है—

विन मांगे मोती मिले, मांगे मिले न भीख॥

यह कहावत तो ठीक है, पर क्या आपके तथा मेरे लिए हैं। नहीं, नहीं! हम लोग तो तोते बन कर ऐसी कहावतें सुनाने वाले हैं। न मांगने वाला होना कठिन है, यह तो नन्हें बालक की न्याई बन जावे तो पा ले, पर छोटा बनना, अहंकार का त्याग करना कोई खाला जी का घर नहीं है। कवि ने कहा है—

अवल तो इस कूचे में कोई आ नहीं सकता।
और यदि आ भी जाये तो फिर कभी जा नहीं सकता॥

सज्जनों! दूध में मक्खन तो है, प्राप्त करना तो प्रत्येक चाहता है। पर कैसे प्राप्त करें सुनो साधन बतलाऊं।

मन	=	बतन	लगन(इश्तियाक)	=	जाग लगाना
प्रेम	=	दूध	श्रद्धा	=	मटकी
ज्ञान	=	आग	विश्वास	=	ढकना
तप	=	ठण्डा करो	अभ्यास	=	रस्सी

आश्रम, मथानी से विलो, मक्खन प्राप्त होगा, अब फिर मक्खन

को लस्सी में मिलाने का यत्न करो, कदाचित् नहीं मिलेगा। कवि ने कहा है–

मिटादो खुदको उतना कि रहे न कुछ निशा बाकी।
अगर पाना सनमको है, खुदी से हाथ धो बैठे॥

गुम करदो अपने आपको, अपना पता मिले।
ज़ुलमात की जो सैर हो, आबे बक़ा मिले।

मरने से पहले यार तक, पहुंचोगे जभी तुम।
जो जीते जी ही तनको, कब्र अपने बना दो॥

गर शहन्शाह बनना है,तो ताज दुनिया तर्क कर।
सर कटा दे अपना, तो मिलने बक़ा आये तुझे॥

ज़हर गर मीरां ने पी, हो गई मीरां अमर।
खाल गर खिंचवाये, तो शमसी मज़ा आए तुझे॥

गर तुझे मंज़ूर है, मंसूर सा लेना मज़ा।
दार पर चढ़ जा, नज़र शकले खुदा आये तुझे॥

ईसा भी पहुंचा वहां तक, जान देने से जो तू।
सूली पर सोवे, सदायें मरहबा आए तुझे॥

परन्तु शोक है, कवि ने लिखा है

दौलत जो सब लुट जाए तो कुछ ग़म की जा नहीं।
क्या याद है महमूद का तुझको समा नहीं॥

मर जायें खयशो अकरबा मत उसकी फ़िकर कर ।
दायम तो कोई आके, जहां में रहा नहीं ॥
क्या ग़म है यारो ग़ार का, जो तेरा नहीं कोई ।
दुःख के समय में कोई भी, करता वफ़ा नहीं ॥
मत डर के इल्मोहुनर से, तू बहरा वर नहीं ।
आलम को दर्जा भेलनी सा, अब तक मिला नहीं ॥
दो बातें हैं अफ़सोस के, काबिल शहन्शाह ।
कहते हैं हम प्रेम से, कि इन्हें भूलना नहीं ॥
जिन कर्मों के करने से, तू है दुःख उठा रहा ।
करता है वही रोज़, वेले रोकता नहीं ॥
अच्छे समय की ताक में, तू रहता हैं मदाम ।
कारे कज़ा आ भी मिले, चिन्ता नहीं ॥

प्यारे ! इतना बड़ा महा यज्ञ प्रभु के अटल विश्वासी ने उसी के आश्रय आरम्भ कर दिया । 'सावितवदेव' किस प्रकार से अपने प्यारों के दृढ़ संकल्पों को किस रूप से पूर्ण करता है ।

सज्जनों ! भगवान् ही जाने कि कैसे वह गुप्त प्रेरणा से यज्ञ का सर्व सामान भिजवाता रहा । अढ़ाई मास लगातार यज्ञ होता रहा । यही दृश्य व्रतीगण और दर्शक प्रेमी देखकर चकित से रह गए । यदि मैं इस यज्ञ के सम्बन्ध में विस्तार पूर्वक वर्णन करूं तो बहुत लम्बा विषय हो जावेगा ।

मैं दो तीन वार्षिक यज्ञों में आरम्भ से अन्त तक भाग लेता रहा

एक यज्ञ के मध्यकाल में महात्मा जी ने मुझे कहा कि अब तुम संन्यास ले लो। मैंने कहा—पहले आप सन्यास लेवें। तो मुझे कहा—मैं अभी अधिकारी नहीं ? मैंने कहा—आप कैसे अधिकारी नहीं ? धर्मपत्नी आप की स्वर्गवास हो गई है। संतान गृहस्थ में प्रवेश करके अपने अपने कार्य में निपुण हैं। फिर कैसे अधिकारी नहीं ? तो मुझे उत्तर दिया कि अभी मेरी माता जी जीवित हैं। उनकी सेवा करनी है। मैंने कहा कि सन्तान के सुपुर्द कर दें। तो उन्हों ने कहा—वह जिम्मेदारी लेते नहीं। तो मैंने कहा—वेदों शास्त्रों का आदेश है कि जब वैराग्य आ जाये, तो स्त्री सन्तान के होते हुए भी उनका त्याग करके संन्यास ले लेवे तो कोई दोष नही। तो उत्तर मिला—अभी मुझे वैराग्य नहीं हुआ। अब मुझ से कहा कि आपकी स्त्री स्वर्गवास हो गई है। कन्याएं और लड़के का विवाह कर चुके हैं। अब आपको कौनसी अड़चन है। अब मैं कुछ उत्तर न देकर चुप हो गया। यज्ञ की पूर्णाहुती हो गई। मैं घर चला गया। उसके पश्चात् फिर कई वार्षिक यज्ञों में सम्मिलित न हुआ। यदि आया तो पांच सात दिन ठहर कर बहाना बनाकर छुट्टी लेकर चला जाता रहा।

पाठकगण—संन्यास लेने के संस्कार तो मेरे पूर्व जन्म के भी थे, इधर चिंगारी को सुलगा दिया। समय आया, वह भड़क उठी। एकाएकी वैराग्य छा गया, तो चुपके से घर से निकल पड़ा। महात्मा जी से आकार मिला तो मैंने निवेदन किया कि आपने एक दिन कहा था तुम संन्यास ले लो। अब मुझे संन्यास दो, उत्तर मिला मैं संन्यास नहीं दे सकता। संन्यास तो संन्यासी दे सकते हैं। उन्हीं दिनों महात्मा जी के गुरु देव श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज लुधियाना में थे,

मुझे कहा गया, कि तुम यदि उनसे सन्यास लेना चाहो तो आप वहां चलो, मैं अमुक स्थान से होता हुआ लुधियाना पहुंच जाऊंगा। मैं लुधियाना चला गया, श्री स्वामी जी महाराज से सन्यास लिया, और महात्मा जी भी आगये। मुझे आशीर्वाद देकर आप कुटिया में पहुंच कर एक हज़ार दिन का अदर्शन मौन व्रत धारण कर बैठ गये और व्रत काल में ही अप्रेल १९४७ में आपने सन्यास धारण कर लिया और नाम प्रभु आश्रित रखा—

अब गेरवा भेष तो मैं ने धारण कर लिया, स्वामीं बन गया। अब इसके कर्तव्य कैसे पालन करूं, न पल्ले है इतनी विद्या, न योग्यता न स्वाध्याय जसे रोटी त ग ो ग र वाले को क ों न क से मिल हो जाती है। पर मैं लज्जा से कैसे मांगने जाऊं। आर्यसमाज तो परख कर सोदा लेती है, नहीं तो अठावन लाख की डिगरो तत्काल देकर दुर दुर कर देती हैं। अब इसी उधड़बुन में रहा कि कैसे करूं तो मैंने महात्मा जी की सेवा में एक पत्र लिखा कि मैं ने सन्यास तो ले लिया अब आगे कैसे चलूं, मुझे उत्तर आया, कि प्रभु की अमृत वाणीकल्याणीवेद, तुम्हारेहाथ में है, वह तेरा रक्षक हैं। फिर तुम्हें फिकर किस बात को, मैं ने पत्र का पढ़ा। रात्रि को सा गया। प्रात:काल जब मैं भजन में बैठा, तो मेरे सम्मुख सामवेद का प्रथम मन्त्र—

ओ३म् अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्य दातये।
निहोता सत्सि बर्हिषि ॥१॥

आ गया। मैं इसी मन्त्र को बार बार पढ़ूं और रोऊं। इतना रोया कि आज तक कभी भी भजन समय ऐसा शुभ अवसर मुझे प्राप्त नहीं हुआ। अब मुझे निर्भयता हो गई। वेद के सच्चे पुजारो

देवता ने सन्मार्ग दिखला दिया। उसी दिन से अपने हृदय में महात्मा जी को गुरु धारण करके गुरुदेव पुकारने लगा, और फिर संसार क्षेत्र में कूद पड़ा। गुरुदेव महाराज के व्रतकाल में उनके आशीर्वाद से कई यज्ञ कराये। परिवारिक सत्संग द्वारा प्रचार करता रहा। प्यारे! भेष धारण करना आसान, भेष के कर्तव्यों का पालन करना कठिन है।

इस सन्यासकाल में मेरे ऊपर नाना प्रकार के विषन विकारों ने आक्रमण किया। और अब तक भी करते हैं। पर जब कोई विषय काम, लोभ, मोह, क्रोध अहंकार, आक्रमण करता हैं तो गुरुदेव तत्काल सम्मुख आजाते हैं और मेरे रक्षक बनकर मुझे पतित होने से बचाते है। और नीति, सुनीति से मुझे कर्तव्य पालन करन के लिये जागृत करते रहते हैं। पर एक महाशत्रु जो मेरे लिये अति दुःखदाई हो रहा है, वह है अहंकार, जो पूज्य गुरुदेव जी महाराज के जीवन को सम्मुख रहता हुआ भी यह महाशत्रु समय समय पर गिरा देता है और गुरु चरणों के वास करने से भी दूर ले जाता है। प्रभु की अपार कृपा और ऐसे तपस्वी, त्यागी, अनुरागी, योगी गुरुदेव के आशीर्वाद से कभी तो इस से मुक्ति प्राप्त हो जावेगी।

सज्जनो—अब जहां जहां पूज्य गुरुदेव महाराज यज्ञ कराने तथा सत्संग इत्यादि कराने गये उनके पश्चात् उसी स्थान पर जब मैं पहुंचा और उपदेश किया तो पूज्य गुरुदेव महाराज के अनन्य भक्त तत्काल उठकर मेरे चरणों में आकर पड़ते और कहते हैं, कि हमारे गुरुदेव महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज यहां पधारे थे, यज्ञ कराया था, अनेक परिवारों ने विषय विकारों का परित्याग किया था। जप, यज्ञ करने के व्रत लिये थे। उनके बाद आज पहला अवसर हमें प्राप्त हो रहा है जो हूबहू उनकी शैली पर आप वेद के अनुकूल

प्रचार करते हैं । तो मैं उन्हें कहता हूं । भाई साहव ! महात्मा जी महाराज हैं असली, और मैं हूं नकली, वह मेरे गुरुदेव जी हैं, उनके आशीर्वाद से मैं निश्चिन्त होकर सेवा करता फिरता हूं ।

पाठकगण—एक वात आपसे प्रकट करना अवश्यक समझता हूं । वह यह है कि मैंने तो अपने हृदय में और वाणी से तूज्य महात्मा जी महाराज को गुरु धारन किया हुआ और वोला करता हुं । पर गुरुदेव के हृदय में शिष्य रूप से नहीं समाया और न ही आज तक उन्होंने मुझे शिष्य भाव से देखा और उपदेश दिया । उन्हों ने अभी तक अपना संगी साथी ही माना हुआ हैं । वास्तव में वह सच्चे हैं, जव तक मैं उनकी कसौटी पर ; जो वेद और शास्त्र और ऋषि मुनियो के बतलाये हुए आदेशानुसार जिनके वह पुजारी हैं, पर पूरा न उतरूं वह मुझे या अन्य किसी को भी अपना शिष्य वनाने वाले नहीं । और न ही आज तक किसी को शिष्य वनाया है । यह और बात है कि उन्हें अनेक लोग अपना गुरु मानते और पुकारते हैं पर मैंने आज तक नहीं देखा कि किसी को शिष्य माना हो इस बात को मैंने इसलिये भी प्रकट किया हैं कि लोग यह कहते हैं कि पूज्य महात्मा जो महाराज गुरुडम चलात हैं । वह दूर के रहने वाले सज्जन हैं । जो ऐसा कहते है । पर जव जव उन्हों ने आकर उनके दर्शन किये और उपदेश सुना, तो जार जार रोपड़े, और कहा महाराज मैं वड़ी भूल में रहा जो मैं आप से दूर रहा, दूसरों के द्वारा वहकाने पर और अव क्षमा याचक होकर सदा के लिये वेद के पुजारी वन गये ।

अव मैं यहा पर लेख को समाप्त करता हुआ प्रातः सायं स्मरणीय गुरुदेव के चरणकमलों में नतमस्तक नमस्कार करता हुआ प्रार्थना

करता हूं कि जिस प्रकार से सदैव आपके आशीर्वाद मेरे साथ रहते हैं और पग पग पर मुझे गिरने से सुरक्षित करते हैं ; वह सदैव जीवन पर्यन्त आते रहें, और साथ ही मुझे प्रभुदेव वह शुद्ध बुद्धि मति प्रदान करें कि मैं वास्तविक शिष्य बनकर गुरुदेव का विश्वासी षिष्य बन सकूं और अपने जीवन को वेद मार्ग पर पूर्ण रूप मे चला सकं ।

(स्वामी ब्रह्मानन्द)

श्रेष्ट कर्म नं० ४

(१) अपने विचारों अनुभवों लेखों और पुस्तकों द्वारा प्रचार करना श्रेष्ठ कर्म है । प्रचारक, उपदेशक, सुधारक तो जहां २ पर पहुंचेगा, वहां पर ही लोगों का सुधार करेगा परन्तु जहां पर वह नहीं पहुंच सकता वहां पर पुस्तक द्वारा प्रचार किया जा सकता है । वाणी द्वारा किया हुआ प्रचार सुनने वाले तक ही सीमित रहेगा, वह अनित्य हो जावेगा परन्तु पुस्तक के अन्दर विचार जो लिखा हुआ होगा इस पुस्तक को सैंकड़ों मनुष्य पढ़ेंगे लाभ उठा सकते हैं । परन्तु फिर भी पुस्तक जीवित रह जाती है । और जिस लायब्रेरी में वह पुस्तक जायेगी जब तक लायब्रेरी रहेगी, तब तक पुस्तक भी रहेगी । उसके अध्ययन से आने वाली सन्तति पीढ़ियां लाभ उठाती रहेंगी । यह प्रचार जीवित प्रचार है ।

(२) दूसरा वह विचार जो पुस्तक में दिये गए हैं पढ़ने वाले को तब लाभ पहुंचाएंगे जब विचार लिखने वाले की भावना, निष्काम होगी । कुछ भी स्वार्थ भावना न हो, यदि पुस्तक लिखने वाले की यह भावना हो कि पुस्तक पर मेरे आठ आने व्यय हुए हैं तो मुझे चार आना एक पुस्तक में से लाभ हो । तो वह उसकी भावना स्वार्थ भावना है । इसके इस कार्य में त्याग और दूसरे का हित नहीं है ।

किन्तु स्वार्थ हैं। इसी कारणवश अच्छे अच्छे लेखक जिनको भगवान् ने पूर्व कर्म के अनुसार अच्छी अच्छी बुद्धि शुभ विचार और अच्छी लेखनी प्रदान की है। उनकी लिखी हुई अनेक पुस्तकों को लोग नित्य प्रति पढ़ते हुये भी अपने जीवन में कुछ परिवर्तन नहीं कर पाते, इसका कारण लेखक की स्वार्थ भावना है, वह दुकानदारी करते हैं।

(३) तीसरा पुस्तक के लेखक वेद शास्त्रों द्वारा दूसरों को मार्ग दिखाते हैं, किन्तु स्वयं आचरण से कोसों दूर रहते हैं। कवि ने कहा है—

इल्म चन्दां कि बेशतर खानी।
गर अमल नेस्त तो नादानी॥

अर्थात् जो मनुष्य स्वयं वेद शास्त्र अध्ययन करता है, परन्तु आचरण नहीं करता। वह विद्वान् कहलाता हुआ अविद्वान (मूर्ख) है।

रावण कितना विद्वान् था और ब्राह्मण था, परन्तु आचरणहीन होने के कारण आज लाखों वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी संसार उन्हें किस दृष्टि से देखता है। कलंक का टीका आज तक नहीं मिटा। ऐसे ही आचरणहीन विद्वानों का परिणाम होगा। जन्म जन्मांतर के तप, त्याग और पुण्य कर्मों के फलस्वरूप यह उतम बुद्धि, उत्तम विचार और उत्तम लेखनी प्राप्ति हुई है। नादान! बेसमझी से अनमोल (अमूल्य) रत्न को जिसके द्वारा भगवान् के साक्षात दर्शन करता। यदि आचरण करता, परन्तु यूंही पसे टके जड़ वस्तुओं के बदले में खो रहा है। स्वयं धोखे में पड़कर दूसरों को धोखा दे रहा है। यह ज्ञान भगवान की निज पूंजी है। उसके साक्षात दर्शन करने

का मार्ग दिखाने वाला है। अपनी स्वार्थ भावना से व्यर्थ खो रहा है भावना का प्रभाव हृदय पर पड़ता है। जहाँ पर भगवान् रहता है। जैसी जिसकी भावना किसी के प्रति होती है, वैसे ही भगवान् दूसरे के हृदय में उत्पन्न कर देता है। इसे दृष्टान्त से प्रकट करता हूं।

दृष्टांत आत्मा का साक्षी आत्मा

एक देवी अपने नन्हें बालक को उठाकर नदी के किनारे पर पहुंची। वह नदी पार जाना चाहती थी। देवयोग से एक घुड़ सवार आ गया। वह भी नदी के पार जाना चाहता था। देवी ने घुड़सवार से प्राथना की कि आप मेरे नन्हे से बालक को अपने घोड़े पर ले चलें मैं पीछे २ आ जाऊंगी। घुड़सवार ने कहा—भाई! मुझे इतना समय नहीं है कि मैं तेरे बच्चे को लेकर नदी के पार तेरी प्रतीक्षा करता रहूं। मैंने आगे बहुत दूर जाना है। इतना कह कर घुड़सवार चला गया। जब नदी के मध्य में पहुंचा तो दिल ही दिल में विचार आया ओ मूर्ख! तूने यह क्या किया है। बना बनाया शिकार हाथ आया उसे खो दिया है। यदि तू देवी का कहना मांन लेता। बालक को ले लेता। बालक नजान था, उसके गले में भूषण थे। दूसरा वह देवी परिचित भी न थी। तू नदी के बीच पहुंच कर बालक के गले से भूषण उतार लेता और उसे नदी में फेंककर चला जाता। कौन देखने वाला था। अतः स्वार्थ लोभवश अंधा होकर पीछे को लौटा, ताकि बालक को लेकर अपनी मनमानी मुराद (इच्छा) पूर्ण करूं।

इधर घुड़सवार के चले जाने के पश्चात् देवी के दिल में विचार उत्पन्न हुआ ओ मुर्ख! समझदार होती हुई नादानी का काम कर रही थी। जो अपने आपको [illegible] [illegible] [illegible] थी, यह बालक तो लाखों

करोड़ों रुपयों के बदले में भी प्राप्त नहीं होते। तू घुड़सवार को दे रही थी, यदि वह तेरे बालक को लेकर चला जाता और नदी के मध्य में पहुंच कर लोभवश बालक के गले से भूषण उतार कर बालक को नदी में फैंक कर चला जाता, तो अपनी गोद खाली कर बैठती और नित्य रोती रहती। अब घुड़सवार वापस नदी के किनारे पर पहुंचा और देवो से नम्रता और कोमल मधुरभाषी होकर बोला कि बहन जी, तू देख रही थी कि मैं नदी के मध्य तक पहुंच गया था, फिर हृदय से फिटकार मिली—ओ कमबख्त! तूने कितना पाप किया है कि एक देवी की पुकार को न सुना, तेरा क्या लगता था? नन्हा सा बालक था, कोई बोझ नहीं था, जब तूने सवाली को खाली लौटाया, तो फिर तेरी पुकार कौन सुनेगा? बहन जी! बस मैं इस फिटकार को सुन कर लौट आया हूं। और ला अपना बालक, मुझे दे दे इसे मैं ले चलता हूं। तो फिर शीघ्र पहुंचने का यत्न करना, ताकि मैं तेरी प्रतीक्षा में खड़ा न रहूं—क्योंकि मैंने दूर जाना है।

देवी : भाई भगवान् तेरा भलाकरे, मैंने तेरी सब बातें सुनली हैं। तेरा धन्यवाद करती हूं। जिसने तेरे कान में आकर बात की है वह मुझे भी स्वयं बतला गया है। तू अब जा मैं बालक को लेकर स्वयं पहूंच जाऊंगी।

सज्जनों! आत्मा का साक्षी आत्मा ही होता है। जो किसी को धोखा देता है, उसको यूं समझो वह अपने आंप को धोखा देता है। एक कर्म वीर ने क्या सुन्दर कहा है।

पढ़ पढ़ के सब जग मुआ, पण्डित भया न कोय।
ढाई अक्षर प्रेम के, पढ़े सो पण्डित होय॥

गो धन, गज धन, बाजी धन, और रत्न और खान।
जब आवे सन्तोष धन, सब धन धूल समान॥
काम, क्रोध, लोभ आदि मद, प्रबल मोह की धार।
तिन में अति दारु दुखद, माया रूपी नार॥

क्या गुरुनानक, कबीर विद्वान थे? आज उनकी वाणी जो जीवित वाणी ही कही जाती है, जिसको जनता पढ़ पढ़ कर मस्त हो जाती है। ऐसी तपस्वी आत्माएं अग्नि का रूप होती हैं, निःस्वार्थ वह प्रकाश युक्त होती हैं। एक लेम्प से हजारों नहीं, करोड़ों लैंप जला लो, पर कमी नहीं आवेगी। सूर्य, चन्द्रमा, वायु, जल, पृथ्वी, आकाश यह जड़ देवता कहलाते हैं। क्या यह कुछ लेते हैं, किन्तु आपकी थोड़ी वस्तु भेंट की हुई प्राणीमात्र के हितार्थ फैला देते हैं: कर्तव्य परायण हो जाते हैं। यदि हम इन जड़ देवताओं के गुण कर्म स्वभाव को धारण कर लें, तो निम्नलिखित पदवी (स्थान) प्राप्त कर सकते हैं।

१. जो पृथ्वी के गुण इत्यादि को धारण कर लेता है—वह तपीश्वर हो जाता है।

२. जो जल के	"	"	"	जलेश्वर
३. जो वायु के	"	"	"	योगीश्वर
४. जो अग्नि के	"	"	"	ऋषीश्वर
५. जो आकाश के	"	"	"	मुनीश्वर

मनुष्य पर जब प्रभु की दया दृष्टि की वर्षा होती है, तो उसकी बुद्धि शुभ कार्यों में प्रवृत्त होती है। बड़ों का मान और आदर और आज्ञा का पालन, ग़रीबों पर दया का भाव उत्पन्न होता है।

१. बड़ों का आशीर्वाद-ज्ञान और मति को बढ़ाने वाला होता है।

२. गरीबों की आशिष से आयु बढ़ती है।

मनुष्य ने दो त्रुटियों को दूर करना है। एक भूख – दूसरा नंग। जो अपनी ही भूख और नंग को मिटाता है, वह पशु है। जो दूसरों की मिटाता है वह मनुष्य है। दो प्रकार की भूख, दो प्रकार का नंग होता है (१) शारीरिक (२) आत्मिक। शारीरिक भूख, नंग को मिटाने वाला मनुष्य कहलाता है और आत्मिक भूख, नंग को मिटाने वाला देवता कहलाता है। शरीर की भूख पेट में और आत्मा की भूख हृदय में। शरीर का नंग धड़ से आत्मा का नंग आंख से प्रतीत होता है। शारीरिक भूख रोटो से, और नंर कपड़े से दूर होता है। और आत्मिक भूख भक्ति से, नंग सदाचार ज्ञान से दूर होती है। जिस मनुष्य का आचार भ्रष्ट है वह निलंज्ज और आंख चिट्टी कर देता है। शुद्ध ज्ञान के न रहने से सदाचार नहीं रहता।

प्रभु के दरबार में कौन प्यारा है?

एक धनी के तीन बेटे थे। तीनों को पांच २ सौ रुपया देकर कहा यह लो जाकर अपना अपना व्सापार करो। वह रुपया लेकर चले गये।

१. पहला बेटा: पिता २ पुकारता रहा और कुछ पुरुषार्थ न करके रुपया खाता रहा। अन्त में एक सौ रुपया शेष रह गया।

२. दूसरा बेटा : पिता का स्मरण भूल गया और रुपये को जुए में लगाया। परिणाम स्वरूप सारा रुपया हार कर खाली हाथ हो गया।

३. तीसरा बेटा : पिता का स्मरण करता रहा और साथ ही पुरुषार्थ से व्यापार करता रहा और प्रभु की दुःखी प्रजा की तन, मन धन से सेवा करता रहा, १०००) एक हज़ार रुपया बचाया। जब

तीनों घर लौटकर आये तो पिता ने बुलाकर उनकी अवस्था पूछी। हर एक ने बतलाई। अब पिता ने—

पहले बेटे से सौ रुपया वापिस ले लिया और कहा, जब चार सौ रुपये की क़दर ऐसी की है, तो शेष सौ रुपये की क्या कदर करेगा ?

दूसरे बेटे को दण्ड देकर घर से निकाल दिया।

तीसरे बेटे को एक हज़ार रुपया और देकर आशीर्वाद दिया।

परिणाम : पहला बेटा पुरुषार्थ हीन और आलसी था। पिछली कमाई खाई आगे के लिए कुछ न बोया तो क्या उगेगा ?

दूसरा बेटा, जिससे रुपया लिया उसका धन्यवाद न किया, किन्तु धन को अपना समझा। कुसग दोष के कारण सारा रुपया गंवा दिया न रहा बीज, न फल पाया—

तीसरा बेटा,इसने प्रभु दात को और उसकी अमानत समझी और उसकी प्रजा के साथ प्रेम किया। धन धान्य से भरपूर और भावी जीवन को सफल किया। यह है प्रभु का प्यारा।

सज्जनों ! वर्तमान काल में भारत स्वतन्त्र है, अनेक विद्यालय, स्कूल, कालिज, गुरुकुल इत्यादि खुले हुए हैं और पुस्तको के लेखक भी अनेक ही हैं। परन्तु चरित्र निर्माण कोसों दूर है। प्राय लेखक लेख भोगवादी भोग प्राप्ति का ज्ञान देकर भोगी उत्पन्न कर रहे हैं। भोग तो पापी से पापी को भी मिल जाता है। वास्तविक ज्ञान जो आत्मिक ज्ञान था जिससे भगवत प्राप्ति होती और भारत सुख शांति का धाम बन जाता। ऐसे चरित्रवान्, त्यागी, तपस्वी लेखक दुर्लभ हैं।

अमर शहीद पं० लेखराम जी महाराज

१. प्रचारक, उपदेशक, सुधारक, लेखक, त्यागी, तपस्वी श्री पं० लेखराम जी का वेतन तीस रुपये था। महात्मा मुंशी राम (स्वामी श्रद्धानन्द) उस समय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान थे। पण्डित जी का वेतन ५ रुपये बढ़ा दिया। अब जब पण्डित जी आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय में पहुंचे तो महात्मा मुंशी राम जी से कहा कि आप ने मेरा वेतन पांच रुपये क्यों बढ़ाया है? क्या मैंने कभी यह प्रकट किया है कि मेरा तीस रुपये में निर्वाह नहीं होता। मेरा वेतन बढ़ाया जाय या याचना की है, यदि मैंने ऐसा नहीं कहा—तो फिर ऐसा क्यों किया गया है? क्या आप मुझे लोभी बनाना चाहते हैं? क्या यह सभा की पूंजी आपकी अपनी है! पो मुझे प्रसन्न करने के लिए ऐसा किया है और कहा यह वेतन पांच रुपये काट कर सभा कोष में जमा करें, मुझे आवश्यकता नहीं है। यह है त्याग और तप।

२. आप प्रचार से लौटकर सभा कार्यालय में पहुंचे, तो महात्मा मुंशी राम जी से पूछा कि मेरा प्रोग्राम कहां का है? तो महात्मा मुंशी राम जी ने कहा कि अमुक स्थान का बनाया था वह स्थगित कर दिया गया है। पण्डित जी ने पूछा—क्यों स्थगित किया गया? तो महात्मा जी ने कहा आपके वहां जाने पर आपके जीवन जान का खतरा था। अब पण्डित जी ने जोश में आकर कहा—यदि आप जैसे कायर और भीरू सभा के प्रधान हों, तो क्या वैदिक धर्म का प्रचार हो सकता है, नहीं, कदाचित् नहीं और कहा मैं अब उसी प्रोग्राम पर जाता हूं जो आपने स्थगित कर दिया है। आप मेरे यह दिन

अवकाश में लिख लो मैं इनहीं दिनों का वेतन नहीं लूंगा। यह थी निर्भयता, लग्न और तप।

३. पेशावर में तहसीलदार साहिब की धर्मशाला थी। आर्य समाज वहां लगा करती थी अब आर्य समाज का निर्वाचन होने लगा तो वहां के आर्य सज्जनों ने कहा कि आर्य समाज तहसीलदार साहिब की धर्मशाला में लगती है। इसलिए प्रधान तहसीलदार साहब को ही बनाया जावे। बीच में जो पण्डित लेखराम जी बैठे हुये थे। तत्काल खड़े होकर कहा कि तहसीलदार साहब माँस खाते हैं, शराब पीते हैं। इस कारण इन्हें प्रधान नहीं बनाया जाये। यह थे सत्य के पुजारी। वर्तमान अवस्था में आर्य समाजों की अवस्था को देखो। शराबी, मांस, आहारी, जुआरी, फ़रेबी, ब्लैक मार्किटिये, घूसखोरो इत्यादि भी इस आर्य समाज में मिलेंगे। क्यों इन लोगों से धन मिलता है। अब धर्म कर्म प्रचार इत्यादि मुख्य पैसा ही है। भगवान् ही इस आर्य ज़ाति की पतित अवस्था में रक्षा करें। फिर से ऋषि आत्मा को भेज कर फिर से उत्थान करें—यह थे निष्पक्ष।

३. मालेरकोटला मुसलमानों की रियासत थी। पण्डित जी के व्याख्यानों को सुन कर वहां के आर्य समाजी भयभीत हो गए, चाहते थे कि पण्डित लेखराम जी को महात्मा मुंशीराम जी अपने साथ वापिस लेकर चले जावें।

ताकि यहां पर फ़साद न हो। जब पण्डित जी को ज्ञात हुआ—तो उन्हों ने महात्मा मुंशीराम जी और आर्य समाजी भाइयों से गर्ज कर कहा कि मैं आर्य समाज मन्दिर छोड़ कर धर्मशाला में ठहर कर प्रचार करूंगा। आप मुझे इस समय सभा का उपदेशक या प्रचारक

न जाने। आज तो मन्त्री प्रधान उपदेशकों प्रचारकों के गुरु हैं, जैसे नाच वह नचाये नाचते हैं। अब तो दाम से काम है।

५. अजमेर जब दर्गाह चिश्ती के पास आर्य समाज नगर कीर्तन करता हुआ पहूंचा, तो पण्डित जी ने वहां खड़े होकर भाषण देना आरम्भ कर दिया, उस समय आर्यसमाजी मुसलमानों के भय से भाग गए, परन्तु पण्डित जी ने अकेले मुर्दा परस्ती, कबर परस्ती का खण्डन आरम्भ कर दिया। हज़ारों की संख्या में मुसलमान इकट्ठे होकर पण्डित जी के भाषण को सुनकर अश्चर्यजनक हो रहे थे, तो चार पांच आर्यसमाजी चुपके से देखने गये कि पण्डित मारा गया या क्या हुआ? जब आकरदेखाकि मुस्लमान पण्डित जीकेभाषणसे प्रभावित होकर सुन रहे हैं, तो हैरान हो गए। वह थे गुरु दयानन्द महाराज के अनुयाई—

प्यारे! वह खण्डन इस प्रकार से नहीं करते थे कि दूसरे के लिए दुख का कारण बने। चिड़ाने के लिए भी नहीं करते थे स्वयं सत्य के पुजारी, सत्य का सन्देश सुनाने वाले, सच्चे मित्र बन कर, मित्र भावना से उपदेश करते थे। किसी की आत्मा को ठेस पहुंचाने को नहीं, किन्तु सत्य बोलते; प्रिय बोलते—

६. प्रभु भक्त ऐसे थे कि एक दिन पण्डित जी चारपाई पर समाधि लगाए बैठे थे। तो अकस्मात् समाधि अवस्था में सिर नीचे और टांगे चारपाई पर रह जाने पर भी समाधि में मग्न रहे। ऐसे ईश्वर भक्त वह थे।

७. पण्डित जी लेखक कैसे थे? आर्य कुल्यात मुसाफिर ग्रंथ रचा आज बड़े २ विद्वान् शास्त्रार्थी उसी ग्रन्थ से शास्त्रार्थ की विवाद सामग्री प्राप्त करके शास्त्रार्थ करते हैं। आज कोई ऐसा तपस्वी,

त्यागी, निर्भय प्रभु भक्त गुरु का अनुयाई जिसके तन, मन, धन, पुत्र तक नहीं अपने प्राण तक वैदिक धर्म के प्रचारार्थ अर्पण कर दिये हूं। हां! आजकल धन के लोभ लालचवश अनेक उपदेशक, प्रचारक, शरावी, मांस आहारी, ब्लैक मार्किटिये, घूसखोरी आचारहीनों के—द्वार पर भटकते फिरते हैं। तो क्या ऐसा धन प्राप्त करने पर सत्य धर्म का प्रचार होगा, कदाचित् नहीं, प्यारे—ऋषि की आत्मा देख रही है। उसका अब आशीर्वाद के स्थान पर शाप आ रहा है। कहावत है 'जैसा अन्न वैसा मन'।

स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज जिनके दर्शन करने से भी आनन्द आता था, रात दिन एक करके वैदिक धर्म के प्रचारार्थ लगे रहते थे। कोई समय ऐसा न होता था, जब कि कहीं वह खाली वैठे हों। स्वाध्याय न कर रहे हों। लेख का कार्य छोटे २ ट्रैक्ट सरल सत्य के प्रकाशक सैंकड़ों की संख्या में लिखे और अनेक पुस्तकें लिखीं। उनसे ज्योति टपकती है छपवा कर घर घर में प्रचार किया। जिससे छोटे से लेकर वड़े २ लोग पढ़कर प्रभावित होकर आर्य समाज माता की गोद में आए। आज उनको ढूंढो तो दुर्लभ मिलेंगे, परन्तु आज उन जैसा प्रचारक कोई नहीं है, और न ही सस्ता लिटरेचर किसी ने तैयार किया है।

हां वैदिक धर्म की जय, आर्यसमाज की जय, पुकारने वाले मिलेंगे। न वेदों को देखा न पढ़ा, जय पुकार दो, बेड़ा पार हो गया। प्रायः आर्य पुरुषों ने स्वयं वेदों को नहीं देखा होगा उनकी सन्तान फिर क्या जाने, वेद क्या चीज़ है। प्रायः यह है भी सच्च।

प्रभु भक्त कभी भी कोई कामना भावना मन में रख के कोई कार्य नहीं करेगा। वह प्रभु का यन्त्र वनकर कार्य करता हुआ सफलता

असफलता उसी के अर्पण करता जाएगा । यदि वर्तमान काल में विद्वान् प्रभु भक्त होकर और उसी का यन्त्र बन कर लेखनी का कार्य करें तो उसकी विचार शक्ति तीव्र और हृदय में प्रकाश और ऐसे ऐसे अनुभव प्रकट होंगे कि उनसे स्वयं चकित हो जाएगा और जो पुस्तक निष्काम भाव से लिखकर जिसकी पूंजी उसके अंग की भांति समर्पण करेगा, तो निःसन्देह उसे किसी के आगे हाथ पसारना नहीं होगा । स्वयं प्रभुदेव शुद्ध पवित्र कमाई इस मंगल कार्यार्थ अपने प्यारों द्वारा भिजवायेगा । उसकी लिखी पुस्तक पढ़ने वाले, त्याग भावना वाले होकर संसार के अन्दर सुख शांति का प्रचार प्रसार करेंगे, जिससे घर २ में रामराज्य अनुभव करके देखें ।

श्रेष्ठतम् कर्म नं० ५

श्रेष्ठतम कर्म है देवयज्ञ—पुस्तक के अधिक बढ़ जाने के कारण यहां पर लिखना बन्द कर दिया है । अतः लेखक की लिखी 'देव यज्ञ प्रसाद' पुस्तक को पढ़ें । (लेखक)

पाठकगण ! वेद ने आदेश किया है कि कर्म करता हुआ ही जीना चाहे । यदि तू कर्म नहीं करता तो तुझे जीवित रहने का अधिकार नहीं है । यह जीवन कर्म करने के लिए दिया गया है । हे मनुष्य ! क्या तू डरता है कि कर्म करने से तू कर्म में लिप्त हो जाएगा । नहीं यदि पूर्वोक्त प्रकार से त्याग पूर्वक तू जगत को भोगेगा । ईशार्पण बुद्धि से अपने सब व्यवहार करेगा, सर्वथा 'मम', 'अहं' को छोड़कर कर्म करेगा तो ऐसे कर्म कभी तुझे बन्धनकारक नहीं होंगे । सच मुच ऐसे निष्काम कर्म करने वाले ही संसार में असली नर होते हैं । व्यवहार को चलाने वाले होते हैं, नेता होते हैं । अतः हे नर ! तू अनासक्त होकर त्याग पूर्वक कर्मों को कर । यही कर्म लेप से बचने का उपाय

है। बल्कि इस निष्काम कर्म की साधना के सिवाय संसार में और कोई उपाय कर्म लेप से बचने का नहीं है। क्या तू समझता है कि कर्म करने से तू कर्म लेप से बच जायेगा ? अरे भोले ! जब तक यह शरीर है कुछ न कुछ शारीरिक मानसिक कर्म किये बिना तू जी ही कैसे सकता है। यदि कर्म से बचने के लिए तू आत्मघात भी कर डालेगा, तो भी तुझको छुटकारा नहीं मिलेगा। तुझे दूसरा जन्म लेना पड़ेगा। और तुझे इस आत्मघात का पाप भी लगेगा। तू देख कि जिस समय कर्म करना आवश्यक हो उस समय कर्म न करने से अकर्म का पाप भी लगता है। अतः याद रख कि कर्म त्यागने से तो तुझे कभी निर्लेपता नहीं मिलेगी। इसका साधन तो एक ही है कि कर्म किया जावे किन्तु निर्लेप होकर किया जावे भगवान् कृष्ण महाराज ने गीता में कहा है—

कर्मण्येवाऽधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफल हेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ॥४१॥अ० २

भावार्थ : तुझे केवल कर्म करने का अधिकार है। फल की इच्छा कदापि न कर। इच्छा फल का रखने वाला आवागमन से नहीं छूट सकता। अतः निष्काम कर्म करते हुए फल की इच्छा न रखने वाला आवागमन के चक्कर से छूटकर दुःख, सुख से मुक्त हो जाता है कवि ने लिखा है—

फर्ज़ पूरा कर, कि बेकारी से अफ़ज़ल कार है।
आदमी की ज़िन्दगी, बेअमल दुश्वार है ॥
काम दे अंजाम, लेकिन उसमें आशता न हो।
दिल से तू मेरे हवाले कर तमाम इफ़आल को।

बे ख़तर और बे तमन्ना. जंग में मशग़ूल हो ॥

गुरु अर्जुनदेव सुखमनो साहब में लिखते हैं

सेवा कृत होवे नेहकामा, तिस को होत प्राप्त स्वामी ॥

अर्थात् ऐ मनुष्य यदि परमात्मा को पाना चाहता है तो निष्काम सेवा कर।

अतः हे मनुष्य ! तू उठ और इस अकर्म की तामसिक अवस्था को त्याग कर उत्साह पूर्वक निर्लेप कर्मों को किया कर, सर्वथा निरअहंकार हो। सदा प्रभु अर्पित अवस्था में रहते हुए सहज प्राप्त कर्मों को निःशंक होकर सदा किया कर। ऐसे कर्मों को तू अपने संपूर्ण सौ वर्षों तक करता जा, अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक करता जा। कवि ने क्या सुन्दर लिखा है—

भजन

दुनियां यह कर्म क्षेत्र है, कोई सैरगाह नहीं।
जब तक है स्वास तन में, प्रभु को भुला नहीं ॥

खुश क़िस्मती से है मिला, चोला मनुष्य का यह।
जीती हुई बाज़ी है यह, इसको हरा नहीं ॥

चौसर बिछी है. काम, क्रोध, लोभ, मोह की।
खेली अगर यह खेल फिर तो, बस फंसा नहीं ॥

मत मस्त हो विषयों का मद पी करके रात दिन।
ए बेखबर दम का तेरे कुछ भी पता नहीं ॥

धन माल जिसपै इस कदर भूला हुआ है तू।
यह तो किसी के आज तक, हमराह गया नहीं॥

तृष्णा न यह मिटेगी और न भोग होंगे कम।
लेकिन तू ही मर जाएगा, क्यों समझता नहीं॥

करना हो धर्म जो 'त्रिगन' वह करले आज हो।
कल का तो कुछ पता नहीं, होगा किया नहीं॥

प्रचारकों, उपदेशकों; सुधारकों की सेवा में निवेदन

मैंने इस पुस्तक 'अमृत प्रसाद' में जो कुछ लिखा है प्रभु प्रेरणा सत्य भावना से लिखा है। वर्तमान संसार की गति को स्वयं देख और अनुभव कर रहे होंगे कि किस ओर जा रही है। चारों ओर त्राहिमाम त्राहिमान हो रहा है। अब इस विगाड़ का सवार कैसे हो सकता है? उसका सुधार केवल आप महानुभावों के पवित्र जीवन से हो सकता है। निम्नलिखित विचार श्री सेवा में रखता हूं, यदि इन पर आचरण हो जाय, तो मुझे पूर्ण विश्वास है, कि संसार में राम राज्य उत्पन्न हो सकता है।

(१) ब्रह्ममुहूर्त में जागना, जाप, संध्या, वेद, स्वाध्याय पांच यज्ञों का स्वयं करना।

(२) मांस, मदिरा, ब्लैक की कमाई वाले, घूंस लेने वाले, दुरव्यवहारी के यहां भोजन न करना। यदि वह दूषण का परित्याग कर दें तो भोजन कर लें।

(३) जिस गृह में अग्निहोत्र, सन्ध्योपासना न होती हो वहां भी भोजन न करना ।

(४) गृहस्थी के घर परिवार में जाकर पहले सद् उपदेश करना, सुधार करना और फिर भोजन करना ।

(५) गृहस्थी अपनी सामर्थ्यानुसार जो श्रद्धा से भौजन भेंट करें उसी को स्वीकार करना ।

(६) भोजन समय मौन, शांतचित रहना ।

(७) भोजन को भजन के लिए खाना चाहिये, स्वादिष्ट भोजन के आ जाने पर लालच न करना । इससे गृहस्थी के हृदय में अश्रद्धा उत्पन्न हो जाएगी ।

(८) अपना व्यवहार आहार, विचार, आचार शुद्ध, पवित्र रखना, क्योंकि आप गृहस्थियों के लिए आदर्श गुरु हैं ।

(९) भोजन भोजनशाला में किया जाये, ताकि गृहस्थी के घर की पवित्रता, शुद्धताई का आपको ज्ञान हो सके और त्रुटियों को आप दूर करा सकें ।

(१०) मन्दिर में सर्वप्रथम पवित्रता का निरीक्षण करें । वेदो वनी हुई हो । जिस सद् पुस्तक की प्रतिदिन कथा हो वह वेदो पर धरी रहे ।

(११) समाज मन्दिर में सिवाय भगवतपूजा, सन्ध्या हवन, स्वाध्याय तथा सत्संग के और कोई कार्य नहीं किया जाय, न पाठशाला व स्कूल लगाया जाय । पूजा के स्थान को पूजा अर्थ लगाया जाये और अतिथि शाला रूप प्रयोग न किया जावे ।

(१२) आचारहीन, वैदिक धर्म में आस्था न रखने वाले, अधर्म से अर्थ कमाने वाले को समाज का सभासद न बनाया जाय । न मांस

शराब इत्यादि सेवन-करने वाले को।

(१३) आर्यसमाज का सभासद् बनाने से पूर्व न्यून से न्यून एक वर्ष पूर्व सहायक रूप में रखा जाय और यह नियम प्रत्येक के लिए अनिवार्य हो।

(१४) उत्सवों का कार्य केवल प्रातः और सायं हुआ करे। प्रातः ५ से ८ तक, सायं ५ के १० तक। इस अवान्तर में प्रत्येक को सन्ध्या हवन में शामिल होकर भाग लेना चाहिये, रात्रि के १० बजे से बाद कोई भी कार्यवाही न की जाय।

(१५) पारिवारिक सत्संगों की प्रथा को जारी किया जाय प्रत्येक सभासद् के घर वेद हो और स्वाध्याय किया जाए।

(१६) प्रत्येक वक्ता को क्रियात्मिक जीवन बनाकर ही भाषण देने का अधिकार होगा।

अधर्म से अर्थ कमाने वाले का दान स्वीकार न किया और न इससे मांगा जाय।

(१८) प्रत्येक घर में उपासना के स्थान विशेष नियुक्त किए जायें।

(१९) जो अग्निहोत्र, सन्ध्या दैनिक परिवार सहित घर में न करें उन्हें आर्यसमाज का सदस्य न बनाया जाये।

(२०) सभा के अधिकारी भी इन बातों का विशेष ध्यान रखते हुये आचरण करें।

उपदेश नं० ५

ओ३म् आपो ज्योती रसोऽमृतंब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा।

जिज्ञासु प्रभु से कहता है। हे प्रभु आप सर्वअन्तर्यामी, सर्वज्ञ हो यदि मेरे रोम रोम में रम रहे हो, तो आप मेरी वाणी में भी हो। पर

उसमें मैं रस नहीं पाता, मेरी आंख में तो आप विद्यमान हैं, परन्तु ज्योति प्रकाश नहीं पाता, मेरे कान में भी हो परन्तु मैं सुन नहीं पाता आप मेरे हृदय में निवास करते हो, पर आनन्द नहीं पाता, आप मेरे मस्तिष्क में हो परन्तु मैं समझ नहीं पाता, मेरी त्वचा में व्यापक ही हो, पर मैं स्पर्श नहीं कर पाता जब तू अपार सर्वव्यापक हैं, ज्योति औ रस है, तो फिर तू मुझ में क्यों नहीं आता।

उत्तर—तेरी जीभ कठोर है, इसलिये तुझको रस नहीं आता।

कुटिल वचन सब से बुरा जार करै तन डार
साधु वचन जल रूप है बरसै अमृतधार ॥

शीतल शब्द उचारिये अहं आनिये नाहीं।
तेरा प्रीतम तुझमें दुश्मन भी तुझ नाहीं ॥

शब्द बराबर धन नहीं जो कोई जाने बोल।
हीरा ती दामों तुले, शब्द का मोल न तोल ॥

मीठी वाणी बोलिये मनका आपा खोय।
औरन को शीतल करे आप भी शीतल होय ॥

नारायण इस जगत में यह दो आवत काम।
सब से मीठा बोलिये कर लो पर उपकार ॥

और कहा इसे नर्म बना, कोई फल जो नर्म नही तुझे रस नदेगा नल्के की हत्थी नीचे कर तुझे जल मिलेगा। तेरी आं तंग है। संकोचित है। इसलिये तू ज्योति नहीं पाता, आंख खोल, उदार बन, नम्र हो। ऊपर अकड़ कर न देख। नीचे झुक, तुझे ज्योति मिलेगी, दिया की बत्ती की भान्ति अकड़ करन रह तुझे प्रकाश नहीं मिलेगा, बल्ब की बत्ती की भान्ति नीचे होकर रह स्वयं प्रकाश युक्त होहोगा और दूसरो को भी प्रकाश मिलेगा। देख सब ज्योतिमय देव आकाश

में रहते हुये अपनी किरण झुका कर भेज रहे हैं तब ज्योति प्रकाश मिलता है। ज़रा विजली के स्विच को नीचे कर बल्ब में प्रकाश हो जायेगा। तेरे कानों में सरलता नहीं, निन्दा से पेचीदा हो गये हैं इस लिए सुनते नहीं रिकार्ड की थाली की भांति अन्दर से खाली और साफ सरलवना दे। परमेश्वर नाम की सुई लगने पर रोम रोम को ध्वनि देगी

तेरा हृदय उतावला, जल्दबाज़, चंचल है। इस में सहन शक्ति नहीं। तू दूसरे को उन्नति, मान, बढ़ाई को सहन नहीं कर सकता, इस लिए तुझे आनन्द नहीं आता। हानि मद्‌ा मयिधे हि सहनशक्ति उत्पन्न कर। पृथ्वी कितनी बड़ी है। सूर्य की गर्मी को कैसे सहन करती है। पहाड़ों के बोझ तुम्हारी लताड़ कैसे सहन करती है। और पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती रहती है। इससे ईर्ष्या नहीं करती इसलिये वह भरपूर होकर कितना आनन्द देती है। पृथ्वी भुवः है। सूर्य स्वः है। तेरी बुद्धि में प्रभु कैसे आवे जब तेरी बुद्धि में सत्य और न्याय नहीं, तुझे दूसरे को लूटते अपमान करते, हानि पहूंचाते अपनापन भूल जाता है जो तू अपने साथ कैसा व्यवहार चाहता है। इसलिये प्रभु तेरी समझ में कैसे आवें। तेरी त्वचा को कैसे स्पर्श हो, जब तूने काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार को अपने जीवन का लक्ष्य बनाये हुए हैं, फिर वह प्राण अपान स्वरूप प्रभु तुझे स्पर्श कैसे करें।

नारायण सत्संग कर-सीख भजन की रीत।
काम क्रोध मद लोभ में गई अखिल आयु बीत॥
कोटि कर्म लगे रहें, एक क्रोध की लार।
किया कराया गया जब आया अहंकार॥

काम बिगाड़े भक्ति को, ज्ञान बिगाड़े क्रोध।
लोभ वैराग्य बिगाड़ दे, मोह बिगाड़े बोध॥

काम, क्रोध, लोभ आदि मद, प्रबल मोह की धार।
तिन में अति दारून दुखद, माया रूपी नार॥

छोटी मोटी कामनी, सब ही विष की बेल।
बैरी मारे दाव से, वह मारे हंस खेल॥

कामी क्रोधी लालची, इनसे भक्ति न होय।
भक्ति करे कोई सूरमा, जात वरण कुल खोय॥

जो प्राणी ममता तजे, लोभ मोह, अहंकार।
कहत नानक आपुन, तरै औरन लेत उबार॥

नहीं ठहरे मन कभी जब तक जग में राग।
जग में होवे वैराग्य तो ईश्वर में अनुराग॥

ईश्वर में अनुराग होवे, मन निश्चल ऐसा
ज्यूं सागर गम्भीर अचल है पर्वत जैसा॥
भोला तज दे भोग, योग कर ईश्वर माहीं।
यह ही पथ कल्याण मार्ग दूजा है नाहीं॥

मनुष्य जन्म दुर्लभ है, दुर्लभ मनुष्य शरीर।
भक्ति भाव हृदय में भरे, सो नरधीर गम्भीर॥

कबीर कबीर तुम क्या करो शोध मनुष्य शरीर।
पांचों को जो वश करे वही दास कबीर॥

—:o:—

—विनीत ब्रह्मानन्द

मुद्रक—
देव राज खुल्लर
दौलत प्रिंटिंग प्रैस, (फोन ६८४) गोकल रोड, लुधियाना ।